तंत्र



ज्ञानों का ज्ञान

प्रेमयोगी वज्र

तंत्र

ज्ञानों का ज्ञान

प्रेमयोगी वज्र

परिचय

आध्यात्मिक परंपराओं के विशाल ताने-बाने में, तंत्र एक गहन और परिवर्तनकारी मार्ग के रूप में सामने आता है जो शरीर, मन और आत्मा के धागों को एक साथ बुनता है। अक्सर गलत समझा जाने वाला और गलत तरीके से प्रस्तुत किया जाने वाला तंत्र केवल शारीरिक अंतरंगता का अभ्यास नहीं है, बल्कि आध्यात्मिक विकास की एक व्यापक प्रणाली है जो जीवन के सभी पहलुओं को शामिल करती है। 'तंत्र: ज्ञानों का ज्ञान' इस प्राचीन ज्ञान की गहराई में जाता है, इसकी उत्पत्ति, दर्शन और प्रथाओं की खोज करता है। इस पुस्तक का उद्देश्य तंत्र को रहस्य से मुक्त करना है, इसे आत्म-साक्षात्कार और मुक्ति प्राप्त करने के लिए एक समग्र दृष्टिकोण के रूप में प्रस्तुत करना है। मंत्र, मुद्रा, विज़ुअलाइज़ेशन और श्वास क्रिया जैसी विभिन्न तकनीकों के एकीकरण के माध्यम से, तंत्र चेतना का विस्तार करने और दिव्य से जुड़ने का एक अनूठा मार्ग प्रदान करता है। तंत्र के अभ्यास का केंद्र शरीर के भीतर ऊर्जा को समझना और उसका हेरफेर करना है। यह ऊर्जा, जिसे अक्सर प्राण या जीवन शक्ति कहा जाता है, नाड़ियों के रूप में जानी जाने वाली चैनलों के एक नेटवर्क के माध्यम से बहती है। इन नाड़ियों के अभिसरण बिंदु चक्र या ऊर्जा केंद्र हैं, जो शारीरिक, भावनात्मक और आध्यात्मिक कल्याण को बनाए रखने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

इस यात्रा में, आप जानेंगे कि तंत्र किस तरह भौतिक और आध्यात्मिक क्षेत्रों की एकता का जश्न मनाता है, यह सिखाता है कि हर अनुभव, हर संवेदना, दिव्यता का प्रवेश द्वार है। चक्रों के साथ काम करके, अभ्यासी अपनी आंतरिक ऊर्जा को जागृत और सामंजस्य कर सकते हैं, जिससे जागरूकता और आनंद की गहन अवस्थाएँ प्राप्त होती हैं। कुंडलिनी जागरण जैसी तकनीकें रीढ़ के आधार पर निष्क्रिय ऊर्जा को सक्रिय करने पर ध्यान केंद्रित करती हैं, जिससे यह चक्रों के माध्यम से ऊपर उठती है और परिवर्तनकारी अनुभव लाती है।

हमारे साथ जुड़ें क्योंकि हम तंत्र के रहस्यों को उजागर करते हैं, इसके समृद्ध इतिहास, इसकी गहन शिक्षाओं और दैनिक जीवन में इसके व्यावहारिक अनुप्रयोगों की खोज करते हैं। चाहे आप एक अनुभवी अभ्यासी हों या जिज्ञासु साधक, यह पुस्तक आपको आत्मज्ञान की ओर अपनी तांत्रिक यात्रा शुरू करने के लिए आवश्यक अंतर्दृष्टि और उपकरण प्रदान करेगी।

इस पुस्तक के सभी अध्याय मूल रूप से हमारे पिछले काम का हिस्सा थे; जो है, 'कुंडलिनी विज्ञान' श्रृंखला की 'आध्यात्मिक मनोविज्ञान' पुस्तकें। यदि आपको ये पसंद आए तो आपको पूर्ण संकलन में और भी बहुत कुछ मिलेगा।

वैधानिक टिप्पणी (लीगल डिस्क्लेमर)

इस तंत्र-सम्मत पुस्तक को किसी पूर्वनिर्मित साहित्यिक रचना की नक़ल करके नहीं बनाया गया है। फिर भी यदि यह किसी पूर्वनिर्मित रचना से समानता रखती है, तो यह केवल मात्र एक संयोग ही है। इसे किसी भी दूसरी धारणाओं को ठेस पहुंचाने के लिए नहीं बनाया गया है। पाठक इसको पढ़ने से उत्पन्न ऐसी-वैसी परिस्थिति के लिए स्वयं जिम्मेदार होंगे। हम वकील नहीं हैं। यह पुस्तक व इसमें लिखी गई जानकारियाँ केवल शिक्षा के प्रचार के नाते प्रदान की गई हैं, और आपके न्यायिक सलाहकार द्वारा प्रदत्त किसी भी वैधानिक सलाह का स्थान नहीं ले सकतीं। छपाई के समय इस बात का पूरा ध्यान रखा गया है कि इस पुस्तक में दी गई सभी जानकारियाँ सही हों व पाठकों के लिए उपयोगी हों, फिर भी यह बहुत गहरा प्रयास नहीं है। इसलिए इससे किसी प्रकार की हानि होने पर पुस्तक-प्रस्तुतिकर्ता अपनी जिम्मेदारी व जवाबदेही को पूर्णतया अस्वीकार करते हैं। पाठकगण अपनी पसंद, काम व उनके परिणामों के लिए स्वयं जिम्मेदार हैं। उन्हें इससे सम्बंधित किसी प्रकार का संदेह होने पर अपने न्यायिक-सलाहकार से संपर्क करना चाहिए।

महिलाओं को तन्त्र में पूजित किया जाता है

एक मिथ्या विश्वास है कि तंत्र में महिला का शोषण किया जाता है, और एक पुरुष के आध्यात्मिक उत्थान (तंत्र में महिला) के लिए उसका एक खिलौने के रूप में उपयोग किया जाता है। असल में तंत्र में एक आदमी पूरी तरह से ऋषि के समान बन जाता है। क्या ऋषि किसी का भी शोषण करने के बारे में कभी सोच भी सकता है? ताओवाद भी ऋषि के लिए एक यौन-क्रियाशील ऋषि बनने की सिफारिश करता है, एक साधारण ऋषि बनने की नहीं। असल में, धार्मिक रूप से चरमपंथी लोग, जिन्होंने अमानवीय प्रथाओं के लिए तांत्रिक शक्तियों का दुरुपयोग किया, उन्होंने ही महिला का हिंसक तरीके से शोषण किया, लेकिन दोष वास्तविक तंत्र के ऊपर आ गया।

क्या आत्मजागरण के लिए शाकाहारी होना जरूरी है

बहुत से लोग मुझसे ऐसे प्रश्न पूछते हैं कि क्या उन्हें जागृत होने के लिए नॉनवेज / मांसाहार को जारी रखना चाहिए या छोड़ देना चाहिए। दरअसल यह मांसाहार नहीं है, जो अधिक हानिकारक है, अपितु यह मानसिक द्वैत-दृष्टिकोण है, जो खराब है। यदि इसके साथ रवैया अद्वैतात्मक है, तब यह तंत्र है। पंचमाकर यानी मांसाहार समेत तंत्र के पांच एम मानसिक ऊर्जा के सबसे शक्तिशाली स्रोत हैं। उनसे उद्भूत वह प्रचंड मानसिक ऊर्जा अगर अद्वैतपूर्ण दृष्टिकोण के साथ कुंडलिनी के ऊपर निर्देशित होती है, तो उसे जागृत कर देती है, अन्यथा उसे और अधिक गहराई में दफन कर देती है। अद्वैतपूर्ण रवैया जीवन में संतुलन की मांग करता है, और इसी तरह वह जीवन को भी संतुलित बना देता है, यदि उसे अपनाया जाए। इसलिए उस अद्वैतपूर्ण-दृष्टिकोण के साथ एक आदमी अपने शरीर की न्यूनतम जरूरतों के अनुसार ही आमिषाहार का उपयोग करता है, न कि केवल दो इंच की लंबी अपनी जीभ के अनुसार।

शविद और ताओवाद

शविद (शरीरविज्ञान दर्शन) को ईश्वरवादी ताओवाद भी कहा जा सकता है, क्योंकि इसमें भगवान को भी शामिल किया जाता है, हालांकि धार्मिक तरीके से नहीं। यह त्वरित आध्यात्मिक विकास में सहायता करता है, जैसे कि पतंजलि ने भी बताया है कि भगवान में उचित विश्वास योगाभ्यास-क्रियाओं को मजबूत करता है।

तांत्रिक गुरु और तांत्रिक प्रेमिका

मन के अन्दर गुरु के स्थायी रख-रखाव को यौन तंत्र के माध्यम से सबसे अच्छी तरह से हासिल किया जा सकता है, जैसा कि होम -2 वेबपृष्ठ पर वर्णित प्रेमयोगी वज्र के साथ हुआ था। अपनी प्रथम यौनप्रेमिका / प्रथम देवीरानी (अविवाहित) से संपर्क में रहने के दौरान वह अपने गुरु (वही आध्यात्मिक बूढ़े आदमी) की निरंतर प्रेमपूर्ण संगति में भी बना हुआ था। प्रथम देवीरानी के साथ वह संपर्क शुद्ध मानसिक / एकबार के अप्रत्यक्ष तांत्रिक प्रारम्भ (इनिशिएशन) / अप्रत्यक्षतंत्र से प्रेरित था। यह सारा वर्णन वेबपेजिस “love story of a yogi” पर किया गया है। वही देवीरानी उसकी सक्रिय कुंडलिनी के रूप में थी, और उसके दिमाग में उसके उपरोक्त पौराणिक गुरु द्वारा पढ़ी गई कथाओं की सहज कृपा से अत्यद्भुत / बहुत ही समृद्ध रोमांटिक लालचों के माध्यम से, 2 वर्षों के बहुत कम समय में उसके आत्मज्ञान के लिए चरम मानसिक अभिव्यक्ति तक ले जाई गई, उन्हीं गुरु की संगति से, जो प्रतिदिन प्राचीन भारतीय आध्यात्मिक कहानियों के संग्रह / पुराण पढ़ा करते थे, उस कुण्डलिनी की सैद्धांतिक जागृति के बिना ही। दूसरे मौके पर, उन्होंने अपनी दूसरी कुंडलिनी के रूप में अपने उन्हीं भौतिक गुरु की मानसिक छवि को अपनी अद्वैतपूर्ण जीवन शैली के साथ समृद्ध किया, और पहली देवीरानी (परोक्ष रूप से यौनसम्बन्धी) की बार-बार याद की गई छवि के साथ अपने गुरु की छवि का संबंध जुड़ा होने के कारण, गुरु की छवि भी काफी समृद्ध हो गई, लगभग 15 वर्षों में। फिर आखिर में, प्रेमयोगी वज्र ने अपनी दूसरी कंसोर्ट / प्रेमिका (वैवाहिक) के साथ सीधे / प्रत्यक्ष यौनतंत्र की मदद से अंतिम जागृति के लिए उस कुंडलिनी को उठाया, जैसा कि उपरोक्त होमपेज पर ही संक्षेप में और “love story of a yogi-7” में विस्तार से वर्णित है।

अद्वैत तंत्र से मानसिक कुंडलिनी छवि को पहचानने और फिर उसे समृद्ध करने में मदद मिलती है।

अधिकांश लोग और यहाँ तक कि कई योगी भी नहीं जानते हैं कि एक उपयुक्त मानसिक छवि को कुंडलिनी / जीवनरक्षक नाव के रूप में कैसे परिवर्धित किया जाए, जिससे चित्र-विचित्र मानसिक संरचनाओं के विशाल महासागर को पार किया जाए, और फिर बैठकपूर्ण योगसाधना से पहले उसे किस तरह से प्रारंभिक बढ़ावा दिया जाए।

दरअसल, हर किसी के मन में सबसे पसंदीदा छवि अवश्य होती है लेकिन वह उनकी द्वैतपूर्ण / अनासक्तिपूर्ण जीवनशैली के कारण अस्पष्ट रहती है। उस छवि को प्रमुख रूप से स्पष्ट बनाने के लिए व्यक्ति को कुछ समय के लिए अद्वैत का समर्थन करना पड़ता है। अद्वैत को पूर्णरूप के कार्यात्मक सांसारिक जीवन के साथ अपनाया जाना चाहिए, न कि एक निष्कर्मक / निठल्ले जीवन के साथ, तभी अद्वैत का पूर्ण लाभ मिलता है। ऐसा करने पर हम देखेंगे कि हमारी सबसे पसंदीदा मानसिक छवि सतह पर आ जाएगी और नियमित रूप से हमारे दिमाग में घूमने लगेगी। उस छवि की स्पष्टता / अभिव्यक्ति / तीव्रता हमारे द्वारा अपनाए गए अद्वैत की तीव्रता के समानान्तर / अनुरूप होगी। इस तरह, एक व्यक्ति अपनी कुंडलिनी छवि को पहचान कर उसे चिन्हित कर पाएगा। फिर वह नियमित रूप से दिन में दो बार बैठकमय साधना / सिटिंग मेडिटेशन का अभ्यास शुरू करेगा, जिसमें वह अपने विभिन्न शरीर-चक्रों पर विराजमान उस चयनित कुंडलिनीछवि पर ध्यान केंद्रित करेगा। वह जल्द ही सफल हो जाएगा। कुंडलिनी छवि अधिमानतः एक प्रिय व्यक्तित्व की छवि होनी चाहिए। वह एक गुरु / शिक्षक / दोस्त / दादा / प्रेमी / देवता आदि, किसी की भी मानसिक छवि हो सकती है। सबसे पसंदीदा मानसिक छवि उस व्यक्ति की बनी होती है, जो एक प्रेमपूर्ण तरीके से मित्रवत व्यवहार करता है। ध्यान केंद्रित करने के लिए ईश्वर की छवि या स्वर्गारोहित व्यक्ति / अधिमानतः पूर्वज की छवि को प्राथमिकता दी जाती है, क्योंकि सैद्धांतिक रूप से जीवित व्यक्ति की छवि पर ध्यान लगाने से उसके जीवन में ध्यानानुसार परिवर्तन उत्पन्न हो सकता है, हालांकि यह शायद ही कभी होता हो, क्योंकि किसी का बाहरी स्वरूप हमेशा ही उसके भीतर के या वास्तविक स्वरूप से अलग होता है। वास्तव में, किसी भी व्यक्ति को अपने दिमाग का सुनना चाहिए, और उसके अनुसार ही शुभ फैसला लेना चाहिए। बोद्धों में से कई लोग महान ध्यानयोगी होते हैं। वे अपने बचपन में ही अपनी कुंडलिनी छवि का चयन कर लेते हैं, और अपने पूरे जीवनभर उसके ऊपर ध्यान केंद्रित करते रहते हैं। इससे सम्बंधित व्यावहारिक और वास्तविक समय के पूर्ण ज्ञान के लिए, इस वेबसाईट पर प्रस्तुत सत्यकथा " एक योगी की प्रेमकथा" / Love story of a yogi का अनुपालन किया जा सकता है।

एक सही कुंडलिनी छवि का चयन नहीं करना या बिल्कुल चयन नहीं करना एक मुख्य कारण है, जिससे कुंडलिनी योगी सफल नहीं हो पाते हैं।

गांधी जयंती के पावन अवसर पर

श्री मोहनदास कर्मचंद गांधी, एक शांतिपूर्ण भारतीय स्वतंत्रता सेनानी और व्यावहारिकता से भरे हुए आदमी थे, न कि केवल एक सिद्धांतवादी। जो कुछ भी उन्होंने अपने जीवन में कहा, उसे व्यावहारिक रूप से साबित करके भी दिखाया। उन्होंने गीता का सरलीकृत अनुवाद तब किया, जब वे जेल में थे। वह संकलन हिंदी में "अनासक्ति योग" नामक पुस्तक के रूप में उभरा। उन्होंने गीता की शिक्षाओं को वैज्ञानिक और व्यावहारिक अर्थ में वर्णित किया है। उन्होंने इसमें पूरी तरह कार्यात्मक व व्यावहारिक मानव जीवन जीने के साथ अनासक्तिपूर्ण दृष्टिकोण अपनाने पर पूरा जोर दिया है। उन्होंने गीता के अंदर बसने वाले इस गहरे रहस्य को उजागर किया है। यद्यपि मैंने इसे स्वयं विस्तार से नहीं पढ़ा है, केवल इसकी प्रस्तावना ही पढ़ी है, लेकिन मैंने प्रेमयोगी वज्र द्वारा "शरीरविज्ञान दर्शन-एक आधुनिक कुंडलिनी तंत्र (एक योगी की प्रेमकथा)" नामक किताब को अच्छी तरह से पढ़ा है, जो उपरोक्त पुस्तक का आधुनिक व तांत्रिक रूपान्तर ही प्रतीत होती है। प्रेमयोगी वज्र ने वैज्ञानिक रूप से साबित कर दिया है कि हर धर्म और दर्शन सहित सब कुछ हमारे अपने मानव शरीर के अंदर बसा हुआ है। यद्यपि इस सूक्ष्म शरीर-समाज के भीतर हमारी रोजमर्रा की मैक्रो सोसाइटी/स्थूल समाज के विपरीत पूर्ण अनासक्ति व अद्वैत का वातावरण विद्यमान है। इस रहस्य का अनावरण करने के लिए उन्होंने स्वास्थ्य विज्ञान से संबंधित ज्ञान का भी पूरी तरह से उपयोग किया है। नतीजतन, पुस्तक एक हिंदु-पुराण जैसी दिखती है, हालांकि तुलनात्मक रूप से एक अधिक समझपूर्ण, वैज्ञानिक, व्यापक व सर्वस्वीकार्य तरीके से। इस पुस्तक की सम्पूर्ण जानकारी यहां निम्नोक्त वेबपृष्ठ पर उपलब्ध है-

https://demystifyingkundalini.com/home-3/

आज स्वतंत्र भारत के द्वितीय प्रधानमंत्री श्री लाल बहादुर शास्त्री जी का जन्मदिवस भी है, इसलिए इन दोनों महापुरुषों को कोटि-2 नमन।

रावण दहन- एक रहस्यात्मक प्रथा

आज आर्यों के वंशजों / हिन्दुओं का त्यौहार दशहरा है। रावण, रामायण काल का मानव-राक्षस इस दिन जला दिया जाता है। बहुत से लोग इसे सतही रूप से देखते हैं, और सोचते हैं कि यह केवल एक प्राचीन घटना है। हालांकि सच यह है कि इसमें गहरा अर्थ छुपा हुआ है। मैं प्राचीन कहानी की सच्चाई से इंकार नहीं करता हूं, लेकिन मैं इसे संपार्श्विक अद्वैत-तंत्र के उस संदेश के रूप में अधिक सत्य देखता हूं, जो यह देता है। असल में, पूरी प्रकृति एक सुंदर महिला के रूप में मौजूद है। किसी भी महिला के शरीर में जो भी हो रहा है, वह सब प्रकृति के अंदर भी इसी तरह से हो रहा है, और कुछ नहीं। यह एक तांत्रिक और वैदिक सत्य है, जिसे प्रेमयोगी वज्र ने अपनी तांत्रिक पुस्तक, शरीरविज्ञान दर्शन में वैज्ञानिक रूप से बखूबी साबित कर दिया है। अज्ञानी लोग इस प्रकृति का खराब तरीके से और बुरे व्यवहार के साथ शोषण करते हैं। भगवान राम जो हमेशा अपनी प्रकृति के साथ मिलकर रहते हैं, वे इसे बर्दाश्त नहीं कर सकते हैं, और इस तरह ऐसे लोगों को कभी भी अपने निवास में प्रवेश करने के लिए आत्मज्ञान प्राप्त करने की इजाजत नहीं देते हैं। इसलिए ऐसे लोगों को अंत में भौतिक आग से जला दिया जाता है, क्योंकि वे अपने भौतिक निकायों / शरीरों के साथ गहराई से / आसक्ति से चिपके होते हैं। तो संदेश स्पष्ट है कि प्रकृति और उसके प्राणियों से प्यार करना चाहिए। संपूर्ण आर्य सभ्यता इस मौलिक दिशानिर्देश पर ही आधारित है। भगवान को उनकी प्रकृति को संतुष्ट किए बिना, सीधे प्राप्त नहीं किया जा सकता है। यह एक गहरा तांत्रिक रहस्य है, जो कुण्डलिनी को भी रहस्योद्घाटित करता है। यही कारण है कि आर्य जीवनशैली में प्रकृति-पूजा इतनी प्रचुर मात्रा में है। आज दुनिया बहुत खतरे में है। प्रकृति का मानव द्वारा शोषण किया गया है। इसका परिणाम ग्लोबल वार्मिंग है। यदि यह जारी रहता है, तो जीवन के हर क्षेत्र में आपदाएं होंगी। सुंदर वेनिस शहर समुद्र के अंदर पूरी तरह से डूब जाएगा। सभी तटीय क्षेत्रों के साथ ऐसा ही होगा। इसलिए आर्यन प्रथाओं को अपनाने और उनकी तरह प्रकृति की पूजा करने के लिए यह सही समय है। हो सकता है कि प्रकृति व उसके सदैव साथ रहने वाले उसके प्रेमी, भगवान प्रसन्न हो जाएं, और हमें प्रकृति को बचाने में सही दिशा-निर्देशन प्रदान करें, और आपदाओं से भी थोड़ी राहत दे दें।

प्राचीन कहानी कि रावण ने भगवान राम की पत्नी सीता को चुरा लिया था, एक रूपक प्रकार की है। जो महिला या प्रकृति का अपमान करता है, वह भगवान को प्रसन्न नहीं कर सकता है। हनुमान, बंदर-देवता और सीता का नौकर, प्रकृति के भीतर प्राणियों का रूपक है। उसने भगवान राम की मदद की, इसका अर्थ है कि जानबूझकर अनजान बने मनुष्यों को छोड़कर सभी प्राणी निर्दोष हैं। राम ने सीता को बचाने के लिए हनुमान की मदद ली, इसका मतलब है कि जब मनुष्य द्वारा प्रकृति का शोषण किया जाता है, तो अदृश्य भगवान अन्य प्राणियों को अधिक से अधिक बनाता है, जिससे स्वाभाविक ही मनुष्यों के लिए अधिक से अधिक समस्याएं पैदा हो जाती हैं। उसे उससे अच्छा सबक मिलता है, और वह प्रकृति को बचाने लग जाता है। यह पूरी तरह से आज भी वैसा ही देखा जा रहा है, जैसा कि हजारों साल पूर्व के रामायण-काल में घटित हो रहा था।

योग से शारीरिक वजन को कैसे नियंत्रण में रखें

योग के साथ शारीरिक वजन घटता है। यहां तक कि मैंने देखा है कि एक दिन के भारी काम के साथ भी मुझे अपनी पेंट के साथ बेल्ट लगाने की जरूरत महसूस होने लगती है। ऐसा इसलिए होता है क्योंकि मैं दैनिक योग अभ्यास की आदत रखता हूं। जब मैंने कड़ी मेहनत की, तब उसके साथ किए गए नियमित योग-अभ्यास से मेरी भड़की हुई भूख बहुत कम हो गई। इसलिए उस कड़ी मेहनत के साथ हुई वसा-हानि / fat loss को पुनर्निर्मित / recover नहीं किया गया, जिसके परिणामस्वरूप मेरा वजन घट गया। नियमित योग-अभ्यास के बिना सामान्य लोग भारी काम के बाद बहुत अधिक खाते हैं, इस प्रकार वे अपनी खोई हुई वसा का तुरंत पुनर्निर्माण कर लेते हैं। योग-अभ्यास दैनिक और हमेशा के लिए जारी रखा जाना चाहिए। यदि कोई अपना अभ्यास थोड़े समय के लिए जारी रखता है, जैसे कि यदि 2 महीने के लिए कहें, तो उसे अपने शरीर के वजन में कमी का अनुभव होगा। लेकिन अगर वह उसके बाद व्यायाम करना बंद कर देता है, तो उसकी योग से निर्मित शारीरिक व मानसिक शक्ति के पास भूख को उत्तेजित करने के अलावा अन्य कोई काम नहीं रहता है। इसके कारण उसे बहुत भूख लगती है, और वह बहुत भोजन, खासतौर से उच्च ऊर्जा वाले खाद्य पदार्थों को खाता है। इसके परिणामस्वरूप उसके शरीर की वसा का पर्याप्त निर्माण हो जाता है, जिसके परिणामस्वरूप उसके शरीर के वजन में एकाएक वृद्धि होती है, जो उसके पहले के मूल वजन को भी पार कर सकती है। तो निरंतर अभ्यास हमेशा जारी रखा जाना चाहिए। यह एक वैज्ञानिक और अनुभव से साबित तथ्य है कि खिंचाव वाली कसरतों / stretching exercises के अभ्यास से थोड़ी-बहुत कैलोरी जल जाती है। यद्यपि योग के अभ्यास से बड़ी मात्रा में कैलोरी जलाई नहीं जाती है, फिर भी ये अभ्यास शरीर को फिट, स्वस्थ और लचीला रखते हैं। यह किसी भी समय किसी भी प्रकार के साधारण या कठिन शारीरिक कार्य को कामयाबी व आसानी के साथ शुरू करने में मदद करता है, और व्यायामशाला के अभ्यास को भी अधिक कारगर बनाता है। इसके अलावा, यह पूरे शरीर में उचित अनुपात में रक्त के समान परिसंचरण में भी मदद करता है। इससे यह शरीर के रिमोट भंडारगृहों में जमा वसा की आसान निकासी में मदद करता है। उससे सभी कोशिकाओं को ऊर्जा के मुख्य स्रोत के रूप में वसा उपलब्ध हो जाती है। इसलिए शरीर भूख की कमी के लिए ऊर्जा की कमी का संदेश नहीं भेजता है, जिसके परिणामस्वरूप भारी भूख के बावजूद भारी भूख की रोकथाम होती है। परंतु आम लोगों में भारी काम के एकदम बाद भारी भूख भड़क जाती है, जिससे वे अपने खोए हुए वजन की भरपाई एकदम से कर लेते हैं। योग कुछ खास नहीं है, बल्कि भौतिक व्यायाम, सांस लेने और केंद्रित एकाग्रता को बढ़ाने का एक सहक्रियात्मक संयोजन है। फोकसड एकाग्रता / focused concentration इसके लिए विचारों के लिए नियंत्रक वाल्व / controlling valve के रूप में काम करती है, अराजक विचारों की अचानक भीड़ को रोकती है, जिससे इस प्रकार पेरानोइया/ paranoia और दिमाग को झूलने / mind swinging से रोकती है। जब अवचेतन मन में संचित विचार बहुत उत्तेजित हो जाते हैं, तो उन्हें दिमाग के अंदर ध्यान की केंद्रित छवि द्वारा धीरे-धीरे और सुरक्षित रूप से मुक्त करके छोड़ा जाता रहता है। साथ में, उन विचारों को बाँझ और गैर-हानिकारक बना दिया जाता है, या दूसरे शब्दों में कहें तो दृढ़ता से उत्तेजित विचार ध्यान की कुण्डलिनी छवि की कंपनी के कारण स्वयं ही शुद्ध हो जाते हैं। यह छवि दिन-प्रतिदिन की सांसारिक गतिविधियों से उत्पन्न होने वाली अराजक मानसिक गतिविधियों पर भी जांच रखती है। इसके कारण योग-अभ्यास के लिए एक जुनूनी शौक सा उत्पन्न हो जाता है, और इसे दैनिक कार्यक्रम से कभी भी गायब नहीं होने देता है। कुंडलिनी छवि पर केन्द्रित एकाग्रता के बिना योग-अभ्यास के साथ, योग अभ्यास के लिए शौक जल्द ही खो जाता है, और विभिन्न छिपे हुए विचारों की अराजकता की वजह से दैनिक क्रियाकलाप भी गंभीर रूप से पीड़ित हो जाते हैं।

तांत्रिक तकनीक मानसिक कुंडलिनी छवि को मजबूत करने और इस तरह से योग के प्रति लगन को बढ़ाने के लिए एक और गूढ़ चाल है। इसके परिणामस्वरूप पूरे श्वास में वृद्धि होती है, जिससे पूरे शरीर में पोषक तत्वों से समृद्ध और अच्छी तरह से ऑक्सीजनयुक्त रक्त की आपूर्ति में वृद्धि हो जाती है। इससे यह शरीर के वजन पर भी जांच रखता है। दरअसल तंत्र प्राचीन भारतीय आध्यात्मिकता से अलग कोई स्वतंत्र रूप का अनुशासन नहीं है। तभी तो वेद-शास्त्रों में इसका कम ही वर्णन आता है, जिससे इस रहस्य से अनभिज्ञ लोग महान तंत्र की सत्ता को ही नकारने लगते हैं। यह आत्मजागृति की ओर एक प्राकृतिक और सहज दौड़ / प्रक्रिया ही है। यह तो केवल विभिन्न आध्यात्मिक प्रयासों से पुष्ट की गई कुण्डलिनी को जागरण के लिए अंतिम छलांग / escape velocity ही देता है। यदि किसी की बुद्धि के भीतर कोई आध्यात्मिक उद्देश्य और आध्यात्मिक उपलब्धि नहीं है, तो अराजक बाहरी दुनिया के अंदर उपयोग में आ जाने के अलावा तांत्रिक शक्ति के लिए अन्य कोई रास्ता नहीं है। इसका मतलब है कि तांत्रिक तकनीक के लिए आवेदन से पहले कुंडलिनी छवि किसी के दिमाग में पर्याप्त रूप से मजबूत होनी चाहिए। तंत्र तो जागने के लिए कुंडलिनी को आवश्यक और अंतिम भागने की गति ही प्रदान करता है। यह आम बात भी सच है कि गुरु तांत्रिक साधना के साथ अवश्य होना चाहिए। वह गुरु दृढ़ता से चिपकने वाली मानसिक कुंडलिनी छवि के अलावा कुछ विशेष नहीं है। यही

कारण है कि बौद्ध-ध्यान में, कई वर्षों के सरल सांद्रता-ध्यान के बाद ही एक योगी को तांत्रिक साधना लेने की अनुमति दी जाती है। लेकिन आज बौद्ध लोग, विषेशतः तिब्बती बुद्ध तंत्र सहित सभी रहस्यों को प्रकट करने की कोशिश कर रहे हैं, क्योंकि अब वे लंबे समय से चल रहे बाहरी आक्रमण के कारण अपनी समृद्ध आध्यात्मिक विरासत को खोने से डर रहे हैं।

योग व तंत्र-एक तुलनात्मक अध्ययन (तंत्र के बारे में कुछ रोचक तथ्य, तंत्र व इस्लाम के बीच में समानता)

यह प्रमाणित किया जाता है कि हम किसी भी धर्म का समर्थन या विरोध नहीं करते हैं। हम केवल धर्म के वैज्ञानिक और मानवीय अध्ययन को बढ़ावा देते हैं।

तंत्र क्या है

तंत्र में प्रारंभ से ही एक व्यक्ति अपने आपको देहपुरुष की तरह अद्वैतपूर्ण, मुक्त व अनासक्त समझते हुए ही समस्त व्यवहार करता है। परन्तु योग में एक व्यक्ति पहले अपनी कुण्डलिनी को जगाता है। उससे उसे अद्वैत से जुड़े हुए महान आनंद का अनुभव होता है। उस कुन्डलिनीजागरण के आनंद के वशीभूत होकर ही वह अनायास ही अद्वैतमयी आचरण प्रारम्भ करता है, और धीरे-२ तांत्रिक की तरह अद्वैतपूर्ण बन जाता है। एक योगी कुण्डलिनीजागरण से आगे बढ़ते हुए आत्मज्ञान को भी अनुभव कर सकता है। उससे उसके अद्वैतज्ञान को और अधिक दृढ़ता मिलती है। इसका अर्थ है कि तंत्र योग की अपेक्षा अधिक आसान, सर्वसुलभ, स्वाभाविक व मानवतापूर्ण है। जब योगोपलब्धि के बाद भी तंत्र को स्वीकारना ही पड़ता है, तब क्यों न उसे प्रारम्भ से ही स्वीकार किया जाए। बहुत से तंत्र का अभ्यास करने वाले लोग समय के साथ स्वयं ही कुण्डलिनीजागरण व आत्मज्ञान प्राप्त कर लेते हैं, बिना किसी भिन्न या विशेष प्रयास के। कई लोगों को तो तंत्र को सिद्ध करने का भी स्वाभाविक रूप से अवसर मिलता है, और योग को भी; जैसा कि इस वेबसाईट के नायक प्रेमयोगी वज्र के साथ हुआ। बहुत से लोग तंत्र को पंचमकारों तक ही सीमित कर देते हैं। परन्तु सच्चाई यह है कि तंत्र एक सम्पूर्ण जीवन पद्धति है। यह एक अद्वैतपूर्ण जीवनपद्धति है। हिन्दू संस्कृति के अधिकाँश अचार-विचार एक तांत्रिक पद्धति के ही विभिन्न अंग हैं, चाहे वह वेद-पुराणों का अध्ययन हो, या उनसे जुड़े हुए विभिन्न क्रियाकलाप। प्राचीनकाल में जिन लोगों को आत्मज्ञान हुआ, उन्हें आम साधारण जनजीवन में जीवन व्यतीत करना बहुत कठिन लगा। इसका कारण यह था कि आम लोग तो भौतिक दृष्टिकोण से जीवन जीने के आदी थे, जिसे आत्मज्ञानी लोगों का ज्ञानपूर्ण मन स्वीकार न कर सका। अतः उन्होंने आम अज्ञानी लोगों के व्यवहार की नक़ल को छोड़कर प्रकृति की नक़ल करते हुए अपना जीवन जीने का प्रयास किया। वैसा इसलिए, क्योंकि उन्हें प्रकृति के सभी व्यवहार ज्ञानपूर्ण लगे। वैसा करने से उनके आध्यात्मिक स्तर में और अधिक इजाफा हुआ, और वे जीवन्मुक्त बन गए। प्राकृतिक जीवनशैली से अपने को लाभ होते देखते हुए उनके मन में औरों को भी वैसा लाभ दिलाने की जिज्ञासा उत्पन्न हुई। अतः उन्होंने प्राकृतिक घटनाओं को जीवंत रूप में लिपिबद्ध करना शुरू कर दिया। वे ही लिपिबद्ध संग्रह कालान्तर में वेद-पुराणों के नाम से विख्यात हुए, जिन्होंने बहुत से लोगों के लिए जीवन्मुक्ति को सुलभ करवाया। उन पुराणों को लिखने वाले आत्मज्ञानी लोग ऋषि-मुनि कहलाए।

तंत्र के बारे में कुछ रहस्यात्मक तथ्य

उपरोक्त प्रकार की ही घटना तांत्रिक प्रेमयोगी वज्र के साथ भी घटित हुई। उसे भी बचपन में ही क्षणिक आत्मज्ञान हो गया था। उसके बाद वह भी आम लोगों की तरह जीवनयापन करने में अपने आप को अक्षम पा रहा था। इसीलिए उसने अपने लाभ के लिए शरीरविज्ञान दर्शन नामक, पौराणिक दर्शन से मिलता-जुलता एक जीवन दर्शन बनाया। उसके सान्निध्य से उसे जो अद्वैत व अनासक्ति की उपलब्धि हुई, उससे उसकी चहुंमुखी प्रगति सुनिश्चित हुई, और यहाँ तक कि अनायास ही कुण्डलिनीजागरण की एक झलक भी मिली। उसी लाभ से प्रेरित होकर उसने उसी दर्शन पर आधारित एक पुस्तक की रचना की, जिसे हम आधुनिक पुराण भी कह सकते हैं। पुराणों में तो बाहर मौजूद स्थूल सृष्टि का वर्णन है, परन्तु शरीरविज्ञान दर्शन में हमारे अपने भीतर मौजूद सूक्ष्म सृष्टि का वर्णन है। 'यत्पिंडे तत्ब्रम्हांडे' नामक वेदोक्ति के अनुसार दोनों सृष्टियों के बीच में लेशमात्र भी अंतर नहीं है। इसलिए हम प्रेमयोगी वज्र को आधुनिक ऋषि भी कह सकते हैं। उसकी पुस्तक भी पुराणों की तरह ही तांत्रिक ही है, यद्यपि साथ में कुछ अंश पंचमकारी विद्या का भी है, श्रीमद देवीभागवत पुराण से मिलता जुलता। अब रही बात पंचमकारी तंत्र की, तो वह विशाल तांत्रिक पद्धति का केवलमात्र एक छोटा सा हिस्सा ही है। तांत्रिक पद्धति का बहुत लम्बे समय तक आचरण करने के बाद जब आम साधक का तांत्रिक दृष्टिकोण बहुत परिपक्व हो जाता है, तभी एक योग्य गुरु के मार्गदर्शन में तंत्र के पंचमकारी अंग का आश्रय लेना चाहिए, ताकि कुण्डलिनीजागरण के लिए पर्याप्त शक्ति मिल सके। समय से पहले अपनाने पर या अयोग्य गुरु के मार्गदर्शन में यह लाभ के स्थान पर हानि भी पहुंचा सकता है। साथ में, पंचमकारी तांत्रिकों का ध्येय हिंसा नहीं, अपितु कुण्डलिनीजागरण ही है। शक्ति के सर्वश्रेष्ठ स्रोत तो माँस, मैथुन व मद्य ही हैं, जो हिंसा के बिना प्राप्त नहीं किए जा सकते हैं। इसलिए उनके कम से कम प्रयोग से अधिक से अधिक आध्यात्मिक लाभ को प्राप्त करने को ही प्राथमिकता दी गई है। इसका उदाहरण है, मत्स्य-सेवन। क्योंकि मछली को आवश्यकतानुसार न्यूनतम मात्रा में भी पकड़ा जा सकता है, इसलिए उससे निरर्थक हिंसा नहीं होती, जिससे हिंसा-दोष न्यूनतम स्तर पर बना रहता है। साथ

में, मछली ठंडी प्रकृति की होती है। इसलिए यह पंचमकारी के अन्दर उस क्रोध को नहीं पनपने देती, जो आध्यात्मिक राह में सबसे बड़ा विघ्न होता है। साथ में, यह आमिषाहारों में सबसे कम तमोगुण उत्पन्न करता है, और इसके शरीर के ऊपर दुष्प्रभाव भी अन्य की तुलना में न्यूनतम होते हैं। इसी तरह इसमें एकपत्नीव्रत को प्राथमिकता दी गई है, ताकि यौनता की अति से बचा जा सके, क्योंकि वह भी एक विशेष प्रकार की हिंसा ही है, विशेषकर यदि सही तांत्रिक नियम न अपनाए जाएं। फिर भी थोड़ी-बहुत भूल-चूक तो सीखते समय स्वाभाविक ही है। यदि तांत्रिक-साथी को बदलना ही पड़े, तो बहुत लम्बे समय के बाद व विशेष आध्यात्मिक प्रगति को प्राप्त करने के बाद ही। स्त्री पर बुरी नजर सर्वथा वर्जित है। यौनता / पञ्चमकारों के बारे में भद्दे शब्द व भद्दे मजाक भी वर्जित हैं। स्त्री को देवी व गुरु की तरह सम्मान देना पड़ता है। किसी की बेटी या किसी की पत्नी को तांत्रिक-साथी नहीं बनाया जाता, क्योंकि उन्हें दूसरों की भावनात्मक संपति के अंश के रूप में देखा जाता है। प्राचीनकाल के अधिकाँश प्रख्यात तांत्रिक वही हैं, जो पहले आम जनमानस में प्रचलित साधारण तांत्रिक पद्धतियों से जीवन व्यतीत करते थे, परन्तु बाद में विभिन्न कारणों से उसके पंचमकारी अंग का भी सेवन करने लगे। उन कारणों में एक मुख्य कारण था, समाज से बहिष्कृति या समाज में पर्याप्त सम्मान न मिलना। तभी तो कुछ प्रख्यात तांत्रिक आज के पंजाब की भारत-पाकिस्तान सीमा के आसपास हुए हैं, कुछ तो आज के पाकिस्तान में भी हुए हैं। दूसरा कारण है कि पंजाब शुरु से ही समृद्ध रहा है, इसलिए वहां खाने-पीने व मौज-मस्ती करने वालों की परंपरा रही है। उसी तरफ को तांत्रिक मंदिर भी बहुतायत से पाए जाते हैं। पंजाब में गुरु-परम्परा का बोलबाला भी तंत्र के अनुरूप ही विकसित हुआ है। मैंने स्वयं पंजाब के सुदूर व पाकिस्तान की दिशा के सीमावर्ती क्षेत्रों में रहकर सभी कुछ प्रत्यक्ष रूप में अनुभव किया है। उन सुदूर क्षेत्रों तक हिन्दुओं की आम तांत्रिक पद्धति की पहुँच ढीली थी, अतः वहां पर रहने वाले लोगों को सामूहिक आध्यात्मिकता से मिलने वाले बल की प्राप्ति नहीं हो रही थी। उसके प्रतिकारस्वरूप उन्होंने पंचमकारी तंत्र को सही ढंग से अपनाया, व त्वरित सफलता को प्राप्त किया, क्योंकि पंचमकारी शक्ति से उत्पन्न आध्यात्मिक बल सामूहिक आध्यात्मिकता के बल से भी कहीं अधिक था। निस्संदेह वे तांत्रिक आम सर्वसाधारण या आध्यात्मिक समाज से कटे-२ से रहे, फिर भी वे सिद्धियों के चरम पर पहुंचे, और दूसरों को भी प्रेरित करते रहे। स्वाभाविक है कि वैसे तांत्रिकों में बहुत से दलित व पिछड़े वर्गों के लोग भी इन्हीं उपरोक्त कारणों से शामिल हुए। वैसा ही उदाहरण दुर्गम पर्वतीय क्षेत्रों में कष्टमय व एकाकी जीवन बिताने वाले तिब्बती बौद्धों का भी है। उन्हें सुविधामय मैदानी क्षेत्रों में प्रचलित साधारण तंत्र की अपेक्षा पंचमकारी तंत्र ही अधिक उपयुक्त लगा, इसीलिए यह वहां आज भी अच्छी तरह से जिन्दा है। चाईनी ताओ धर्म में तो एक यौनसनकी साधु को ही आदर्श साधु बताया गया है। वास्तव में जब से पंचमकारों का तंत्र से अलगाव हुआ, तब से ही आध्यात्मिकता का पतन प्रारंभ हो गया। पंचमकारों को उत्पथगामियों का आचार बताया गया। इससे हुआ यह कि पंचमकारों की शक्ति उत्पथगामियों को ही मिलती रही, और वे उससे पुष्ट होते रहे। धीरे-२ करके सारी धरती उत्पथगामियों से परिपूर्ण हो गई। दूसरी ओर आध्यात्मिकता आवश्यक शक्ति के बिना क्षीण होती गई, क्योंकि पंचमकारों को उससे दूर रखा गया। आजकल पंचमकारी तंत्र को तो गलत बोला जाता है, वैसे पंचमकारों का उपयोग धड़ल्ले से व बिना किसी रोक-टोक के खुल्लम-खुल्ला हो रहा है, आध्यात्मिकता के लिए नहीं, अपितु अंधी भौतिकता के लिए। इससे सिद्ध होता है कि आज असली तांत्रिकों की समाज को सख्त आवश्यकता है।

तंत्र एक विद्रोही सम्प्रदाय की तरह

प्रेमयोगी वज्र के साथ भी कुछ-२ ऐसा ही हुआ। वह भी आम जनमानस की तंत्रपद्धतियों को अपनाता था। परन्तु उससे उसका आध्यात्मिक विकास बहुत धीरे-२ हो रहा था। जब बहुत लम्बे समय तक भी उसे कुण्डलिनीजागरण की झलक की आशा तक भी नहीं मिली, तब वह आम अध्यात्मिक जनमानस के विरुद्ध बागी जैसा हो गया। उससे उसका बहुत अपमान होने लगा। उसका विरोध भी तांत्रिक पंचमकारों के सेवन के रूप में बढ़ता ही जा रहा था। ये दोनों कार्य-कारण एक दूसरे को बढ़ाते जा रहे थे। अपमान से विरोध व विरोध से अपमान। यह चक्र तब तक चलता रहा, जब तक उसे कुण्डलिनीजागरण की झलक नहीं मिल गई। उससे वह संतुष्ट होकर शांत हो गया, और पंचमकारी तंत्र के ऊपर उसका विश्वास बढ़ गया।

योग और तंत्र वस्तुतः एक ही चीज है

वास्तव में योग (आम आध्यात्मिक तांत्रिक पद्धतियों सहित) व तंत्र (पंचमकारी योग) एक ही हैं, केवल प्रचंडता के स्तर में ही अंतर है। पंचमकारी योग से साधारण योग की अपेक्षा कुण्डलिनी अधिक प्रचंड रहती है। अतः एक बुद्धिमान तांत्रिक व्यक्ति दोनों का समयानुसार आश्रय लेता रहता है। दोनों में कुछ भी विरोध नहीं है। तांत्रिक तो सभी आध्यात्मिक लोग हैं, पर पंचमकारी तांत्रिक को ही तांत्रिक कहने का प्रचलन है। उसे हम पंचमकारी साधु भी

कह सकते हैं, क्योंकि साधारण साधु व पंचमकारी साधु के बीच में तत्त्वतः कोई अंतर नहीं है, कुण्डलिनी की अभिव्यक्ति के स्तर को छोड़कर।

तंत्र सात्विक धर्मों (हिंदु, जैन, बौद्ध आदि) का सहयोगी ही है, विरोधी नहीं

ऐसा प्रतीत होता है कि तंत्र मैं मैथुन मकार ही सबसे प्रमुख है, क्योंकि इसीसे कुण्डलिनी को आश्चर्यजनक बल प्राप्त होता है। अन्य मकार तो केवल आवश्यकतानुसार इस मुख्य मकार के सहायक ही हैं। अन्य पंचमकारी धर्मों को तो मैं तंत्र का ही एक रूपांतरित स्वरूप मानता हूँ। उनमें जो शक्ति विद्यमान है, और जिसके प्रति अधिकाँश लोग आकर्षित होते हैं, वह पंचमकारिक तांत्रिक शक्ति ही प्रतीत होती है। परन्तु सात्विक हिन्दु धर्म / तंत्र का विरोध करके वे विरोधी धर्म आध्यात्मिक लाभ की प्राप्ति नहीं करा सकते, अपितु उल्टा हानि ही कराते हैं, यह बात तो तय है। ऐसा इसलिए है, क्योंकि यह सिद्धांत है कि पंचमकार तभी सफल होते हैं, यदि वे सात्विक तंत्र / योग / धर्म के सान्निध्य में रहें। इससे दोनों पद्धतियों को आध्यात्मिक व भौतिक, दोनों प्रकार के लाभ मिलते हैं। अन्यथा पंचमकार पापों के भण्डार ही तो हैं। अतः सभी धर्मों के सहयोगात्मक सहअस्तित्व में ही सबका भला है। स्वर्णसंज्ञक या आकर्षक व्यक्तित्व / रंग-रूप वाले हिंदु पंडितों के लिए इसीलिए अनुष्ठानपरक, निस्स्वार्थी, मानवतापूर्ण, प्रेमपूर्ण, संतोषी, सामाजिक व अहिंसावादी होकर रहने का निर्देश दिया गया है, ताकि उनमें अद्वैतभाव व अनासक्तिभाव के साथ-२ एक दिव्य तेज व आकर्षण भी विद्यमान रहे। तभी तो अन्य आम या पंचमकारी लोग उन्हें गुरु बना कर उनके रूप की कुण्डलिनी को अपने मन में पुष्ट कर सकते हैं। तभी पंचमकारों की शक्ति कुण्डलिनी को लगेगी, अन्यथा वह उनके लिए नरक का रास्ता ही साफ करेगी।

तंत्र के मूल के बारे में विविध विचार

कई स्थानों पर तो पंचमकारों का सेवन संकेतमात्र या औपचारिकता मात्र के लिए इसलिए निर्दिष्ट किया गया है, ताकि किसी को यह अहंकार न होए कि मैं बहुत शुद्ध हूँ, और साथ में उत्तम प्रकार का अद्वैतभाव भी बना रहे। तंत्र में यह सिद्धांत भलीभांति ध्यान में रखा गया है कि कर्म का फल तो मिल कर ही रहेगा, इसलिए पंचमकारों के प्रयोग में बहुत संयम व सावधानी बरती जाती है। कई स्थानों पर इसलिए उनका प्रयोग बताया गया है, ताकि हिंसक या राक्षस प्रकृति के लोगों को सही ढंग से खाना-पीना व भोग-विलास करना सिखाया जा सके, और उनके भोग-विलास के अन्दर अध्यात्म का बीज डालकर उन्हें भी अध्यात्म की ओर मोड़ा जा सके। बाद में धीरे-२ वे खुद सुधर जाते हैं। परन्तु कुछ भी हो, पंचमकारी तंत्र की आश्चर्यजनक शक्ति को नकारा नहीं जा सकता। सिद्ध तांत्रिक तो यहां तक कहते हैं कि तंत्र विशेषकर यौनतंत्र के बिना आत्मज्ञान को प्राप्त ही नहीं किया जा सकता है।

तंत्र के बारे में अन्य रोचक तथ्य

तंत्र के बारे में और भी बहुत से रोचक तथ्य विद्यमान हैं। तंत्रसमाज को गुह्य समाज भी कहते हैं। कई तो उनमें महान ब्राम्हण पंडित भी शामिल हो गए थे। कई तांत्रिकों की तो उनकी अपनी बहन ही उनकी तांत्रिक गुरु थी। इस्लाम में भी अपनी बहन से (यद्यपि सहोदर बहन से या पिता की पत्नी से पैदा हुई के साथ नहीं) विवाह की अनुमति है। इससे कुछ अंदाजा लगता है कि इस्लाम के मूल में कहीं न कहीं पंचमकारी तंत्र विद्यमान है। काबा में जिस काले पत्थर को चूमने का रिवाज है, उसे अधिकाँश लोग शिवलिंग ही मानते हैं। भगवान शिव तो तंत्रमार्ग के आदि प्रवर्तक हैं ही। विषमवाही तंत्र के मामले में तो यह भी माना गया है कि तांत्रिक प्रेमिका जितनी अधिक बदसूरत या अनाकर्षक हो, वह उतनी ही अधिक तंत्रसम्मत होती है, बशर्ते कि वह तांत्रिक गुणों से संपन्न हो। ऐसा इसलिए, क्योंकि उसमें अहंकार नहीं होता, जिससे वह दूसरों / गुरु के रूप की कुण्डलिनी को अपने ऊपर आसानी से पनपने देती है। विषमवाही तंत्र का अर्थ है कि मानसिक कुण्डलिनी छवि किसी और की (गुरु आदि की) होती है, जबकि कुण्डलिनीवाहक तो तांत्रिक प्रेमिका ही होती है। समवाही तंत्र का अर्थ है कि मानसिक कुण्डलिनी छवि भी तांत्रिक प्रेमिका के रूप की होती है, और कुण्डलिनी-वाहक भी वही होती है। समवाही तंत्र में सांकेतिक / अप्रत्यक्ष तांत्रिकमैथुन अधिक कारगर है, परन्तु विषमवाही तंत्र में पूर्ण / स्पष्ट / प्रत्यक्ष तांत्रिकमैथुन क्रिया। इसीलिए अधिक से अधिक यौनाकर्षण उत्पन्न करने के लिए समवाही तांत्रिका आकर्षक होनी चाहिए। समवाही व विषमवाही नाम के तंत्र के दो प्रकार मैंने इसी मेजबान वेबसाईट पर प्रेमयोगी वज्र के अनुभवात्मक विवरण में देखे, अन्य स्थान पर नहीं, यद्यपि तंत्र में यह प्रचलित धारणा है कि पिछड़े वर्ग की महिलाएँ प्रत्यक्ष तांत्रिकसम्बन्ध के लिए सर्वोत्तम होती हैं। इससे प्रेमयोगी वज्र का कथन स्पष्ट हो जाता है। कहा जाता है कि एक बार एक प्रख्यात तांत्रिक-गुरु की बदसूरत व काली तांत्रिक प्रेमिका का उनके शिष्य ने उपहास उड़ाया था। उससे नाराज होकर उस तांत्रिक-प्रेमिका ने उसको उसके जीवनकाल में आत्मज्ञान की प्राप्ति न होने का श्राप दिया। उससे वैसा ही हुआ।

अब हम तंत्र व इस्लाम के बीच समानता पर विस्तार से चर्चा करते हैं।

तंत्र व इस्लाम की शुरुआत लगभग एकसाथ हुई। दोनों में ही संसार-त्याग को अस्वीकार किया गया है, और सांसारिक प्रवृत्ति पर जोर दिया गया है। दोनों में ही स्त्री को महत्त्व दिया गया है। खतना के पीछे भी तान्त्रिक सिद्धांत ही प्रतीत होता है। इस्लाम में मौलवी के द्वारा हलाला करने की रिवाज भी तंत्र की उस प्रथा का विकृत रूप प्रतीत होती है, जिसमें गुरु व शिष्य की संयुक्त तांत्रिक-प्रेमिका होती है। दोनों ही साधना-पथ सभी सर्वसाधारण व शुद्धि-बुद्धि से रहित लोगों को भी मुक्ति प्रदान करने के लिए बनाए गए हैं। तांत्रिक नाथ सम्प्रदाय के बहुत से गुरुओं को बहुत से मुसलमान अपना भी गुरु मानते हैं। तांत्रिक गुरुओं को पीर बाबा भी कहा जाता है। यहां तक कि एक मुस्लिम मौलवी और जमीयत उलेमा हिंद के नेता, मुफ्ती मोहम्मद इलियास कासमी ने भी भगवान शिव को इस्लाम के पहले दूत के रूप में संदर्भित किया है। जिस तरह दक्षिणपंथी, हिन्दुओं के शुद्धिवादी हैं, उसी तरह सूफी साधना-पथ इस्लाम में शुद्धिवादी व नरमपंथी विचारधारा है। अधिकांशतः, हिन्दु धर्म के दक्षिणतंत्र व वामतंत्र को एक-दूसरे का विरोधी बताया जाता है। परन्तु प्रेमयोगी वज्र के तांत्रिक अनुभव के आधार पर मैंने इस लेख में यह सिद्ध करने का प्रयास किया है कि वामतंत्र व दक्षिणतंत्र आपस में विरोधी नहीं, अपितु सहयोगी हैं। साधारण तांत्रिक पद्धतियों को दक्षिणतंत्र कह लो, व पंचमकारी तंत्र को वामतंत्र। इसी तरह हिन्दु धर्म व इस्लाम धर्म भी एक दूसरे के सहयोगी ही सिद्ध हुए, क्योंकि वृहद् परिपेक्ष्य में हिन्दु धर्म को दक्षिणतंत्र एवं इस्लाम को वामतंत्र कह लो। इसलिए दोनों के बीच में वैमनस्य या कटुता के लिए कोई स्थान नहीं है। दोनों ही धर्म एक-दूसरे से घृणा करके अनजाने में ही एक दूसरे से प्रेम कर रहे होते हैं। परन्तु उससे पूरा काम नहीं चलता। फिर क्यों न ये दोनों सीधे तौर पर एक-दूसरे से प्रेम करें, जिससे वे एक-दूसरे की शक्ति को और अधिक मात्रा में व अधिक सकारात्मकता के साथ प्राप्त कर सकें। विचारों में भिन्नता तो मानवमात्र का स्वभाव है ही, परन्तु उससे आपसी प्रेम व सहयोग पर दुष्प्रभाव नहीं पढ़ना चाहिए। यदि उन्हें अपने प्राचीन धर्मशास्त्रों में संशोधन करने की आवश्यकता पड़े, तो मानवता के हित में धर्मसभा या सर्वधर्मसभा बैठाकर कर लेना चाहिए। मैं यहाँ स्पष्ट कर देना चाहता हूँ कि यहाँ पर सभी धर्मों की बात हो रही है, किसी विशेष धर्म की नहीं। सभी को अमानवीयता, कट्टरता व घृणा से भरे हुए शब्दों में इस तरह से संशोधन करने पर विचार करना चाहिए, जिससे सभी धर्मों का सम्मान भी बना रहे, और जमाने के अनुसार उनमें संशोधन भी हो जाएं। उदाहरण के लिए जब से हिंदु धर्म में बलि प्रथा का विरोध होने लगा, तब से ही प्रतीतात्मक रूप में नारियल की बलि दी जाती है। तंत्र में कुण्डलिनी / गुरु के नाम पर पंचमकारों का सेवन किया जाता है, तो इस्लाम में अल्लाह (ईश्वर) के नाम पर, यद्यपि दोनों कुछ समानता साझा करते हैं। वास्तव में निराकार ईश्वर के निरंतर ध्यान से भी कुण्डलिनी ही पुष्ट होती है, यह रहस्य सभी को पता नहीं है। परन्तु कट्टर इस्लाम में पंचमकारों में मानव के प्रति हिंसा व झूठ-फरेब को भी सम्मिलित किया गया है। तुलनात्मक रूप से हल्के स्तर पर ऐसा हिन्दु धर्म व इसाई धर्म में भी हुआ, यद्यपि अधिकाँश मामलों में यह कहा जाता है कि ऐसा प्रतिक्रियास्वरूप हुआ। अब पुराने जमाने में इसकी क्या जरूरत पड़ी होगी, यह स्पष्टतया कह नहीं सकते, परन्तु आज के शिक्षित व मानवतापूर्ण युग में यह जरा भी प्रासंगिक नहीं है, ओर पूरी तरह से त्याज्य है। हालांकि घोर आत्मरक्षा के लिए (जान बचाने के लिए) इनके प्रयोग पर विरले मामलों में विचार किया जा सकता है। असली त्याग तो भावना का त्याग है। सुप्त भावना भी काम करती रहती है। इसलिए तत्संबंधित संकल्पों की दृढ़ अभिव्यक्ति से अमानवता का खंडन करना चाहिए, तभी सुप्त भावना (संस्कार) नष्ट होती है। ये सभी तथ्य इस वेबसाईट के नायक व एक तांत्रिक, प्रेमयोगी वज्र के अपने व्यक्तिगत अनुभव के आधार पर लिखे गए हैं, यह मात्र खाली थ्योरी नहीं है। प्रेमयोगी वज्र एक आत्मज्ञानी है, व उसकी कुण्डलिनी भी जागृत हो चुकी है। उसे भी तभी आध्यात्मिक सफलता मिली, जब उसने लगभग 25 वर्ष पूर्व अमानवता का सार्वजनिक रूप से कड़े शब्दों में खंडन किया। इसे इसी मेजबान वेबसाइट पर स्थित वेबपेज के निम्न लिंक पर पढ़ा जा सकता है- कुण्डलिनीयोग, यौनयोग व आत्मज्ञान का अनुभूत विवरण

तंत्र को कभी भी हल्के में नहीं लेना चाहिए, क्योंकि भ्रष्ट होने पर यह नरक के द्वार भी खोल सकता है

एक स्पष्टीकरण यहाँ युक्तियुक्त प्रतीत हो रहा है। यदि ईश्वर की खिलाफत करने वाले बन्दे को ईश्वर के स्मरण के साथ यातना दी जाए जेहाद आदि के नाम पर, तब उसके बदले में जो यातनारूपी फल उस यातना देने वाले को मिलेगा, उसके साथ स्वयं ही ईश्वर का स्मरण बढ़ते समय के साथ दुगुने या अधिक रूप में हो जाएगा, क्योंकि कर्म व उसका फल दोनों आपस में जुड़े हुए होते हैं। फिर यदि वह यातनाफल सहते हुए मर ही जाए, तब तो सीधा मुक्त हो गया, क्योंकि सनातन धर्म में भी कहा है कि मरते समय जिसका स्मरण किया जाए, वही रूप मरणोपरांत मिलता है। परन्तु यदि ऐसा नहीं हुआ, तो नरक का द्वार खुला है। यह अलग बात है कि उसे नरक में भी ईश्वर का स्मरण होता रहेगा। इसलिए बहुत सावधानी की आवश्यकता होती है। इसी तरह, अब जब कोई ईश्वर के नाम पर पीड़ा सहेगा, तो

स्वाभाविक है कि उसमें भी ईश्वर का स्मरण जागेगा, जिससे वह भी ईश्वर को प्रिय हो जाएगा। इससे पीड़ा देने वाले का व पीड़ा सहने वाले का, इन दोनों का एकसाथ भला होगा। अतः स्पष्ट है कि इसमें पीड़ा सहने वाले से अधिक बुरा तो पीड़ा देने वाले का होगा, क्योंकि यदि वह तंत्र का आचरण सही ढंग से नहीं कर पाया, तो बुरे कर्म से पैदा होने वाली नरकरुपी तलवार सदैव उसके ऊपर लटकी रहती है। क्योंकि यह महान कर्म-सिद्धांत है कि जब तक कोई मुक्त नहीं हो जाता, तब तक कर्म का फल तो मिल कर ही रहेगा। इसीलिए इसमें 'सबकुछ' या 'कुछ भी नहीं' होता है, बीच वाले स्तर नहीं होते। यही तंत्र का भी, विशेषतः अतिवादी तंत्र का भी सिद्धांत है। यही एक मुख्य कारण है कि महान इस्लाम एक अतिवादी तंत्र की तरह लगता है। परन्तु दुर्भाग्य से अतिवादी तंत्र के डर के कारण ही बहुत से लोग साधारण तंत्र से भी दूर रहने लगे, जिससे वे एक विज्ञानमिश्रित आध्यात्मिक पद्धति के लाभों से अछूते रहने लगे। प्रेमयोगी वज्र ने इसे अपने अनुभव से सिद्ध किया। उसने कुण्डलिनी के ध्यान के साथ मांसाहार किया। जब उससे उसे छिटपुट चोट के रूप में उसका फल मिला, तब एकदम से उसके मस्तिष्क में वह कुण्डलिनी प्रचंड होकर प्रकट हो गई, और उससे जुड़ा हुआ माँसभक्षण का पापकर्म भी उसे स्मरण हो आया। अब जो कहा है कि अल्लाह के बन्दे को परेशान नहीं करना चाहिए, वह भी सनातन धर्म के अनुसार ही है, जिसमें कहा गया है कि ईश्वरभक्त का बुरा करने वाले को ईश्वर कभी क्षमा नहीं करते। वास्तव में सभी धर्म एकरूप ही हैं, केवल समझने भर का फर्क है। इसी तरह, एक बार प्रेमयोगी वज्र ने कुण्डलिनीध्यान / अद्वैतपूर्ण जीवन के साथ हल्का-फुल्का राजद्रोह किया। वास्तव में वह राजद्रोह नहीं था, अपितु राजद्रोह का अभिनय मात्र ही था मूलतः, क्योंकि उसमें अहिन्सापूर्वक सर्वलोकहित छुपा हुआ था। जब उसे सजा मिली, तो उसने दिव्य प्रेरणा से सजा से बचने का पूरा प्रयास किया, जिसमें उसे अनौखी सफलता भी मिली। जब उसे उसकी हल्की-फुल्की सजा मिली, तब वह उसे ईनाम की तरह लगी, और उसके मन में कुण्डलिनी-ध्यान / अद्वैतभाव पहले से भी प्रचंड हो गया मूलकर्म के स्मरण के साथ, जिससे उसका थोड़े से योग के प्रयास के साथ कुण्डलिनीजागरण हो गया। साथ में कहें, जैसे योग के समय शारीरिक जोड़ों पर सांसों / मुड़ने / गति आदि के प्रभाव से उत्पन्न संवेदना के ऊपर कुण्डलिनी आरोपित होकर प्रचंड हो जाती है, उसी प्रकार धर्मसम्मत वेदना आदि के समय ईश्वर, संवेदना के ऊपर आरोपित होकर अति स्पष्ट हो जाते हैं।

कोई भी, किसी से भी, कभी भी घृणा कर ही नहीं सकता; प्रेम ही सत्य है

तभी तो मैं कहता हूँ कि कोई भी किसी से कभी घृणा कर ही नहीं सकता। यदि एक आदमी दूसरे आदमी से संपर्क स्थापित करता है, तो वह हर हालत में उससे प्रेम ही करता है। यदि वह उसका भला करता है, तो उसको प्रत्यक्ष रूप से आगे बढ़ने का मौक़ा देकर, और यदि वह बुरा करता है, तो उसके पापों को नष्ट करके अप्रत्यक्ष रूप से। यद्यपि पहले वाला तरीका अधिक प्रशंसनीय व व्यावहारिक है। दूसरे तरीके का प्रयोग यदि मजबूरीवश करना ही पड़े, तो हल्के या अधिक से अधिक मध्यम स्तर तक ही, अतिवादी स्तर तक कभी नहीं।

इतिहास गवाह है कि मक्का में रहने वाले मुस्लिम मूर्तिपूजक थे। इसका सीधा सा मतलब है कि वे तंत्रयोगी थे। क्योंकि वहां के लोग मांस-मदिरा, यौन-भोग आदि पंचमकारों का सेवन तो वैसे भी पहले से करते आए हैं। इनके साथ मूर्तिपूजन जुड़ जाए, तो वह स्वतः ही तंत्र बन जाता है।

अमानवतावादी धर्म कैसे बने

होसकता है कि प्राचीनकाल में आम जनजीवन में लड़ाई-झगड़ों की, युद्धादि की व पशु आदि के प्रति हिंसाओं की बहुतायत हुआ करती थी, जिनका निवारण संभवतः असंभव था। इसलिए उन्हें ही धर्म का आवरण पहना कर शुद्ध व मुक्तिकारी कर दिया गया। क्योंकि हिंसाओं व अशुद्धियों से भरे हुए वातावरण में शुद्ध वैदिक क्रियाएं लाभ के स्थान पर हानि पहुंचा सकती थीं, इसीलिए उनके प्रति घृणा को फैलाया गया। बाद में स्थिति बदल गई, परन्तु उनके बनाए गए नियम सदा के लिए हो गए, क्योंकि वे निष्ठा व विश्वास से लिखित रूप में पक्के कर दिए गए थे। उस समय यातायात व संचार की भी संतोषजनक सुविधाएं नहीं होती थीं। इसलिए एक छोटे से दुष्कर / विशेष परिस्थिति वाले क्षेत्र में सीमित लोग समझते थे कि पूरी दुनिया उन्हीं के जैसी थी। इसीलिए वे अपनी विचारधारा को पूरी दुनिया में फैलाने की मंशा रखते थे।

इसी तरह पुराने समय में तंत्र में भी विरले मामलों में नर-बलि की प्रथा थी, जो अब नहीं है। दोनों में ही शरीर-सुख को अधिक महत्त्व दिया गया है। दोनों में ही हठयोग के आसन हैं। दोनों ही पलायनवादी नरम हिंदुत्व के विरोधस्वरूप ही बने थे। यद्यपि तंत्र इस्लाम की अपेक्षा नरम हिंदुत्व के प्रति बहुत अधिक उदारवादी बना रहा, और उसके बीच में पूरी तरह से घुल-मिल कर जीवित बना रहा।

यहाँ हम यह स्पष्ट कर देना चाहते हैं कि इस्लाम में 5 मकार न होकर 4 मकार ही हैं, कम या अधिक रूप से। उसमें मदिरा निषिद्ध है। यद्यपि मैं तो माँस के प्रभाव को मदिरा के प्रभाव के समकक्ष ही मानता हूँ। दोनों ही तमोगुणस्वरूप हैं। साथ में यह भी स्पष्ट करना चाहता हूँ कि वे पञ्चमकार वहां तंत्र की तरह स्पष्ट व अच्छी तरह से परिभाषित न होकर पञ्चमकार की तरह ही प्रतीत होते हैं, क्योंकि उनका प्रभाव पञ्चमकारों की तरह ही ईश्वरीय शक्ति की ओर ले जाने वाला है।

अल्ला संस्कृत शब्द है-स्क्रिब्ड

साथ में, "ल" अक्षर तंत्रप्रधान है। मूलाधार चक्र का बीजमंत्र भी "लं" है। मूलाधार तंत्र का सर्वाधिक शक्तिशाली चक्र है। इस्लाम में "ल" अक्षर का, विशेषतः "ल्ल" का प्रयोग प्रचुरता से है, जैसे कि रसूल, इला, अल्ला आदि-2। "ल्ल" का शक्तिशाली तांत्रिक प्रभाव तो प्रेमयोगी वज्र ने स्वयं भी अनुभव किया है। अधिक जानकारी के लिए यह पोस्ट पढ़ें- होली त्यौहार व तंत्र के बीच समानता

अंततः धार्मिक उन्माद से बचाने वाली, व वास्तविक मानवता-धर्म सिखाने वाली संक्षिप्त जानकारी इसी वेबसाईट पर (जिसका नायक प्रेमयोगी वज्र है) प्राप्त की जा सकती है, और विस्तृत जानकारी वाली पुस्तक को मूल वैबसाईट पर प्राप्त किया जा सकता है।

पुलवामा के आतंकी हमले में शहीद सैनिकों के लिए सैद्धांतिक श्रद्धांजलि

इतिहास गवाह है कि हमलावर ही अधिकाँश मामलों में विजयी हुआ है। यदि वह जीतता है, तब तो उसकी कामयाबी सबके सामने ही है, परन्तु यदि वह हारता है, तब भी वह कामयाब ही होता है। इसके पीछे गहरा तांत्रिक रहस्य छिपा हुआ है। हमला करने से पहले आदमी ने मन को पूरी तरह से तैयार किया होता है। हमले के लिए मन की पूरी तैयारी का मतलब है कि वह मृत्यु के भय को समाप्त कर देता है। मृत्यु का भय वह तभी समाप्त कर पाएगा, यदि उसे जीवन व मरण, दोनों बराबर लगेंगे। जीवन-मरण उसे तभी बराबर लगेंगे, जब वह मृत्यु में भी जीवन को देखेगा, अर्थात मृत्यु के बाद जन्नत मिलने की बात को दिल से स्वीकार करेगा। दूसरे शब्दों में, यही तो अद्वैत है, जो सभी दर्शनों व धर्मों का एकमात्र सार है। उसी अद्वैतभाव को कई लोग भगवान्, अल्लाह् आदि के नाम से भी पुकारते हैं। तब सीधी सी बात है कि हरेक हमलावर अल्लाह् का बन्दा स्वयं ही बन जाता है, चाहे वह अल्लाह् को माने, या ना माने। अगर तो वह भगवान या अल्लाह् को भी माने, तब तो सोने पे सुहागा हो जाएगा, और दुगुना फल हासिल होगा।

अब हमला झेलने वाले की बात करते हैं। वह मानसिक रूप से कभी भी तैयार नहीं होता है, लड़ने व मरने-मारने के लिए। इसका अर्थ है कि वह द्वैतभाव में स्थित होता है, क्योंकि वह मृत्यु से डरता है। वह जीवन के प्रति आसक्ति में डूबा होता है। इसका सीधा सा प्रभाव यह पड़ता है कि वह खुल कर नहीं लड़ पाता। इसलिए अधिकाँश मामलों में वह हार जाता है। यदि कभी वह जीत भी जाए, तो भी उसका डर व द्वैतभाव बना रहता है, क्योंकि विजयकारक द्वैत पर उसका विश्वास बना रहता है। सीधा सा अर्थ है कि वह हार कर भी हारता है, और जीत कर भी हार जाता है। बेहतरी से अचानक का हमला झेलने में वही सक्षम हो सकता है, जो अपने मन में हर घड़ी, हर पल अद्वैतभाव बना कर रखता है। अर्थात जो मन से साधु-संन्यासी की तरह की अनासक्ति से भरा हुआ जीवन जीता है, समर्थ होते हुए भी हमले की शुरुआत नहीं करता, और अचानक हुए हमले का सर्वोत्तम जवाब भी देता है। वैसा आदमी तो भगवान को सर्वप्रिय होता है। तभी तो भारत ने हजारों सालों तक ऐसे हमले झेले, और हमलावरों को नाकों चने भी चबाए। तभी भारत में शुरू से ही धर्म का, विशेषतः अद्वैत-धर्म का बोलबाला रहा है। इसी धर्म-शक्ति के कारण ही भारत को कभी भी किसी के ऊपर हमला करने की आवश्यकता नहीं पड़ी। अपने धर्म को मजबूत करने के लिए हमला करने की आवश्यकता उन्हें पड़ती है, जो अपने दैनिक जीवन में शांतिपूर्वक ढंग से धर्म को धारण नहीं कर पाते। यह केवलमात्र सिद्धांत ही नहीं है, बल्कि तांत्रिक प्रेमयोगी वज्र का अपना स्वयं का अनुभव भी है। जीवन के हरेक पल को अद्वैत से भरी हुई, भगवान की पूजा बनाने के लिए ही उसने इस वेबसाईट को बनाया है।

अब एक सर्वोत्तम तरीका बताते हैं। यदि अद्वैत-धर्म का निरंतर पालन करने वाले लोग दुष्टों पर हमला करके भी अद्वैत-धर्म की शक्ति प्राप्त करने लग जाए, तब तो सोने पर सुहागे वाली बात हो जाएगी। विशेषकर उन पर तो हमला किया ही जा सकता है, जिनसे अपने को खतरा हो, और जो अपने ऊपर हमला कर सकते हों। हमारा देश आज ऐसे ही मोड़ पर है। यहाँ यह तरीका सबसे सफल सिद्ध हो सकता है। भारत के सभी लोगों को ऋषियों की तरह जीवन बिताना चाहिए। भारत के सैनिकों को भी ऋषि बन जाना चाहिए, और हर-हर महादेव के साथ उन आततायियों पर हमले करने चाहिए, जो धोखे से हमला करके देश को नुक्सान पहुंचाते रहते हैं। एक बार परख लिया, दो बार परख लिया, चार बार परख लिया। देश कब तक ऐसे उग्रपंथियों को परखता रहेगा?

आतंकवादियों के आश्रयस्थान के ऊपर जितने अधिक प्रतिबन्ध संभव हो, उतने लगा देने चाहिए, अतिशीघ्रतापूर्वक। उन प्रतिबंधों में शामिल हैं, नदी-जल को रोकना, व्यापार को रोकना, संयुक्त राष्ट्र संघ में आतंकवादी देश घोषित करवाना आदि-2।

एक सैद्धांतिक व प्रेमयोगी वज्र के द्वारा अनुभूत सत्य यह भी है कि जब मन में समस्या (कुण्डलिनी चक्र अवरुद्ध) हो, तभी संसार में भी दिखती है। यही बात यदि उग्रपंथी समझें, तो वे दुनिया को सुधारने की अंधी दौड़ को छोड़ दें।

भगवान करे, उन वीरगति-प्राप्त सैनिकों की आत्मा को शांति मिले।

शिव-अराधना से सर्वधर्मसमभाव

आशुतोष शंकर बहुत जल्दी प्रसन्न हो जाते हैं। इसका अर्थ है कि उनके द्वारा उपदिष्ट तंत्र-साधना अतिशीघ्र मुक्ति प्रदान करती है। तंत्रसाधना हमारे दैनिक जीवन की गतिविधियों को आध्यात्मिक रूप देकर ही बनी है। उदाहरण के लिए निपुण तंत्रयोगियों का शरीर स्वयं ही मुड़ता, सिकुड़ता, फैलता व ऊपर की ओर उठता हुआ सा रहता है। ऐसा कुण्डलिनी को चक्रों पर स्थापित करने के लिए स्वयं ही होता रहता है। जब थकान होती है या कन्फ्यूजन होता है, तब भी ऐसा होता है, जिससे कुण्डलिनी मस्तिष्क-चक्र पर स्वयं ही प्रतिष्ठित हो जाती है। उससे एकदम चैन के साथ एक लम्बी सांस शरीर के अन्दर स्वयं ही प्रविष्ट होती है। नींद आने पर या बोरियत होने पर शरीर के उठने जैसे (अंगड़ाई) के साथ जम्हाई आने के पीछे भी यही रहस्य छिपा हुआ है।

शिव की मूर्ति मानवाकार होती है। इसका अर्थ है कि उस मूर्ति के अन्दर की कोशिकाएं (देहपुरुष) भी वैसी ही होती हैं, जैसी हमारे अपने शरीर के अन्दर की। इसका अर्थ है कि शिवमूर्ति की पूजा के समय हम उसमें स्थित देहपुरुष की ही पूजा कर रहे होते हैं। उस अद्वैतस्वरूप देहपुरुष को हमने अपनी मानसिक कुण्डलिनी का रूप दिया होता है। सीधा सा अर्थ है कि शिव-पूजन से भी कुण्डलिनी ही पुष्ट होती है। कुण्डलिनी-रूपी मानसिक चित्र किसी की व्यक्तिगत रुचि के अनुसार शिव का रूप लिए हुए भी हो सकता है, गुरु का रूप लिए भी हो सकता है, या प्रेमी / प्रेमिका का रूप लिए भी हो सकता है। कई बार तो कुण्डलिनी-चित्र शिव के जैसी वेशभूषा में भी अनुभव होता है, जैसे की बैल पर सवार, गले में सर्प की माला के साथ व डमरू के साथ, एक औघड़ तांत्रिक की तरह आदि-2। ऐसा शिव-पूजन के प्रभाव से होता है।

भगवान शिव दुनिया के सभी लोगों व धर्मों के आराध्य हैं। शिव-पूजन से दुनिया में सर्वधर्मसमभाव स्थापित हो सकता है। इससे धार्मिक उन्माद, कट्टरपंथ, व आतंकवाद पर रोक लग सकती है। सभी धर्म व दर्शन शिव से ही निकले हैं। इसका प्रमाण है कि भगवान शिव खान-पान के मामले में, पूजा के विधि-विधान के मामले में किसी से भेदभाव नहीं करते। उन्हें भूत-प्रेतों जैसे लोग भी उतने ही प्रिय हैं, जितने देवता जैसे लोग। वे सभी को प्रेम से व समान भाव से स्वीकार करते हैं, चाहे कोई किसी भी धर्म आदि का क्यों न हो। उनके द्वारा प्रदत्त तांत्रिक-साधना से यह स्पष्ट हो जाता है। शिवप्रदत्त तांत्रिक साधना ही सर्वाधिक वैज्ञानिक, प्रासंगिक, आधुनिक, सामाजिक, कर्मठतापूर्ण व मानवतापूर्ण है।

शिव-शक्ति अवधारणा सभी धर्मों में किसी न किसी रूप में मानी जाती है। जो सत्य है, वह शिव है। वही पूर्ण है। उसमें सभी भाव-अभाव हैं। उसमें स्त्रीभाव व पुरुषभाव, दोनों एकसाथ विद्यमान हैं। एक प्रकार से शिव का स्वरूप मनुष्य के उस रूप के करीब है, जिसमें वह समाधि में स्थित रहता है। यह सभी जानते हैं कि सर्वाधिक मजबूत समाधि तांत्रिक यौनसंबंध के साथ ही लगती है। अतः एक ही भगवान शिव को शिव-पार्वती के रूप में काल्पनिक रूप से विभक्त किया गया है, ताकि समझने में आसानी हो। वास्तव में शिव-पार्वती सदैव एकाकार ही हैं, इससे यह भी कल्पित हो जाता है कि शिव-पार्वती सदैव पूर्णरूप से तांत्रिक-साधना में लीन रहते हैं। शिवलिंग इस साधना का प्रतीक है।

रशिया में भी इसी तरह की एक लोककथा प्रचलित है कि आदमी कभी पूर्ण हुआ करता था। उससे देवताओं का राजा डर गया और उसने आदमी को दो हिस्सों में बाँट दिया। एक हिस्सा पुरुष बना, और एक हिस्सा स्त्री बना। तभी से लेकर दोनों हिस्से एकाकार होने के लिए व्याकुल होते रहते हैं, ताकि पुनः पूर्ण होकर देवताओं पर राज कर सकें।

कई लोगों को शंका हो सकती है कि शिव तो हमेशा ही तांत्रिक साधना में लीन रहते हैं, फिर उन्हें कामारि, यह नाम क्यों दिया गया है? वास्तव में, एक तांत्रिक ही यौन-दुर्भावना को जीत सकता है। यौनता से दूर भागने वाला आदमी यौन-दुर्भावना को नहीं जीत सकता। उसके अन्दर यौनता के प्रति इच्छा बहुत बलवान होती है, बेशक वह बाहर से उससे अछूता होने का दिखावा करता रहे। काम को वही जीत सकता है, जो काम के रहस्य को समझता हो। काम के रहस्य को एक सच्चे तांत्रिक से अधिक कोई नहीं समझ सकता।

भगवान शिव को भूतनाथ भी इसीलिए कहते हैं, क्योंकि वह उन तांत्रिकों का नाथ भी होता है, जो बाहर के आचारों-विचारों से भूत-प्रेत की तरह ही प्रतीत होते हैं। यद्यपि अन्दर से वे शिव की तरह ही पूर्ण होते हैं।

भगवान शिव को भोला इसलिए कहा जाता है, क्योंकि वह अपनी नित्य तांत्रिक-साधना के बल से पूर्ण अद्वैत-भाव में स्थित रहते हैं। अर्थात वे एक बच्चे की तरह होते हैं। उनके लिए काष्ठ, लोष्ठ व स्वर्ण आदि सब कुछ एकसमान है। यद्यपि वे जीवन-व्यवहार के लिए ही बाहर से भेदभाव का प्रदर्शन करते हैं, अन्दर से नहीं।

मुझे एक बार भगवान स्शिव स्वप्न में दिखे थे। वे एक ऊंचे चबूतरे जैसी जगह पर बैठे हुए थे। वे कुछ गंभीर यद्यपि शांत लग रहे थे, एक औघड़ व अर्धवृद्ध तांत्रिक की तरह। साथ में वे मस्त-मौले जैसे भी लग रहे थे। फिर भी, उनका पहरावा शिव के जैसा लग रहा था। उनके चारों तरफ बहुत से भूत-प्रेत धूम-धड़ाके व जोर के हो-हल्ले के साथ नाच-गा रहे थे। वह आवाज जोर की व स्पष्ट थी। वह विशेष, रोमांचकारी, व संगीतमयी आवाज (खासकर ढोल की डिगडिगाहट) मुझे आजतक कुछ याद सी आ जाती है। उन भूत-प्रेतों से तनिक भी डर नहीं लग रहा था, अपितु बहुत आनंद आ रहा था। ऐसा लगा कि मेरे कुछ जानने में आने वाले व दिवंगत लोग भी उस भूत-प्रेतों के टोले में शामिल हो गए थे। उस स्वापनिक घटना से मेरी कुण्डलिनी को बहुत शक्ति मिली, और उसके लगभग डेढ़ से दो वर्षों के बाद वह जागृत भी हो गई।

इसी तरह, लगभग 30 वर्ष पूर्व मैं अपने चाचा की बरात के साथ जा रहा था। एक बड़े पहाड़ के नीचे से गुजरते हुए मुझे भगवान शिव एक अर्धवृद्ध के रूप में शांति से एक बड़ी सी चट्टान पर पालथी लगा कर बैठे हुए दिखे। वहां पर लोग फूल-पत्ते चढ़ा रहे थे, क्योंकि उसके थोड़ा ऊपर व पेड़ों के पीछे एक शिव-पार्वती का मंदिर था, जो वहां से दिखाई नहीं देता था। मैंने भी पत्ते चढ़ाए, तो मुझे उन्होंने प्रसाद के रूप में कुछ दिया, शायद चावल के कुछ दाने थे, या वहीँ से कुछ पत्ते उठाकर दे दिए थे। मुझे पूरी तरह से याद नहीं है। वे मुस्कुराते हुए, कुछ गंभीर जैसे, साधारण वेशभूषा में, व एक औघड़-गुरु के जैसे लग रहे थे। फिर भी वे एक साधारण मनुष्य ही लग रहे थे। तभी तो शायद मैंने उनसे बात नहीं की। वैसे भी, तंग पगडंडी पर लोगों की लम्बी पंक्ति में जल्दी-२ चलते हुए बात करने का समय ही नहीं था।

भगवान शिव की महिमा का कोई अंत नहीं है, पर निष्कर्ष के रूप में यही कह सकते हैं, शिव है तो सब कुछ है; शिव नहीं है तो कुछ नहीं है।

होली त्यौहार व तंत्र का आपस में रिश्ता

होली है.........। सभी मित्रों को होली की बहुत-२ शुभकामनाएँ। "होली" नाम ही तांत्रिक है। "ल" अक्षर को तंत्र में कामप्रधान माना गया है। मूलाधार का बीजाक्षर "लं" है, व उसी का बीजमंत्र "क्लीं" है। दोनों में ही "ल" अक्षर है। मूलाधार चक्र को भी कामप्रधान माना जाता है। प्रेमयोगी वज्र के साथ भी बीजाक्षर से सम्बंधित घटना हुई थी। वह जिस ऑनलाईन कुण्डलिनी-ग्रुप का सदस्य था, उसमें बहुत से लोगों के नाम "ल" अक्षर वाले थे। कई के नाम में तो दो "ल" भी थे। उदाहरण के लिए "ल्लो", "लीं", व "लि" आदि। उन "ल" अक्षर के नाम वाले लोगों के साथ ही उसका अधिकाँश वार्तालाप होता था। उससे उसका मूलाधार चक्र अनजाने में ही जागृत हो गया। उससे उसमें तांत्रिक योग की प्रवृत्ति जागृत हुई, जिससे शीघ्र ही उसकी कुण्डलिनी जागृत हो गई। साथ में, उनके चेहरे भी लाल रंग लिए हुए थे। लाल रंग भी कामोत्तेजक माना जाता है। उससे भी प्रेमयोगी वज्र को सहयोग मिला।

उस फोरम पर उसका नाम हृदयेश था। इसका अर्थ है, "हृदय का स्वामी"। एक परिपक्व व स्वस्थ हृदय ही मूलाधार को लम्बे समय तक क्रियाशील रख सकता है। बहुत मेहनती होने के कारण, उसका नाभि-चक्र भी क्रियाशील था। हृदय-चक्र व मूलाधार चक्र, दोनों को शक्ति की बहुत आवश्यकता होती है। नाभि चक्र दोनों के लिए शक्ति की आपूर्ति कर रहा था। इसलिए हम नाभि चक्र को अनाहत चक्र व मूलाधार चक्र को आपस में जोड़ने वाला पुल भी कह सकते हैं।

इसी तरह देवी भागवत पुराण में भी एक कथा आती है कि किसी जंगल में एक व्यक्ति के मुख से किसी भय के कारण अनायास ही बीजाक्षर वाले बोल निकले थे, क्योंकि वह मानसिक रूप से व वाणी से दिव्यांग भी था। उसी बीजाक्षर के बल से उसे देवी सिद्ध हो गई, और वह हर प्रकार से उन्नति करने लगा।

तंत्र के साथ होली के सम्बन्ध को उजागर करने वाला दूसरा कारक लाल रंग है। हम सभी जानते हैं कि होली का मुख्य रंग लाल रंग ही है। यह रंग होली वाला जोश भी पैदा करता है। आपको यह जानकार हैरानी होगी कि जो कुंकुम आम जनजीवन में सर्वाधिक प्रयोग किया जाता है, वह हल्दी ही होता है। 95 भाग हल्दी-चूर्ण को 5 भाग चूने (पानी में घोलकर) के साथ मिलाकर जब छाया में सुखाया जाता है, तब वह सुर्ख लाल हो जाता है। चूने की मात्रा बहुत कम होने से इस तरह से निर्मित कुंकुम शरीर के लिए हानिकारक भी नहीं होता। परन्तु सिन्दूर बहुत भिन्न होता है। वह पारे व सीसे का यौगिक होता है, इसलिए स्वास्थ्य के लिए हानि भी पहुंचा सकता है, यदि ढंग से प्रयोग में न लाया जाए। उसका रंग संतरी होता है। हनुमान के ऊपर लगे हुए लाल रंग को आप सिन्दूर समझें। इसी तरह, गुलाल भी कई रंगों के होते हैं, व प्राकृतिक होते हैं। लाल गुलाब लाली वाले पौधों से, नीले रंग का गुलाल इंडिगो से आदि-२। होली के रंग खुद ही बनाने चाहिए। बाजार में तो अधिकाँश तौर पर सिंथैटिक रंग मिलते हैं, जो शरीर के लिए हानिकारक होते हैं। उपरोक्त कारणों से ही तंत्र के मूलाधार चक्र का रंग भी लाल ही होता है।

होलिका दहन भी तंत्र के अनुसार ही है। हम जानते हैं कि यज्ञादि अनुष्ठान अधिकाँश तौर पर तांत्रिक होते हैं। यज्ञ में जल रही अग्नि के बीच में तांत्रिक अपनी कुण्डलिनी को अनुभव करता है। इससे उसकी कुण्डलिनी बहुत पुष्ट हो जाती है, क्योंकि वह अग्नि के तेज से जगमगा जाती है।

होली के दिन एक दूसरे पर सीधे तौर पर व पिचकारी से रंग उड़ेलना भी तंत्र के अनुसार ही है। हम सभी जानते हैं कि सभी को अपने किए हुए कर्मों का भोग करना ही पड़ता है। तांत्रिक योग से यह प्रक्रिया सरल हो जाती है। उससे फल देने वाले कर्म के संस्कार निरंतर के अभ्यास से इतने क्षीण हो जाते हैं कि या तो वे सीधे ही नष्ट हो जाते हैं, या मामूली सा फल देकर नष्ट हो जाते हैं। होली के रंगों से शरीर का विकृत होना एक प्रकार से पूर्व के किए हुए कुकर्मों से शरीर को दंड मिलना ही है। हो सकता है कि किसी के पिछले कर्मों के अनुसार उसके शरीर को गंभीर चोट लगनी हो। होली के रंग से जब उसका शरीर कुरूप हो जाता है, तो होनी उसे शरीर की क्षति समझ लेती है, जिससे उससे सम्बंधित कुकर्म क्षीण हो जाता है। तांत्रिक योगाभ्यास की अतिरिक्त सहायता से वह नष्ट ही हो जाता है। इसी तरह किसी को पानी में डुबो कर मार सकने वाला कुकर्म पानी की एक पिचकारी मात्र से शांत हो जाता है। होली के दिन चलने वाले हल्के-फुल्के मजाक व वाद-विवाद से भी इसी सिद्धांत के अनुसार ही पिछले कुकर्म शांत हो जाते है। अब ज़रा सोचें, बरसाने की लट्ठमार होली से तो पुराने कुकर्मों का भण्डार ही ढीला पड़ जाता होगा।

अब जो पुरानी कथा है कि होली के दिन प्रहलाद को मारने की मंशा रखने वाली उसकी बहन होलिका स्वयं ही दहन हो गई थी, उसमें वास्तव में हिरण्यकशिपु के कुकर्म को ही होलिका कहा गया है। कहा जाता है कि पिता के कुकर्म पुत्र को भोगने पड़ते हैं। वे कुकर्म (हिरण्यकशिपु की पुत्री व प्रहलाद की बहन के रूप में वर्णित) होली के तांत्रिक प्रभाव से नष्ट हो गए, अर्थात होलिका जल गई।

वास्तव में, होली के दिन चारों ओर कामदेव का तेज विद्यमान होता है, क्योंकि सभी लोग एकसाथ मिलकर काम को बढ़ा रहे होते हैं। उससे मूलाधार चक्र को बहुत बल मिलता है। यह तांत्रिक सिद्धांत है कि मूलाधार की क्रियाशीलता के समय किया गया कोई भी कार्य अनेक गुना फलदायी होता है। तभी तो होली का दिन तांत्रिक सिद्धि के लिए सर्वश्रेष्ठ माना जाता है। अगर उस दिन तंत्रयोगी की कुण्डलिनी न भी जागृत हो पाए, तो भी कुण्डलिनी को बहुत अधिक बल मिलता है। वास्तव में, कुण्डलिनी की क्रियाशीलता को भी उतना ही अहम् माना जाता है, जितना की कुण्डलिनी-जागरण को।

कई लोग होली का प्रारम्भ कृष्ण-राधा के प्रेम से बताते हैं। इसमें तो होली की काम-प्रधानता स्वयं ही सिद्ध हो गई। तंत्र भी तो काम प्रधान ही है।

कुण्डलिनी का पुरातन जीवनशैली से सम्बन्ध

कुण्डलिनी-विषय को पुरातन-पंथी कहना अतिशयोक्ति नहीं होगी। "कुण्डलिनी" शब्द भी संस्कृत भाषा का है। संस्कृत भाषा को पुरातन पंथी वैसे भी कहा जाता है। मन में निरंतर बस रही सबसे प्यारी छवि को ही कुण्डलिनी कहा जाता है। वह छवि देवता की भी हो सकती है, किसी प्रेमी / प्रेमिका की भी हो सकती है, गुरु की भी हो सकती है, और यहाँ तक कि शत्रु की भी हो सकती है। बिना प्रेम किए ही शत्रु की छवि मन में बस जाती है। कंस के मन में कृष्ण की छवि बस गई थी। इसी तरह, शिशुपाल के मन में भी भगवान् श्रीकृष्ण की छवि बस गई थी। यह अपवाद-स्वरूप है। इसी तरह, तांत्रिक आकर्षण से निर्मित मानसिक छवि बिना प्रेम के या कम प्रेम के साथ भी मन में बस सकती है। अधिकाँश मामलों में परम प्रेमी लोगों की छवि ही मन में बसी होती है। फिर भी, छवि को मन में बसाने वाले मूल साधन के रूप में तांत्रिक आकर्षण (यिन-यँाग आकर्षण) ही प्रतीत होता है। ओशो महाराज भी ऐसा ही कहते हैं। कृष्ण के प्रेम में दीवानी मीरा के मन में कृष्ण की छवि बस गई थी। इसी तरह, गोपियों के मन में भी कृष्ण की छवि बस गई थी। रांझा के मन में हीर की छवि बस गई थी, और हीर के मन में रांझा की छवि बस गई थी। लैला के मन में मजनू की, व मजनू के मन में लैला की छवि बस गई थी। इसी तरह से रोमियो के मन में जूलियट की छवि बस गई थी, व जूलियट के मन में रोमियो की छवि बस गई थी। यदि पहाड़ों के प्रेम-प्रसंगों को लें, तो रान्झू के मन में फूलमाँ की, व फूलमाँ के मन में रान्झू की छवि बस गई थी। दुर्योधन के मन में उसके मित्र कर्ण की छवि बस गई थी, व कर्ण के मन में दुर्योधन की। योगी श्री रामकृष्ण परमहंस के मन में माता काली की छवि बस गई थी। इसी तरह, स्वामी विवेकानंद के मन में उनके अपने गुरु व योगी श्री रामकृष्ण परमहंस के रूप वाली कुण्डलिनी-छवि बस गई थी। भक्त हनुमान के मन में भगवान राम के रूप की कुण्डलिनी बस गई थी।

तो क्या प्रेम का नाम ही कुण्डलिनी है? हाँ, प्रेम ही कुण्डलिनी है। कुण्डलिनी कोई विशेष नाड़ी, विशेष हड्डी या कोई अन्य भौतिक वस्तु नहीं है। हाँ, विभिन्न भौतिक वस्तुओं से कुण्डलिनी को पुष्ट करने में, व उसे जागृत करने में सहायता अवश्य मिलती है। मन में निर्बाध रूप से बनी हुई प्रेमी की छवि ही कुण्डलिनी है। जब कभी भी कोई आदमी उस छवि में कुछ क्षणों के लिए इतना अधिक खो जाता है कि उसे अपने पृथक अस्तित्व का बोध ही नहीं रहता, और वह कुण्डलिनी के साथ एकाकार हो जाता है, तब उसे ही कुण्डलिनीजागरण या पूर्ण समाधि कहते हैं। तो फिर हठयोगी की कुण्डलिनी कैसे विकसित होती है? हठयोगी तो किसी से प्रेम नहीं करता।

हठयोगी योग के निरंतर अभ्यास से अपने मन में कुण्डलिनी को पुष्ट करता है। जो काम प्रेम के कारण स्वयं होता है, वही काम वह योग के बल से करता है। तभी तो वह अपने मन में वैसी कुण्डलिनी छवि को भी जागृत कर सकता है, जिसके प्रति आमतौर पर प्रेम नहीं पनपता। उदाहरण के लिए, वह सूर्य की छवि को, वायु-स्पर्श की अनुभूति की छवि को, ध्वनि की छवि आदि-2 किसी भी प्रकार की छवि को अपने मन में जागृत कर सकता है। यद्यपि उसके लिए प्रेमी मनुष्य की छवि को जागृत करने के लिए लगाए जाने वाले योगबल की तुलना में कहीं अधिक योगबल लगाने की आवश्यकता होती है। वैसा प्रचंड योगबल केवल पहुंचे हुए योगी ही उत्पन्न कर सकते हैं, जो बहुत विरले होते हैं। सबसे सुगम तरीका यह होता है कि पहले अनन्य प्रेमी की छवि को प्रेम-व्यवहार से मन में पुष्ट किया जाए, फिर अतिरिक्त योगबल की सहायता से उसे जागृत किया जाए। प्रेमी मनुष्य की कुण्डलिनी-छवि सर्वाधिक मानवतापूर्ण भी है, क्योंकि उससे मानवमात्र के प्रति आदरबुद्धि व प्रेम अत्यधिक रूप से बढ़ जाते हैं।

अब पुरातन व आधुनिक पक्ष की बात करते हैं। किसी व्यक्ति के साथ लम्बे समय तक परस्पर सद्भाव, सद्व्यवहार, सहयोग, मेल-मिलाप, निःस्वार्थ भाव व तारतम्य को बनाए रखकर ही उसके प्रति प्रेम उपजता है। ऐसा करने को पुरातन पंथ कहा जाता है, और ऐसा करने वाले को पुरातनपंथी। अवसरवाद को आधुनिकता कहा जाता है। अवसरवाद से प्रगाढ़ प्रेम-सम्बन्ध को बनने का अवसर ही नहीं मिल पाता है, साथ में उससे बना-बनाया प्रेम-सम्बन्ध भी नष्ट हो जाता है। जब तक दूसरा व्यक्ति अपने लिए हितकारक लगेगा, तभी तक उससे प्रेमसम्बन्ध बना रहेगा। जैसे ही वह अहितकारक लगने लगेगा, वैसे ही बना-बनाया प्रेमसम्बन्ध टूट जाएगा। इसे ही अवसरवाद कहते हैं। अपने मन में किसी व्यक्ति की छवि को स्थिर कुण्डलिनी का रूप प्रदान करने के लिए, अपने हित-अहित को दरकिनार करते हुए उससे लम्बे समय तक प्रेमसम्बन्ध बना कर रखना पड़ता है। इसे पुराना फैशन कहा जाता है। तभी तो मैंने कुण्डलिनी को पुरातन-पंथी कहा है।

आत्मज्ञान व अद्वैतभाव भी पुरातन-पंथी ही हैं। आत्मज्ञान कुण्डलिनी से ही उपलब्ध होता है। आत्मज्ञान के बाद भी कुण्डलिनी मन में निरंतर बसी रहती है। इसी तरह, पिछली पोस्टों में सिद्ध किया गया है कि अद्वैत व कुण्डलिनी एक-

दूसरे को बढ़ाते रहते हैं। इसी तरह, सभी धार्मिक क्रियाकलाप भी पुराने तौर-तरीके के रूप में जाने जाते हैं, क्योंकि सभी का एकमात्र उद्देश्य कुण्डलिनी ही है।

अतः सिद्ध होता है कि जीवन की पुरानी शैली कुण्डलिनी-सम्मुखता के रूप में है, जबकि तथाकथित आधुनिक शैली कुण्डलिनी-विमुखता के रूप में है। पुराने और नए तौर-तरीकों के बीच में कोई भी भौतिक विभिन्नता नहीं है। केवल दृष्टिकोण, विचारधारा, व जीवन-व्यवहार का ही अन्तर है। इस तरह से हम देख सकते हैं कि जीवन के नए तौर-तरीके से आध्यात्मिक उन्नति बहुत दुर्लभ है। आजकल सर्वाधिक व्यावहारिक तरीका यह है कि आधुनिक व पुराने तौर-तरीकों को मिश्रित रूप में अपनाया जाए। यही तंत्रात्मक जीवन-पद्धति प्रेमयोगी वज्र द्वारा रचित "शरीरविज्ञान दर्शन" का मुख्य आधार है।

कुण्डलिनी का यिन-यॉंग से संबंध

कुण्डलिनी के लिए यिन-यांग आकर्षण बहुत आवश्यक है। चुम्बक के विपरीत ध्रुव एक-दूसरे को आकर्षित करते हैं। घनात्मक विद्युत् आवेश ऋणात्मक विद्युत् आवेश को आकर्षित करता है, तथा ऋणात्मक घनात्मक को। प्रकाश अन्धकार को आकर्षित करता है, और अन्धकार प्रकाश को। भाव व अभाव एक-दूसरे को आकर्षित करते हैं। इसी तरह, स्त्री व पुरुष एक-दूसरे को आकर्षित करते हैं। विपरीत भावों के बीच में परस्पर आकर्षण को यिन-यांग आकर्षण कहते हैं, और यह कुण्डलिनी के विकास में अहम् भूमिका निभाता है।

प्रेमयोगी वज्र अपने बचपन में एक गंभीर, निर्बल सा, रोगग्रस्त सा, गहरे रंग वाला, लम्बे शरीर वाला, आलसी सा, व छोटी नाक वाला बालक था। वह एक एक ऐसे बालक के प्रति आकर्षित हो गया था, जो चंचल, चुस्त, बलवान, नीरोग, हलके रंग वाला, लम्बी-तीखी नाक वाला, व छोटे शरीर वाला था। वह बालक उसका दूर-पार का रिश्तेदार भी था, व मित्र भी था। वह उम्र में कुछ बड़ा था। दोनों एक ही परिवार में निवास करते थे। यह यिन-यांग आकर्षण का एक अच्छा उदाहरण था। सभी गुण उन दोनों में एक-दूसरे के विपरीत प्रतीत होते थे, फिर भी दोनों के बीच में प्यार था। प्यार के साथ हल्का-फुल्का झगड़ा, या हलकी-फुल्की नोंक-झोंक तो चलती ही रहती है। पर वे दोनों क्षणिक कटुता को भूलकर एकदम से सामान्य हो जाया करते थे। कई बार तो लम्बे समय के लिए भी मनमुटाव हो जाता था, यद्यपि अनासक्ति व अद्वैत के साथ। यह अनासक्ति व अद्वैत परिवार के आध्यात्मिक माहौल के कारण था। इस तरह से, प्रेमयोगी वज्र के मन में उस बालक की छवि एक मजबूत कुण्डलिनी के रूप में प्रतिष्ठित हो गई थी।

कुछ बड़े होने पर दोनों का वियोग हो गया। प्रेमयोगी वज्र को शून्यता का पहला चरण महसूस हुआ। वास्तव में उसके मन के सभी भाव उस कुण्डलिनी के साथ जुड़ गए थे, और कुण्डलिनी के क्षीण होने से वे भी क्षीण जैसे हो रहे थे। उसी दौरान उसे एक अन्य समाज के साथ रहने का मौका मिला। उस समाज में एक देवीरानी ऐसी थी, जो प्रेमयोगी वज्र को उस बालक के जैसी लगी। अतः बालक के रूप वाली मानसिक कुण्डलिनी के साथ लगने वाली उसकी समाधि देवीरानी के रूप को स्थानांतरित होने लगी। देवीरानी-निर्मित कुण्डलिनी बालक-निर्मित कुण्डलिनी का स्थान लेने लगी। यह समाधि-स्थानान्तरण पतंजलि योगसूत्र के भाष्य (संभवतः शंकराचार्य-कृत) में भी उल्लिखित है। वह समाधि पहले वाली समाधि से भी मजबूत थी, क्योंकि उसमें स्त्री-पुरुष आकर्षण भी पहले से विद्यमान यिन-यांग आकर्षण के साथ जुड़ गया था। इसलिए वह समाधि दो सालों में ही शिखर-स्तर तक पहुँच गई।

फिर दोनों प्रकार के समाजों का वियोग हो गया। इससे प्रेमयोगी वज्र को शून्यता का दूसरा चरण महसूस हुआ। वह पहले वाले चरण से भी बहुत मजबूत था। उन्हीं वृद्ध आध्यात्मिक पुरुष (वैबसाईट में वर्णित) के सान्निध्य से उसे उसी चरण के दौरान क्षणिक आत्मज्ञान हो गया।

कहने का तात्पर्य है कि स्त्री-पुरुष आकर्षण ही यिन-यांग आकर्षण का शीर्ष स्तर है। समाज में अन्य स्तरों के यिन-यांग आकर्षण पर तो कुछ जोर दिया भी जाता है, परन्तु स्त्री-पुरुष आकर्षण की उपेक्षा की जाती है। अगर स्त्री-पुरुष आकर्षण एक-दूसरे के रूप की कुण्डलिनी को पुष्ट न भी कर सके, तो भी यह किसी तीसरे व्यक्तित्व (गुरु, देव या अन्य प्रेमी) के रूप की कुण्डलिनी को शक्ति देता है, और उसे जागृत भी कर सकता है। यही वाक्य तंत्रयोग का सार है। यहाँ तक कि अन्य स्तरों के यिन-यांग आकर्षण भी इसी प्रकार का अप्रत्यक्ष रूप का कुंडलिनी-वर्धक प्रभाव पैदा कर सकते हैं, मस्तिष्क के आध्यात्मिक केन्द्रों को क्रियाशील करके। दरअसल, यिन-यांग घटना द्वैत पैदा करती है। यह जल्द ही अद्वैत के द्वारा प्रतिस्थापित किया जाता है, खासकर के आध्यात्मिक (नॉनडुअल) वातावरण में। अद्वैत के साथ कुंडलिनी विकास होता है, क्योंकि दोनों एक साथ रहते हैं।

अधिकाँश समाजों में, विभिन्न सामजिक पहलुओं का हवाला देते हुए साधारण प्रकार के यिन-यांग आकर्षण को भी हतोत्साहित किया जाता है। उन पहलुओं में मुख्य है रूढ़ीवाद। रूढ़ीवाद में जातिवाद, नस्लवाद, अर्थवाद, व्यवसायवाद, लिंगवाद आदि विभिन्न भेदभावकारी वाद आते हैं। भेदभाव तो वैसे यिन-यांग आकर्षण के लिए आवश्यक हैं, परन्तु यह प्रेमभाव पर हावी नहीं होना चाहिए। भेदभाव व प्रेमभाव, दोनों भाव एकसाथ होने चाहिए। यही तो द्वैताद्वैत है। यिन-यांग आकर्षण द्वैत का प्रतीक है, और प्रेम अद्वैत का। द्वैताद्वैत ही सत्य है। खाली अद्वैत तो अधूरा है। यदि प्रेमभाव ही नहीं होगा, तो भेदभाव से उत्पन्न यिन-यांग आकर्षण का लाभ कैसे मिल पाएगा?

देवपूजा में कुंडलिनी

सभी धार्मिक गतिविधियाँ कुण्डलिनी में वैसे ही समा जाती हैं, जैसे नदियाँ समुद्र में। जब हम किसी देवी-देवता की पूजा कर रहे होते हैं, तब हम अप्रत्यक्ष रूप से कुण्डलिनी की ही पूजा कर रहे होते हैं। शरीरविज्ञान दर्शन के अनुसार देवता की मूर्ति, चित्र आदि के रूप में स्थित मानव-देह में अद्वैतशाली देहपुरुष विद्यमान होते हैं। अतः देवता की पूजा से उनकी पूजा स्वतः ही हो जाती है। उससे पूजा करने वाले व्यक्ति के मन में अद्वैतभाव पुष्ट हो जाता है। शरीरविज्ञान दर्शन के अनुसार यह सिद्धांत है कि कुण्डलिनी व अद्वैत साथ-२ रहते हैं। अतः देवपूजन से कुण्डलिनी-पूजन स्वयं ही हो जाता है, जिससे कुण्डलिनी क्रियाशील होकर विकसित होती रहती है, और कभी भी अनुकूल परिस्थितियों को पाकर जागृत भी हो सकती है।

यदि हम देव-मूर्ति में देहपुरुषों की सत्ता को न भी मानें, तब भी कोई बात नहीं। क्योंकि प्रकृति की सभी चीजें जिन्हें हम जड़ कहते हैं, वे जड़ (निर्जीव) नहीं, अपितु अद्वैतभाव के साथ चेतन (सजीव) होती हैं। प्रकृति के सभी अणु-परमाणु या मूलकण मूर्ति में भी विद्यमान होते हैं। अतः देव-मूर्ति के पूजन से सम्पूर्ण अद्वैतमयी प्रकृति की पूजा स्वयं ही हो जाती है। देहपुरुष की सत्ता की वैज्ञानिक कल्पना तो सम्पूर्ण प्रकृति व मानवाकार मूर्ति के बीच में पूर्ण समानता को प्रदर्शित करने के लिए ही की गई है। इससे अद्वैतभाव की प्रचंडता भी बढ़ जाती है।

जैसे ही मूर्ति-पूजन के साथ कुण्डलिनी प्रकट हो जाती है, तथा पूजन व कुण्डलिनी के बीच के सम्बन्ध का तनिक विचार कर लिया जाता है, वैसे ही पूजन पर ध्यान देने से वह ध्यान कुण्डलिनी को स्वयं ही लगता रहता है। उससे कुण्डलिनी उत्तरोत्तर चमकती रहती है। उदाहरण के लिए, देव-मूर्ति के सामने घंटी बजाने से व घंटी की आवाज पर ध्यान लगाने से, व ऐसा समझने से कि वह आवाज देवमूर्ति में स्थित कुण्डलिनी की सेवा कर रही है, स्वयं ही बीच-२ में कुण्डलिनी पर ध्यान लगता रहता है। ऐसा ही तब भी होता है, जब पितरों का पूजन किया जा रहा होता है। क्योंकि पितरों की देह भी देवता या प्रकृति की तरह शुद्ध, निर्विकार व अद्वैतवान होती है।

इसका अर्थ है कि जिसे कुण्डलिनी का ज्ञान नहीं है, उसे पूजा का सम्पूर्ण फल प्राप्त नहीं होता। एक कुण्डलिनी-योगी ही उत्तम प्रकार का पुजारी सिद्ध हो सकता है।

यदि किसी के मन में कुण्डलिनी नहीं बनी हुई है, तो उसके द्वारा की गई पूजा उलटी भी पड़ सकती है। पूजा से उसके मन में चित्र-विचित्र प्रकार के विचार उठेंगे, क्योंकि पूजा से शान्ति व मानसिक शक्ति प्राप्त होती है। इससे पूजा की शक्ति घटिया किस्म के विचारों को भी मिल सकती है, जो हानि पहुंचा सकते हैं। जो पूजा-शक्ति कुण्डलिनी-रूपी एकाकी व लाभदायक विचार को पुष्ट कर सकती है, वह विचारों के हानिकारक झमेले को भी पुष्ट कर सकती है। इसीलिए कहते हैं कि पुजारी या गुरु का योग्य होना बहुत जरूरी है।

मैं अपने दादा के साथ लोगों के घरों में वैदिक पूजा-पाठ कराने जाया करता था। उस पूजा से मेरी पहले से विद्यमान तांत्रिक कुण्डलिनी बहुत अधिक बलवान हो जाया करती थी। उससे मुझे बहुत अधिक आनंद के साथ भरपूर सकारात्मक शक्ति प्राप्त होती थी। वह शक्ति वैसी ही यजमान को भी प्राप्त हो जाया करती थी, क्योंकि वे मेरे दादा के साथ मेरे प्रति भी प्रेमभाव सहित आदर-बुद्धि व सेवाभाव रख रहे होते थे।

इसी तरह प्रत्येक कर्म भी बड़ी आसानी से पूजा बन सकता है, यदि शरीरविज्ञान दर्शन के अनुसार यह सत्य सिद्धांत समझा जाए कि प्रत्येक कर्म अद्वैतशाली देहपुरुष की प्रसन्नता के लिए ही किया जाता है।

द्वैत और अद्वैत दोनों एक-दूसरे के पूरक के रूप में

द्वैत क्या है?

दुनिया की विविधताओं को सत्य समझ लेना ही द्वैत है। दुनिया में विविधताएं तो हमेशा से हैं, और सदैव रहेंगी भी, परन्तु वे सत्य नहीं हैं। दुनिया में जीने के लिए विविधताओं का सहारा तो लेना ही पड़ता है। फिर भी उनके प्रति आसक्ति नहीं होनी चाहिए।

अद्वैत क्या है?

उपरोक्तानुसार, दुनिया की विविधताओं के प्रति असत्य बुद्धि या अनासक्ति को ही अद्वैत कहते हैं। वास्तव में द्वैताद्वैत को ही संक्षिप्त रूप में द्वैत कहते हैं। अद्वैत अकेला नहीं रह सकता। यह एक खंडन-भाव है। अर्थात यह द्वैत का खंडन करता है। यह खंडन "द्वैत" से पहले लगने वाले "अ" अक्षर से होता है। जब द्वैत ही नहीं रहेगा, तब उसका खंडन कैसे किया जा सकता है? इसलिए जाहिर है कि द्वैत व अद्वैत दोनों साथ-२ रहते हैं। इसीलिए अद्वैत का असली नाम द्वैताद्वैत है।

एक ही व्यक्ति के द्वारा द्वैत व अद्वैत का एकसाथ पालन

ऐसा किया जा सकता है। यद्यपि ऐसा जीवनयापन विरले लोग ही ढंग से कर पाते हैं, क्योंकि इसके लिए बहुत अधिक शारीरिक व मानसिक बल की आवश्यकता पड़ती है। इससे लौकिक कार्यों की गुणवत्ता भी दुष्प्रभावित हो सकती है, यदि सतर्कता के साथ उचित ध्यान न दिया जाए।

द्वैताद्वैत को बनाए रखने के लिए श्रमविभाजन

ऐसा विकसित सभ्यताओं में होता है, व बुद्धिमान लोगों के द्वारा किया जाता हहै। वैदिक सभ्यता भी इसका एक अच्छा उदाहरण है। इसमें द्वैतमयी लौकिक कर्मों का उत्तरदायित्व एक भिन्न श्रेणी के लोगों पर होता है, और अद्वैतमयी धार्मिक क्रियाकलापों का उत्तरदायित्व एक भिन्न श्रेणी के लोगों पर। वैदिक संस्कृति की जाति-परम्परा इसका एक अच्छा उदाहरण है। इसमें ब्राम्हण श्रेणी के लोग पौरोहित्य (धार्मिक कार्य) का कार्य करते हैं, और अन्य शेष तीन श्रेणियां विभिन्न लौकिक कार्य करती हैं।

द्वैताद्वैत में श्रम-विभाजन के लाभ

इससे व्यक्ति पर कम बोझ पड़ता है। उसे केवल एक ही प्रकार का भाव बना कर रखना पड़ता है। इससे परस्पर विरोधी भावों के बीच में टकराव पैदा नहीं होता। इसलिए कार्य की गुणवत्ता भी बढ़ जाती है। वैसे भी दुनिया में देखने में आता है कि जितना अधिक द्वैत होता है, कार्य उतना ही अच्छा होता है। अद्वैतवादी के अद्वैतभाव का लाभ द्वैतवादी को मिलता रहता है, और द्वैतवादी के द्वैतभाव का लाभ अद्वैतवादी को मिलता रहता है। यह ऐसे ही होता है, जैसे एक लंगड़ा और एक अंधा एक-दूसरे की सहायता करते हैं। यद्यपि इसमें पूरी सफलता के लिए दोनों प्रकार के वर्गों के बीच में घनिष्ठ व प्रेमपूर्ण सम्बन्ध बने रहने चाहिए।

गुरु-शिष्य का परस्पर सम्ब्बंध भी ऐसा ही द्वैताद्वैत-सम्बन्ध है

प्रेमयोगी वज्र को भी इसी श्रमविभाजन का लाभ मिला था। उसके गुरू (वही वृद्धाध्यात्मिक पुरुष) एक सच्चे ब्राम्हण-पुरोहित थे। प्रेमयोगी वज्र स्वयं एक अति भौतिकवादी व्यक्ति तथा। दोनों के बीच में लम्बे समय तक नजदीकी व प्रेमपूर्ण सम्बन्ध बने रहे। इससे प्रेमयोगी वज्र का द्वैत उसके गुरु को प्राप्त हो गया, और गुरु का अद्वैत उसको प्राप्त हो गया। इससे दोनों का द्वैताद्वैत अनायास ही सिद्ध हो गया, और दोनों मुक्त हो गए। इसके फलस्वरूप प्रेमयोगी वज्र को क्षणिक आत्मज्ञान के साथ क्षणिक कुण्डलिनीजागरण की उपलब्धि भी अनायास ही हो गई। साथ में, उसकी कुण्डलिनी तो उसके पूरे जीवन भर क्रियाशील बनी रही।

यही द्वैताद्वैत समभाव ही सर्वधर्म समभाव है

कोई धर्म द्वैतप्रधान होता है, तो कोई धर्म अद्वैतप्रधान होता है। इसीलिए दोनों प्रकार के धर्मों के बीच में मैत्रीपूर्ण सम्बन्ध बने रहने चाहिए। इससे दोनों एक-दूसरे को शक्ति प्रदान करते रहते हैं। इससे वास्तविक द्वैताद्वैत भाव पुष्ट

होता है। विरोधी भावों के बीच में परस्पर समन्वय ही वैदिक संस्कृति की सफलता के पीछे एक प्रमुख कारण था। शरीरविज्ञान दर्शन में इसका विस्तार के साथ वर्णन है।

अवसादरोधक दवा से कुण्डलिनी लाभ

अवसादरोधक दवा कैसे काम करती है

प्रेमयोगी वज्र प्रचंड दुनियादारी में उलझा हुआ व्यक्ति था। उससे उसका मन बहुत अशांत हो गया था। यद्यपि वह शरीरविज्ञान दर्शन की सहायता से उसे काफी हद तक काबू कर रहा था। परन्तु फिर भी वह पूरी तरह से काबू नहीं हो पा रहा था। एक बार वह गंभीर गैस्ट्राइटीस के वहम से एंडोस्कोपी करवाने गया। चिकित्सक ने उसकी मनोदशा को समझते हुए उसे डेढ़ महीने की अवसादरोधक व क्रोधनाशक दवा (नाम याद नहीं) प्रेस्क्राईब कर दी। उसे उसको खाते हुए अपने अवसाद व क्रोध में काफी कमी महसूस हो रही थी। उसने गूगल पर पढ़ लिया था कि एक महीने तक रोजाना खाने पर ही इस दवा का प्रभाव स्थाई बन पाता है। अतः वह दवा को खाता रहा। उसे लग रहा था कि जो काम आध्यात्मिक पुस्तक शरीरविज्ञान करती थी, वही काम वह दवा भी कर रही थी। यद्यपि दवा का काम कुछ ज्यादा ही जड़ता, उग्रता, स्मरणशक्ति की कमी, और कृत्रिमता से भरा हुआ था। उसे आत्मजागरण व कुण्डलिनीजागरण का अद्वैतकारक प्रभाव भी अवसादरोधी दवा के अद्वैतकारक प्रभाव से मिलता-जुलता लगा, यद्यपि शुद्धता और स्तर में अंतर के साथ। एकहार्ट टोल्ले ने भी लगभग ऐसा ही बयान किया है कि अवसादरोधी दवा का प्रभाव आत्मजागरण के प्रभाव जैसा होता है, यद्यपि तुलनात्मक रूप से बहुत निम्न दर्जे का और उग्रता के साथ।

वह लम्बी खांसी से परेशान था

उसने बहुत सी एंटीबायोटिक दवाइयां खाईं, पर खांसी ठीक नहीं हुई। वह समझ रहा था कि एंटीबायोटिक दवाइयाँ काम नहीं कर रही थीं, जीवाणुओं के प्रतिरोध के कारण। वास्तव में उसकी खांसी की वजह क्रोनिक गेस्ट्राइटीस थी। जब उसने 1 महीने तक पेंटोपराजोल और डॉमपेरिडोन दवाइयां खाईं तथा योग करने के साथ कुछ सावधानियां बरतीं; तब उसकी खांसी जड़ से ख़त्म हो गई। आजकल के तनाव भरे जीवन में यह समस्या विकराल हो गई है, जिस बारे में अधिकाँश लोग गलतफहमी का शिकार हो जाते हैं।

I don't see it as a road to true and lasting awakening, but it can give people a glimpse of freedom from the prison of their conceptual mind (a worth reading interview with Eckhart tolle)………….

INTERVIEW WITH ECKHART TOLLE

मस्तिष्कप्रभावी दवाओं से रूपांतरण

शरीरविज्ञान दर्शन एक अद्वैतवादी सोच है। इससे सिद्ध होता है कि वह दवा अद्वैत को उत्पन्न कर रही थी। माईंड अल्टरिंग ड्रग्स भावनाओं को नियंत्रित करने के लिए पावर ब्रेक की तरह काम करती है, जिससे मस्तिष्क के सॉफ्ट टिशू को नुक्सान पहुँच सकता है। उसे अपनी स्मरणशक्ति कम होती हुई महसूस हो रही थी। क्रोध के समय तो उसका मस्तिष्क जवाब देने लगता था, इसलिए वह क्रोध कर ही नहीं पाता था। क्रोध से उसका मस्तिष्क दबावयुक्त, भारी, सुस्त, और अंधकारमय सा हो जाता था। शारीरिक रूप से भी वह शिथिल व कमजोर जैसा रहने लग गया था। उसकी कार्यक्षमता काफी घट गई थी। वह अपने अचानक हुए परिवर्तन को देखकर हैरान था। इसलिए उसने 30-35 दिन के बाद वह दवा बंद कर दी, और बची हुई दवा कूड़ेदान में डाल दी। यद्यपि उसका रूपांतरण स्थायी रूप से हो गया था। वह पिछली अवस्था में कभी भी वापिस नहीं लौट पाया।

अवसादरोधक दवा आनंद व अद्वैत को कैसे उत्पन्न करती है?

इससे व्यक्ति किसी के भी बारे में गहराई से नहीं सोच पाता, और न ही ढंग से विश्लेषण या जजमेंट कर पाता है। इससे सभी वस्तु-विचारों के प्रति स्वयं ही साक्षीभाव पैदा हो जाता है। उससे आनंद पैदा होता है। साथ में, विश्लेषण व जजमेंट की कमी से सभी वस्तु-विचारों के बीच का अंतर मिटने लगता है, जिससे सभी कुछ एक जैसा लगने लगता है। यही तो अद्वैत है। यह सब ऐसे ही होता है, जैसे शराब के हल्के नशे में होता है। सीधा सा मतलब है कि मेडीटेशन बुद्धि-शक्ति को बढ़ा कर अद्वैतभाव को उत्पन्न करती है, जबकि मस्तिष्क-परिवर्तक दवाएं बुद्धि-शक्ति को घटा कर। फिर भी ये दवाएं आध्यात्मिक जागरण की झलक तो दिखा ही देती हैं। उस झलक का पीछा करते हुए आदमी वास्तविक आत्म-जागरण को भी प्राप्त कर सकता है।

मस्तिष्क-परिवर्तक दवाओं से ध्यान लगाने में कैसे सहायता मिलती है?

अपनी मानसिक गतिविधियों के अचानक ही बहुत धीमा पड़ने से प्रेमयोगी वज्र को आश्चर्य भी हुआ, और कुछ दुःख भी। वह अपनी पूर्ववत मानसिकता को प्राप्त करने के उपाय सोचने लगा। वह मानसिकता उसकी याददाश्त से जुड़ी हुई थी, जो ड्रग के प्रभाव से काफी कम हो गई थी। उसे कुछ समय के लिए एक ऐसे व्यक्ति की संगति मिल गई, जो नियमित रूप से योगासन करता था। उसे देखकर वह भी करने लगा। धीरे-२ उसे अभ्यास हो गया। वह इंटरनेट व पुस्तकों की मदद भी लेने लगा। उसमें मानसिक शक्ति तो पहले की तरह प्रचुर थी, परन्तु वह कहीं लग नहीं रही थी। इसका कारण यह था कि वह दवा के प्रभाव से उन पिछली बातों व घटनाओं को भूल गया था, जिनसे उसकी मानसिक शक्ति जुड़ कर क्षीण होती रहती थी। दवा से उसका पिछला संसार मिट जाने से उसकी प्रचंड मानसिक शक्ति उससे मुक्त हो गई थी। इसीलिए उसे महसूस नहीं हो रही थी। योग की सहायता से वह छुपी हुई व भरपूर मानसिक शक्ति उसकी कुण्डलिनी को स्वयं ही लगने लगी। इससे वह समय के साथ जागृत हो गई।

दुनियादारी की मानसिकता का कुण्डलिनी-मानसिकता के रूप में प्रकट होना

कुण्डलिनीयोग से उसे अपनी खोई हुई पुरानी मानसिकता प्राप्त हो गई। यद्यपि वह पहले की तरह अद्वैतपूर्ण दुनियादारी के रूप में नहीं थी, अपितु वह अकेली कुण्डलिनी के रूप में थी। समस्त मानसिक शक्ति एकमात्र कुण्डलिनी को लगने से वह जागृत हो गई।

प्रबल मानसिकता की प्राप्ति केवलमात्र अद्वैतभाव से संभव

यह ध्यान देने योग्य बात है कि प्रबल, अविरल व स्थायी मानसिकता केवल अद्वैतपूर्ण दुनियादारी से ही संभव है। द्वैतपूर्ण व्यवहार से मानसिकता चरम के निकट पहुँचने से पहले ही क्षीण होती रहती है। इससे सिद्ध होता है कि प्रेमयोगी वज्र का अद्वैतपूर्ण जीवन-व्यवहार (geetaa-ukt karmayoga) भी उसके कुण्डलिनी-जागरण में सहायक बना।

कुण्डलिनी के साथ पशु-प्रेम

यह सर्वविदित है कि कुण्डलिनी प्रेम का प्रतीक है। कुण्डलिनी समर्पण का प्रतीक है। कुण्डलिनी श्रद्धा-विश्वास का प्रतीक है। कुण्डलिनी स्वामीभक्ति का प्रतीक है। कुण्डलिनी सेवाभाव का प्रतीक है। कुण्डलिनी परहितकारिता का प्रतीक है। कुण्डलिनी आज्ञापालन का प्रतीक है। कुण्डलिनी सहनशक्ति का प्रतीक है। ये कुण्डलिनी के साथ रहने वाले मुख्य गुण हैं। अन्य भी बहुत से गुण कुण्डलिनी के साथ विद्यमान रहते हैं। यदि हम गौर करें, तो ये सभी मुख्य गुण पशुओं में भी विद्यमान होते हैं। इनमें से कई गुण तो उनमें मनुष्यों से भी ज्यादा मात्रा में प्रतीत होते हैं। इससे यह अर्थ निकलता है कि पशु कुण्डलिनी-प्रेमी होते हैं। आइये, हम इसकी विवेचना करते हैं।

कुण्डलिनी स्वामीभक्ति का प्रतीक है

आजतक कुत्ते से ज्यादा स्वामीभक्ति किसी प्राणी में नहीं देखी गई है। ऐसे बहुत से उदाहरण हैं, जब कुत्ते ने अपने मालिक के लिए जान तक दे दी है। इसका अर्थ है कि कुत्ते के मन में अपने मालिक के व्यक्तित्व की छवि स्थाई और स्पष्ट रूप से बसी हुई होती है। वह छवि कुत्ते के मन के लिए एक खूंटे की तरह काम करती है। इससे कुत्ता आपने विचारों और क्रियाकालापों के प्रति अनासक्ति भाव या साक्षी भाव प्राप्त करता रहता है। उससे कुत्ते को आनंद प्राप्त होता रहता है। उस कुण्डलिनी छवि के महत्त्व को वह कभी नहीं भूलता, यहाँ तक कि उसके लिए जान तक दे सकता है। इसके विपरीत, बहुत से मनुष्य अपने मालिक के प्रति वफादारी नहीं निभा पाते। इससे सिद्ध हो जाता है कि कुत्ता मनुष्य से भी ज्यादा कुण्डलिनी प्रेमी होता है।

कुण्डलिनी सेवा भाव का प्रतीक है

उदाहरण के लिए, गाय को ही लें। वह हमें दूध देकर हमारी सेवा करती है। अधिकतर गौवें अपनी देख-रेख करने वाले मालिक के पास ही दूध देती हैं। दूसरा कोई जाए, तो वे जोर की लात भी टिका सकती हैं। इसका सीधा सा अर्थ है कि गाय के मन में अपने मालिक की छवि बस जाती है, जो उसके लिए कुण्डलिनी का काम करती है। एक आदमी तो अपने मालिक को कभी भी छोड़ सकता है, परन्तु गाय ऐसा कभी नहीं करती है। इससे भी यही सिद्ध होता है कि पशु मनुष्य से भी ज्यादा नैष्ठिक कुण्डलिनी भक्त होते हैं।

यह अलग बात है कि दिमाग की कमी के कारण पशु मनुष्य की तरह मालिक (कुण्डलिनी) को बारम्बार बदल भी नहीं सकता। अधिकाँश मनूश्य तो अपने दिमाग पर इतना घमंड करने लग जाते हैं कि कुण्डलिनी के परिपक्व होने से पहले ही उसे बदल देते हैं। ऐसी स्थिति से तो पशु वाली स्थिति ही बेहतर प्रतीत होती है। एक बात और है। पालतु पशु को जब आदमी द्वारा संरक्षण व भोजन प्राप्त होता है, तभी उसे कुण्डलिनी को ज्यादा बढ़ाने का अवसर मिलता है।

कुण्डलिनी परहितकारिता का प्रतीक है

इसी तरह, विभिन्न पशु-पक्षी विभिन्न प्रकार के उत्पाद देकर मनुष्य का भला करते रहते हैं। ऐसा उनके मनुष्य के प्रति प्रेम से ही सम्भव हो सकता है। माता प्रेम के वशीभूत होकर ही अपने बच्चे को दूध पिलाती है। यह भी सत्य है कि प्रेम केवल कुण्डलिनी से ही होता है। यह अलग बात है कि पशु उसे बोलकर बता नहीं सकता। यदि प्रेम न भी हो, तो भी किसी का हित करते हुए स्वयं ही उससे प्रेम हो जाता है। यहाँ तक कि पेड़-पौधे भी कुण्डलिनी-प्रेमी होते हैं, क्योंकि वे भी सदैव परहित में लगे रहते हैं।

कुण्डलिनी आज्ञापालन का प्रतीक है

हम उसी की आज्ञा का पालन सबसे अधिक तत्परता के साथ करते हैं, जो हमारे मन में सबसे अधिक बसा होता है, जो हमें सबसे अधिक महत्त्वशाली लगता है, और जिस पर हमें सबसे अधिक विश्वास होता है। वही हमारी कुण्डलिनी के रूप में होता है। वही आनंद का स्रोत भी होता है। अपनी मालिक की आज्ञा का पालन कुत्ते बहुत बखूबी करते हैं। कुत्ते में तो दिमाग भी इंसान से कम होता है। इसका सीधा सा अर्थ है कि कुत्ता केवलमात्र कुण्डलिनी से ही आज्ञापालन के लिए प्रेरित होता है, अन्य लॉजिक से नहीं। आदमी तो दूसरे भी बहुत से लॉजिक लगा लेता है। इसका सीधा सा अर्थ है कि एक कुत्ता भी कुण्डलिनी की अच्छी समझ रखता है।

इन बातों का उद्देश्य मनुष्य को गौण सिद्ध करना नहीं है। इसमें कोई संदेह नहीं है कि मनुष्य जीव-विकास की सीढ़ी पर सबसे ऊपर है। यहाँ बात केवल कुण्डलिनी के बारे में हो रही है।

कुण्डलिनी कर्तव्यपालन का प्रतीक है

एक बैल यदि अस्वस्थ भी हो, तो भी वह खेत में हल चलाने से पीछे नहीं हटता। इसी तरह, यदि उसका मूड ऑफ़ हो, तो भी वह अपने कदम पीछे नहीं हटाता। यह अलग बात है, यदि वह हल चलाते-२ हांफने लगे या नीचे गिर जाए। इसका सीधा सा अर्थ है कि बैल भी कुण्डलिनी प्रेमी होता है। उसका रोजमर्रा का काम व उसके मालिक का व्यक्तित्व उसके मन में एक मजबूत कुण्डलिनी के रूप में बस जाता है, जिसे वह नजरअंदाज नहीं कर पाता। अपने आनंद के स्रोत को भला कौन बुद्धिमान प्राणी छोड़ना चाहे। इसी तरह, सहनशक्ति के मामले में बभी समझ लेना चाहिए।

पशुओं के कुण्डलिनी प्रेम के बारे में प्रेमयोगी वाज्र का आपना अनुभव

उसका ब्बच्पन पालतु पशुओं से भरे-पूरे परिवार में बीता था। पशुओं के मन के भाव पढ़ने में उसे बहुत मजा आता था। जंगल में बैलों का खेल-२ में आपस में भिड़ना उसे रोमांचित कर देता था। मवेशियों का जंगल के घास से पेट भर जाने के बाद अपने बाड़े की तरफ दौड़ लगाना एक अलग ही रोमांच पैदा करता था। एक गाय बड़ी नटखट, चंचल व साथ में दुधारू भी थी। वह एक नेता की तरह सभी मवेशियों के आगे-२ चला करती थी। सभी मवेशी उसे सींग मारने को आतुर रहते थे, इसलिए वह अकेले में ही चरा करती थी। वह जंगल के डर से उनकी नजरों से दूर भी नहीं जाती थी। उसकी बछिया भी वैसी ही निकली। वह देखने में भी बहुत सुन्दर थी। जंगल से बाड़े की तरफ पहाड़ी से नीचे उतरते समय वह पूंछ खड़ी करके बड़ी तेजी से कुदकते हुए भागती, और कुछ दूर जाकर पीछे से आने वाले मवेशियों का इन्तजार करते हुए खड़ी होकर बार-२ गर्दन मोड़कर पीछे देखने लग जाती। जब वे नजदीक आते, तब फिर से दौड़ पड़ती।

जब प्रेमयोगी वज्र की कुण्डलिनी बलवान होती थी, तब सभी मवेशी उसके आसपास चरने के लिए आ जाया करते थे। कोई मवेशी उसे कान टेढ़े करके बड़े आश्चर्य से व प्रेम से देखने लग जाते थे। कई तो उसे चाटने भी लग जाते थे। वे उसे बार-२ सूंघते, और आनंदित हो जाते। शायद उन्हें कुण्डलिनी के साथ विद्यमान सबलीमेटिड वीर्य की खुशबू भी उसके रोमछिद्रों से निकली हुई महसूस होती थी। कुण्डलिनी जागरण के आसपास (प्राणोत्थान के दौरान) भी पशुओं के संबंध में उसका ऐसा ही अनुभव रहा। कई बार तो खूंटे से बंधीं कमजोर दिल वाली भैंसें उसे अचानक अपने पास पाकर डर सी भी जाती थीं, और फिर अचानक प्यार से सूंघने लग जाती थीं। ज्यादातर ऐसा उन्हीं के साथ होता था, जो क्रोधी, सींग मारने वाली, और दूध देने में आनाकानी करने वाली होती थीं। इसका सीधा सा मतलब है कि वे कुण्डलिनी से कम परिचित होती थीं।

पशुओं के बीच में रहने से कुण्डलिनी विकास

प्रेमयोगी वज्र ने यह महसूस किया कि पशुओं, विशेषकर जंगल में खुले घूमने वाले, पालतु, व गाय जाति के मवेशियों के बीच में रहकर कुण्डलिनी ज्यादा स्पष्ट रूप से विकसित हो जाती थी। पशु स्वभाव से ही प्रकृति प्रेमी होते हैं। प्रकृति में तो हर जगह अद्वैतरूपा कुण्डलिनी विद्यमान है ही। इसलिए कुण्डलिनी प्रेमी को पशुओं से भी प्रेम करना चाहिए।

कुण्डलिनी से सुहाने सपने

दोस्तों, अब मुझे हर हफ्ते नई पोस्ट लिखने के लिए खुद ही हिंट मिल जाती है, और नई घटना भी। आज रात को मैंने एक तंत्र से सम्बंधित स्वप्न देखा। वह जीवंत, स्पष्ट व असली लग रहा था। वह स्वप्न सुबह के समय आया। ऐसा लग रहा था कि वह मेरी किसी पूर्वजन्म की घटना पर आधारित रहा होगा। तभी तो मैं उसमें भावनात्मक रूप से बहुत ज्यादा बह गया था, और मुझे आनंद भी आया। उस स्वप्न से प्राचीनकाल के तंत्र के बारे में मेरे मन में तस्वीर स्पष्ट हो गई। वैसे भी एक कुण्डलिनी योगी का पुरानी या अपने पूर्वजन्मों की घटनाओं से सामना उसके स्वप्न में होता ही रहता है। वे सारे स्वप्न बहुत मीनिंगफुल होते हैं।

प्राचीनकाल में तंत्र बहुत उन्नत था

उस सपने में मैंने देखा कि मैं अपने परिवार सहित एक ऊंचे पहाड़ के किसी पर्यटक स्थल जैसे स्थान पर था, जहां पर चहल-पहल थी, व बहुत आनंद आ रहा था। कुछ पुराने परिचितों से भी वहां मेरी मुलाक़ात हुई। उस पहाड़ की तलहटी एक मैदानी जैसे भूभाग से जुड़ी हुई थी। उस जोड़ पर एक विशालकाय मंदिर जैसा स्थान था। हम नीचे उतर कर उस मंदिर परिसर में प्रविष्ट हो गए। चारों और बहुत सुन्दर चहल-पहल थी। बहुत आनंद आ रहा था। परिसर में एक प्रकाशमान गुफा जैसी संरचना भी थी, जिसके अन्दर भी बाजार सजे हुए थे। मेरी पत्नी उसमें घुमते-फिरते और शौपिंग करते हुए कहीं मुझसे खो गई थी। मैं उसे भी खोज रहा था। उस खोजबीन में मैंने मंदिर के बहुत से कमरे देखे, जो लाइन में थे. हालांकि कुछ कमरे सीढ़ियों से कुछ ऊपर चढ़कर भी थे। ऐसा लग रहा था, जैसे कि सारा मंदिर परिसर किसी विशालकाय छत के नीचे था। नीचे की पंक्ति के एक कमरे में मैं घुस गया। वहां पर बहुत से लोग नीचे, एक दरी पर बैठे थे। वहां पर बीच में जैसे मैंने अपना बैग पीठ से उतार कर रख दिया, और मैं भी बैठ गया। तभी एक महिला अन्दर आई, और मुझे बड़े प्यार व अपनेपन से अपने साथ, गलियों से होते हुए, सीढ़ियों के ऊपर के एक कमरे तक ले गई। उससे कुछ पुरानी जान-पहचान भी महसूस हो रही थी, पर वह स्पष्ट नहीं थी। शायद इसीलिए मुझे उसके साथ आनंद आ रहा था। एक-दो स्थान पर उसने मुझे अपना स्पर्श भी करवाया। वह उस कमरे में एक कुर्सी पर बैठ गई। उसके सामने मेज पर बहुत से कागजात पड़े थे। उसके समीप ही दो-चार पुरुष लोग भी कुर्सियों पर बैठे हुए थे। महिला ने किसी बीमा जैसी योजना के कुछ कागजात जैसे दिखाए, और मुझसे कहा कि मेरी पत्नी ने उस योजना के लिए हामी भरी थी। मैं मुकरने लगा, तो उसके चेहरे पर कुछ हलकी मायूसी जैसी दिखी। तभी वे लोग कुछ अन्य ग्राहकों का काम निपटाने लगे, जिससे मैं मौक़ा पाकर वहां से खिसक गया। मैं वापिस उसी कमरे में आ गया, जहां पहले बैठा था, क्योंकि मैं अपना बैग वहीं भूल गया था। पर मुझे अपना बैग वहां नहीं मिला। मैं काफी उदास हुआ, क्योंकि उसमें कुछ अन्य जरूरी चीजों के साथ मेरा महँगा किन्डल ई-रीडर भी था। मैं बहुत निराश होकर बैग खोजने लगा। मैंने कई कमरों में तलाश की, यह सोचकर कि कहीं मैं दूसरे कमरों में तो नहीं बैठा। मैं फिर बीच वाली खुली लॉबी में गया, जिसके अन्दर वे कमरे खुलते थे। वह एक रेलवे स्टेशन की तरह बहुत खुली-डुली जगह थी, जहाँ पर काफी चहल-पहल थी। वहां एक-दो पुलिस वाले भी सीमेंट के बेंच पर बैठे हुए थे। उनसे पूछा, तो उन्होंने लापरवाही से व मुझसे पीछा छुड़ाने के लिए कहा कि मेरा बैग कभी नहीं मिलेगा, और उसे किसी ने उठा लिया होगा। मैंने फिर से उसी कमरे का दरवाजा खोला, जहां मैं बैठा हुआ था। वहां पर दो भद्र पुरुष नाईट सूट में मदिरा पीने का आनंद ले रहे थे। वे दोनों पालथी लगा कर आराम से बैठे फुए थे। वे मध्यम कद-काठी के और कुछ सांवले लग रहे थे। मदहोशी की ख़ुशी की मुस्कान उनके चेहरे पर साफ झलक रही थी। पूछने पर उन्होंने मुझे बताया कि मेरा बैग वहीं कमरे में पड़ा था। मैं बहुत खुश हुआ और उनसे कहा कि शराब से आपके अन्दर ज्ञान की आँख खुली, जिससे आप मेरा बैग ढूंढ सके। वे बहुत खुश होकर मुस्कुराने लगे, और एक पेग हाथ में पकड़ कर मुझसे बोले कि मैं भी उसे देवी माता के नाम पर पी लेता। मैंने उन्हें मुस्कुराते हुए धन्यवाद कहा, और चल दिया। यद्यपि मेरा मन लगातार कर रहा था कि मैं एक पेग देविमाता के नाम पर लगा लेता। परन्तु मैं उन्हें मना कर चुका था, इसलिए वापिस नहीं मुड़ना चाहता था। परिसर से बाहर निकल कर ही दुकानों की एक कतार लगी हुई देखी। मैं एक मिठाई की दुकान में कुछ मिठाई खरीदने के लिए घुस गया। वहां पर दुकान के शुरू में ही खड़े मुझे कुछ चिर-परिचित दोस्त मिले, जो ख़ुशी के साथ शराब के बारे में कुछ आपसी बातें करने लगे। मैंने कहा कि ऐसी बातें न करो, नहीं तो मेरा मन भी देवी माता के नाम पर एक पेग लगाने का कर जाएगा। ऐसा सुनकर सब हंसने लगे। उन दुकानों की कतार वाली सड़क चढ़ाई की दिशा में बाहर जा रही थी। कुछ चढ़ाई चढ़ कर मैं निचले तरफ की एक दुकान के सीमेंट से बने पक्के प्लेटफोर्म पर चढ़ गया। तभी मुझे विचित्र व दिल को छूने वाले गाजे-बाजे/संगीत की आवाजें सुनाई देने लगीं। वह सजे हुए रथ पर देवी माता की झांकी निकल रही होगी। मैं देवी माता के प्यार मैं इतना बह गया कि मेरी आँखों में प्रेम के आंसुओं की बाढ़ आ गई, और मैं हलकी आवाज में रुक-२ कर रोने लगा। मैं बार-बार अपनी दाहिनी बाजू को फोल्ड करके, उससे अपनी आँखों को पोंछ

रहा था, और आँखों को ढक भी रहा था। वह मैं इसलिए कर रहा था, ताकि कोई मुझे रोता हुआ जानकार अजीब न समझे, और उससे मेरे प्यार की भावना में बहने में रुकावट न पैदा हो। फिर मैंने सोचा कि उस अजनबी स्थान पर मुझे कोई नहीं पहचानता होगा। इसलिए मैं खुले दिल से जोर-जोर से रोने लगा। तभी मुझे एक लेटा हुआ भक्त सड़क पर दिखा, जो रोल होकर ऊपर की तरफ आ रहा था। वह देवी माता का कोई महान भक्त होगा। वह भी मध्यम से सांवले रंग का था। उसने खड़े होकर मुझे बड़ी-बड़ी व भावपूर्ण आँखों से देखा, और वह भी मानो भावना में बह गया। तभी मैंने देखा कि एक सांवले व ताकतवर आदमी ने एक बकरी के बच्चे को एक हाथ से सीधा अपने सिर से भी ऊपर, गले से पकड़ कर उठाया हुआ था, और उसे देवी माता की भक्ति के साथ मिश्रित क्रोध व हिंसक भाव के साथ देख रहा था। किड मिमिया रहा था। उसका दूसरा हाथ सीधा नीचे की ओर था, जिसमें उसने एक बड़ा सा खंजर पकड़ा हुआ था। वह बार-बार देवी माता का नाम ले रहा था। मैं पीछे हट कर दुकान की ओट में आ गया, ताकि वह निर्दयी दृश्य मुझे न दिखता। थोड़ी देर बाद, मैं आगे को खिसका ताकि मैं देख सकता कि क्या वहां पर किड के जुदा किए हुए धड़ और सिर थे, और चारों तरफ फैला हुआ खून था। परन्तु वहां पर सभी किड पहले की तरह ज़िंदा थे, और ख़ुशी से हिल-डुल रहे थे। उससे मैंने चैन की सांस ली, और ख़ुशी महसूस की। शायद सांकेतिक रूप में ही देवी माता को भेंट चढ़ा दी गई थी। तभी अलार्म बजा, और मेरा स्वप्न टूट गया।

उस स्वप्न से मुझे प्राचीनकाल के उन्नत तंत्र, विशेषकर काले तंत्र के बारे में स्पष्ट अनुभूति हुई। प्राचीनकाल में तंत्र एक उन्नत विज्ञान के रूप में था, और जन-जन में व्याप्त था। परन्तु उसके साथ हिंसा, व्यभिचार आदि के बहुत से दोष भी बढ़ जाते थे, विशेषतः जब उसे उचित तरीके से नहीं अपनाया जाता था। तंत्र के दुरूपयोग के कारण ही इसकी अवनति हुई। इस्लाम भी एक प्रकार का अतिवादी तंत्र ही है। यह इतना कट्टर है कि लोग इस बारे बात करने से भी कतराते हैं। इसीलिए यह जस का तस बना हुआ है। हिन्दु तंत्र में भी प्राचीनकाल में नरबली की प्रथा था, परन्तु उसका व्यापक विरोध होने पर उसे बंद कर दिया गया।

प्रेमयोगी वज्र का तंत्र सम्बंधित अपना अनुभव

उसने कुण्डलिनी के विकास के लिए किसी विशेष तंत्र का सहारा नहीं लिया। उसने वही काम किए, जो दूसरे सामान्य लोग भी करते हैं, पर उसने उन कामों को अद्वैतपूर्ण/तांत्रिक दृष्टिकोण के साथ किया। यही तरीका उचित भी है। इससे तंत्र का दुरुपयोग नहीं होता।

कुण्डलिनी एक नाग की तरह

<u>मित्रो, कुछ हफ्ते पहले मुझे एक प्राचीन नाग-मंदिर में सपरिवार जाने का मौक़ा मिला। वह काफी मशहूर है, और वहां पूरे श्रावण के महीने भर मेला लगता है।</u> **उस के गर्भगृह में मूर्तियों आदि के बारे में तो याद नहीं, पर वहां पर नाग का विशाल, रंगीन व दीवार पर पेंट किया गया चित्र दिल को छूने वाला था। वह शेषनाग की तरह था, जिस पर भगवान् नारायण शयन करते हैं। उसके बहुत से फण थे। मुझे वह कुछ जानी-पहचानी आकृति लग रही थी। वहां पर मेरी कुण्डलिनी भी तेजी से चमकने लगी, जिससे मुझे आनंद आने लगा। वह मुझे कुछ रहस्यात्मक पहेली लग रही थी, जिसे मेरा मन अनायास ही सुलझाने का प्रयास करने लगा।**

नाग अन्धकार का प्रतीक

मेरा पहला विश्लेषण यह था कि नारायण (भगवान) आम आदमी को अन्धकार स्वरूप दिखते हैं। माया के भ्रम के कारण उन्हें उनका प्रकाश नजर नहीं आता। इसीलिए अन्धकार के प्रतीक स्वारूप नाग को उनके साथ दिखाया गया है। फिर भी इस विश्लेषण से मैं पूरा संतुष्ट नहीं हुआ।

नाग कुण्डलिनी के प्रतीक के रूप में

मैंयोगाइंडियाडॉटकोम की एक पोस्ट पढ़ रहा था। उसमें कुछ लिखा था, जिसका आशय मैंने यह समझा कि मूलाधार पर नाग साढे तीन चक्र/वलय लगाकर स्थित होता है। वह अपनी पूंछ को मुंह से दबा कर रखता है। जब कुण्डलिनी शक्ति उन वलयों से गुजारी जाती है, तब वह सीधा ऊपर उठकर मेरुदंड से होकर मस्तिष्क तक पहुँच जाता है। उसके साथ कुंडलिनी शक्ति भी होती है।

मैंने इससे निष्कर्ष निकाला कि हमारा नाड़ी तंत्र एक फण फैला कर उठे हुए नाग की तरह दिखता है, और उसी की तरह काम करता है। वैज्ञानिक तौर पर, नाड़ियों में संवेदना भी नाग की तरह लहरदार ढंग से ट्रेवल करती है। वज्र उस नाग की पूंछ है। उसे आधा वलय भी कह सकते हैं। अंडकोष वाला क्षेत्र पहला वलय/कुंडल है। उसके बाहर दूसरा घेरा मांस व तंतुओं का है। तीसरा घेरा हड्डी का है, जो मेरुदंड से जुड़ा होता है। जैसे ऊपर उठे हुए नाग की पीठ के निचले हिस्से में अन्दर की दिशा में एक बैंड/मोड़ होता है, वैसे ही हमारी पीठ के निचले हिस्से (नाभि के बिलकुल अपोजिट) में होता है। उसके बाद दोनों बाहर की ओर उभरते जाते हैं, और फिर दोनों में सिर का मोड़ आता है, जो लगभग एकसमान होता है। नाग के कई सिर इसलिए दिखाए गए हैं, क्योंकि हमारा सिर मेरुदंड से कई गुना चौड़ा व मोटा होता है, तुलनात्मक रूप से।

हमारा नाड़ी तंत्र एक नाग की तरह

रीढ़ की हड्डी के अन्दर नाड़ी को भी हम नाग की तरह अनुभव कर सकते हैं। दोनों में समानता मिलेगी। नाड़ियाँ भी नाग की तरह या रस्सी की तरह ही होती हैं। वज्र की नाड़ी को नाग की पूंछ समझो। वाही आधा चक्र भी हुई। स्वाधिष्ठान चक्र का सम्वेदना क्षेत्र (जहाँ कुण्डलिनी का ध्यान होता है) नाग का पहला चक्र/कुंडल/घेरा है। आसपास के क्षेत्र की नाड़ियाँ भी वहां जुड़ती हैं, वही नाग का पहला घेरा है। दूसरा घेरा उसे कह सकते हैं, जहाँ वह नाड़ी सैक्रल प्लेक्सस/नाड़ियों के जाल से जुड़ती है। तीसरा घेरा उसे कह सकते हैं, जहाँ सैक्रल प्लेक्सस स्पाईनल कोर्ड से मिलती है। वहां पर वह नाग/स्पाईनल कोर्ड ऊपर को खड़ा हो जाता है, और मोटा भी हो जाता है। पीठ के लम्बर क्षेत्र में उसमें पेट की तरफ गड्ढे वाला एक मोड़ आता है। अगला मोड़ ऊपर आता है, सिर के नजदीक। सिर के अन्दर का नाड़ी-पुंज उस सांप के अनेक फण हैं, जो कि स्पाईनल कोर्ड/नाग-शरीर से जुड़े होते हैं।

<u>हमारे शरीर के कुण्डलिनी चक्र भगवान शेषनाग के शरीर के मुख्य बिंदु</u>

<u>इतना गहराई में जाने की जरूरत नहीं है। सीधी सी बात है कि पूरा सैक्रल/सेक्सुअल एरिया नाग के चौड़ की तरह मोटा, गोलाकार व परतदार होता है। इसकी सारी संवेदना वज्र/पूंछ की संवेदना के साथ मिलकर ऊपर चली जाती है। जो नाग के मुख्य उभार बिंदु हैं, वे ही शरीर के सात चक्र हैं। वहीँ पर ध्यान के दौरान कुण्डलिनी ज्यादा चमकती रहती है। मूलाधार चक्र पर वज्र की शिखा जुड़ी होती है। आगे के स्वाधिष्ठान चक्र (वज्र के मूल) पर नाग की पूंछ (वज्र) कुंडलाकार रूप में गुथे हुए नाग के उस मुख्य शरीर से जुड़ी होती है, जो जमीन पर होता है। पीछे के स्वाधिष्ठान चक्र पर नाग के ऊपर उठने से लगभग 90 डिग्री का कोण बनता है। पीछे के नाभि चक्र पर नाग के शरीर के मोड़ का सबसे गहरा बिंदु होता है। पीछे के अनाहत चक्र पर नाग के शरीर में उभार आता है। पीछे के विशुद्धि चक्र में नाग के</u>

फण के मोड़ का सबसे गहरा बिंदु होता है। उसके ऊपर पीछे के आज्ञा चक्र पर फिर से नाग के सिर/फण का उभार आता है। इसके ऊपर पूरा मस्तिष्क/ मस्तिष्क का सबसे ऊपरी स्थान जहाँ एक कुण्डलिनी संवेदना होती है (सिर के ऊपरी सतह के सबसे आगे वाले व सबसे पीछे वाले भाग के बीचोंबीच; यहाँ एक गड्ढा जैसा महसूस होता है, इसीलिए इसे ब्रह्मरंध्र भी कहते हैं) नाग के एक हजार फणों के रूप में होता है। तभी तो उसे सहस्रार (एक हजार भाग वाला) कहते हैं। बीच वाले मुख्य फण पर कुण्डलिनी विद्यमान होती है।

ध्यान के दौरान नाग के साथ कुण्डलिनी-अनुभव

इसी ऊहापोह में मैं एक दिन तांत्रिक विधि से ध्यान कर रहा था। मैं उपरोक्त तरीकों से नाग का ध्यान करने लगा। मुझे उसकी पूंछ/वज्र-शिखा पर कुंडलिनी उभरती हुई और सांप की तरह सरसराहट के साथ उसके फण/मेरे मस्तिष्क तक जाते हुए महसूस होने लगी। मस्तिष्क में वह काफी तेज, शांत व भगवान नारायण की तरह थी। ऐसा लगा कि जैसे भगवान नारायण ही कुंडलिनी के रूप में शेषनाग के ऊपर विलास कर रहे थे। साथ में मुझे उपरोक्त नाग-मंदिर के जैसी अनुभूति मिली। फिर मैं अध्यात्म में नाग के महत्त्व को समझ सका।

नाग का पूजन

लगभग सभी धर्मों में नाग को पवित्र व पूज्य माना जाता है। नारायण नाग पर शयन करते हैं। भगवान शिव के मस्तक पर भी नाग विराजमान है। कई धर्मों में दो नाग आपस में लिपटे हुए दिखाए गए हैं। वे संभवतः यब-युम आसन में बंधे हुए दो तांत्रिक जोड़ीदार हैं।

नाग कुण्डलिनी नहीं है

मैंने कुंडलिनी को नाग के रूप में सुन रखा था। पर वह नाग नहीं है। वह नाग के शरीर/तंत्रिका तंत्र/नर्वस सिस्टम पर नाग की तरह चलती है। वैसे ही, जैसे विष्णु भगवान् नाग नहीं हैं, पर वे नाग के ऊपर विहार करते हैं।

नाग कुण्डलिनी को अतीरिक्त बल देता है

जरूरी नहीं कि कुण्डलिनी जागरण नाग के ध्यान से ही हो। प्रेमयोगी वज्र ने तो नाग का ध्यान नहीं किया था। उसने एकबार कुण्डलिनी को अपने शरीर के अन्दर सीधा ऊपर उठते हुए अनुभव किया था, जैसे एक हैलीकोप्टर हवा में सीधा ऊपर उठता है। नाग के ध्यान से तो केवल उसे उठने के लिए अतिरिक्त बल ही मिलता है। इसीलिए तो अधिकांश बड़े देवी-देवताओं के साथ नाग दिखाया गया होता है।

शेषनाग के सिर पर पृथ्वी

ऐसी पौराणिक मान्यता है कि शेषनाग/मल्टी हूडिड सर्पेंट ने अपने सिर पर सारी धरती को धारण किया हुआ है। वास्तव में यह शेषनाग हमारा अपना उपरोक्त तंत्रिका तंत्र ही है। सारी धरती हमारे इसी तंत्रिका तंत्र/मस्तिष्क में अनुभव के रूप में ही है। वास्तव में स्थूल और बाहर तो कुछ भी नहीं है। यही अंतिम वाक्य अध्यात्म का मूल मन्त्र है।

संवेदना के ऊपर कुण्डलिनी का आरोपण

हरेक शारीरिक संवेदना नाड़ी से होकर मस्तिष्क को जाती है। जब उस पर कुण्डलिनी/एक विशेष मानसिक चित्र का आरोपण किया जाता है, तब वह भी उसके साथ मस्तिष्क में पहुँच जाती है। शरीर की सर्वाधिक तीव्र व आनंदप्रद संवेदना वज्र-शिखा की है। इसलिए उसपर आरोपित कुण्डलिनी मस्तिष्क में जीवंत हो जाती है। इसीलिए कहा जाता है कि कुण्डलिनी मूलाधार में शयन करती है। वास्तव में मूलाधार चक्र में वज्र-शिखा को ही दर्शाया गया है, दोनों एक काल्पनिक रेखा से जुड़ते हुए। उसे ही नाग की पूंछ कहते हैं। आम आदमी में वहां पर कुण्डलिनी सोई हुई होती है। इसका अर्थ है कि वहां पर कुण्डलिनी जागृत नहीं हो सकती। जागरण के लिए उसे मस्तिष्क में ले जाना पड़ता है। नाग ने अपनी पूंछ को मुंह में दबाया होता है। इसका अर्थ है कि कुण्डलिनी वज्र से शुरू होकर वीर्यपात के रूप में वज्र पर ही वापिस आ जाती है, और वहां से बाहर बर्बाद हो जाती है। अपने कुंडल खोलकर नाग के सीधे खड़े होने का मतलब है कि कुण्डलिनी को सीधी दिशा में वज्र शिखा से मेरुदंड से होकर मस्तिष्क तक ले जाया जाता है, बार-2 सैक्सुअल क्षेत्र में घुमाया नहीं जाता। ऐसी भावना की जा सकती है कि पूरे यौन क्षेत्र (जो एक फण उठाए हुए बड़े नाग के जमीनी ढेर/घड़े जैसी आकृति का है) में चारों तरफ से डूबी/सरोबार कुण्डलिनी उससे शक्ति लेकर सीधी ऊपर फण तक चली जाती है। फण/मस्तिष्क पर कुण्डलिनी को मजबूत किया जाता है, और उसे वीर्यपात के रूप में वज्र तक

वापिस नहीं उतारा जाता। हालांकि, कुंडलिनी को धीरे-धीरे सामने/आगे के चक्रों के माध्यम से नीचे ले जाया जा सकता है, जिससे वे मजबूत हो जाते हैं। संस्कृत शब्द कुण्डलिनी का अर्थ है, कुंडल/कोइल वाली। अर्थात एक मानसिक आकृति जो कुंडल/नाग पर विराजमान है।

कुंडलिनी एक शिल्पकार के रूप में कार्य करती है, जो कि खराब मौसम द्वारा उत्पन्न द्वैत को अद्वैत में परिवर्तित करती है, जिससे यह बदलते मिजाज वाले मौसम के हानिकारक प्रभावों (शीतकालीन अवसाद सहित) से हमारी रक्षा करती है

दोस्तों, इस साल मौसम ने आम लोगों को बहुत परेशान किया। कड़ाके की ठण्ड बार-२ हमला करती रही। पर मुझे मेरी कुण्डलिनी ने इस समस्या का ज़रा भी आभास नहीं होने दिया। वास्तव में कोई मौसम खराब नहीं होता। हरेक मौसम में अपनी खूबसूरती होती है। गर्मियों में तनावहीनता, ढीलेपन, हल्केपन व शान्ति का एक अलग ही अहसास होता है। इसी प्रकार सर्दियों में चुस्ती का अहसास होता है। बरसात के मस्तीपने का एक अलग ही अंदाज होता है।

बदलता मौसम शरीर और मन के स्वास्थ्य के लिए हानिकारक होता है

हमारे शरीर और मन को मौसम के अनुसार अपने आपको ढालने के लिए कुछ दिनों के समय की जरूरत पड़ती है। वे दिन शरीर और मन के लिए जोखिम भरे होते हैं, क्योंकि उन दिनों में वे पुराने मौसम के अनुसार चल रहे होते हैं, और नए मौसम से सुरक्षा के लिए जरूरी बदलाव उनमें नहीं आए होते हैं। ऐसे जोखिम भरे दिनों में कुण्डलिनी हमें अतिरिक्त सुरक्षा प्रदान कर सकती है।

मौसम में ऐसे अचानक बदलाव पहाड़ों में बहुत होते हैं। वहां धूप लगने पर एकदम से गर्मी बढ़ जाती है, और ज़रा से बादल के टुकड़े से सूरज के ढक जाने पर एकदम से ठण्ड पड़ जाती है। ऐसा लगातार चलता रहता है। जैसे-२ पहाड़ों की ऊँचाई बढ़ती जाती है, मौसम के बदलाव भी बढ़ते जाते हैं। इसीलिए तो तिब्बत में तांत्रिक योग बहुत कामयाब और लोकप्रिय हुआ, क्योंकि वही एकदम से कुण्डलिनी को चमकाने में सक्षम है।

कुण्डलिनी मौसम के बदलाव से उत्पन्न द्वैत को अद्वैत में बदल देती है

यह तो हम पहले ही सिद्ध कर चुके हैं कि अद्वैत और कुण्डलिनी का चोली-दामन का साथ है। बदलता मौसम उतनी मार शरीर पर नहीं करता, जितनी मन पर करता है। बदलता मौसम खुद भी द्वैत-रूप (अच्छा-बुरा में बंटा हुआ) है, इसलिए वह मन को भी द्वैत से भर देता है। मन अच्छाई और बुराई (प्रकाश और अन्धकार) के बीच में झूलने लगता है। मन के रोगों की जड़ द्वैत ही तो है। और शरीर के रोगों की जड़ बीमार मन ही है।

नियमित कुण्डलिनी योग से अद्वैत लगातार पैदा होता रहता है, जो बदलते मौसम से पैदा द्वैत को मन पर हावी नहीं होने देता। यहाँ तक कि बदलते मौसम के द्वैत को भी अद्वैत में बदल कर प्रचंड अद्वैत पैदा करता है। वास्तव में द्वैत से ही अद्वैत निर्मित होता है, केवल कुण्डलिनी के रूप में कुशल कारीगर की जरूरत होती है। इसीलिए तो मानव इतिहास के शुरू से ही लोग योग साधना के लिए पहाड़ों का रुख करते आ रहे हैं। यह इसलिए, क्योंकि वहां बहुत द्वैत होता है, जिसे कुण्डलिनी-मिस्त्री अद्वैत में बदल देता है।

कुंडलिनी सर्दियों के अवसाद के खिलाफ प्रभावी उपकरण है

विशेष रूप से सुबह के समय उज्ज्वल प्रकाश का अभाव सर्दियों के अवसाद को उत्पादन करता है। कुंडलिनी का जब सुबह-सुबह ध्यान किया जाता है, तब मन में चेतना की तीव्र उज्ज्वल रोशनी पैदा होती है। यह अवसाद को रोकता है, और पहले से पैदा हुए सर्दियों के अवसाद को ठीक करता है।

कुण्डलिनी से प्रेरित होकर ही धर्म या परंपरा का निर्माण हुआ, जिससे पैदा होने वाले अद्वैत के नशे के अन्दर कुछ स्वार्थी धार्मिक कट्टरपंथियों ने नफरत का इतना जहर घोल दिया, जिससे पैदा होने वाली हिंसा से कई सभ्यताएं व संस्कृतियाँ समूल नष्ट हो गईं, और कई नष्ट होने की कगार पर हैं

हम किसी भी धर्म का समर्थन या विरोध नहीं करते हैं। हम केवल धर्म के वैज्ञानिक और मानवीय अध्ययन को बढ़ावा देते हैं।

दोस्तों, अभी हाल ही में दिल्ली में आम आदमी पार्टी (AAP) के विधायक ताहिर हुसैन के घर की छत से बहुत से देसी हथियार बरामद हुए हैं, जिनसे दिल्ली में मासूम लोगों की भीड़ को निशाना बनाया गया, जिससे बहुत से लोगों की जानें भी गईं। वास्तव में वह एकाएक नहीं हुआ। उसके लिए कट्टरपंथियों की योजना बड़े सुनियोजित तरीके से लम्बे समय से चल रही थी। वास्तव में उस साजिश को रचने के लिए इस्लामिक कट्टरपंथियों के द्वारा कुण्डलिनी-सिद्धांत का ही सहारा लिया गया, हालांकि दुनिया के सामने ये कुण्डलिनी को सिरे से नकारते हैं।

कुण्डलिनी एक शक्ति है, जो कुछ धार्मिक परंपरागत मामलों में अच्छे कामों की तरह ही बुरे काम भी करवा सकती है

हमें इस भ्रम में कभी नहीं रहना चाहिए कि कुण्डलिनी आदमी से बलपूर्वक अच्छे काम करवाती रहती है। यह सत्य है कि कुछ सीमा तक कुण्डलिनी आदमी को अच्छे काम करने के लिए प्रेरित करती है। परन्तु अंतिम निर्णय लेने की स्वतंत्रता आदमी के अपने पास ही होती है। आदमी कुण्डलिनी के इशारे को बलपूर्वक नजरअंदाज करके कुण्डलिनी शक्ति से बुरे काम को भी अंजाम दे सकता है। यद्यपि उससे उसे बहुत बड़े पाप का भागी बनना पड़ता है। कुण्डलिनी का ऐसा ही दुरुपयोग कुछ काले तांत्रिक करते हैं। तभी तो कहा है कि कुण्डलिनी तंत्र यदि स्वर्ग दे सकता है, तो नरक भी दे सकता है। परन्तु डरने की बात नहीं। ऐसा अक्सर तभी होता है, जब लम्बी परंपरा के वशीभूत होकर कुण्डलिनी के इशारे को लम्बे समय तक दबाया जाता है। ऐसी ही एक विकृत परम्परा धार्मिक कट्टरपंथियों व उग्रपंथियों की है, जो धर्म के नाम पर अमानवीय काम करते हैं। वैसे कुण्डलिनी आदमी को सुधरने के अवसर लागातार देती रहती है। जब-२ आदमी गलत काम करने वाला होता है, तब-२ यह एक सच्चे गुरु की तरह आदमी के सामने आने लगती है, और उसे समझाने जैसे लगती है। अच्छे काम करने पर यह शाबाशी भी देती है।

कुण्डलिनी को आसानी से सबके लिए उपलब्ध करवाने के लिए ही नियमबद्ध परंपरा या धर्म का निर्माण होता है

परंपरा या धर्म की रचना भी कुण्डलिनी सिद्धांत से ही प्रेरित थी। आम आदमी कुण्डलिनी को नहीं समझ सकता था। इसलिए धर्म या परम्परा के नाम से आदमी को बाँधने वाला मानसिक खूंटा बनाया गया। उसमें आदमी के हरेक काम व व्यवहार के नियम बनाए गए, जिनसे आदमी का मन हर समय उस धर्म विशेष से बंधा रहता। उससे आदमी नशे के जैसी मस्ती व आनंद में डूबा रहने लगा। अवसादरोधी (एंटीडिप्रेसेंट) दवाओं (ड्रग्स) को खाने से भी वैसा ही कुण्डलिनी जैसा नशा महसूस होता है। तभी तो साम्यवादी लोग धर्म को एक प्रकार का नशा मानते हुए उसका विरोध करते हैं। हालांकि नशे से उत्पन्न अद्वैत और कुण्डलिनी से उत्पन्न अद्वैत के बीच में गुणवत्ता का बहुत फर्क होता है।

इतिहास गवाह है कि धर्म के नशे से कई सभ्यताएं रक्तरंजित हुईं

धर्म के नशे के कारण आदमी अंधा जैसा हो गया। वह धर्म पर इतना विश्वास करने लगा कि उसे उसमें बताई गई गलत बातें भी सही लगने लगीं। इसी धर्म के नशे की कड़वाहट में छुपाकर कई स्वार्थी व अमानवीय तत्त्वों ने इतना ज्यादा नफरत का जहर घोला, जिससे कई संस्कृतियाँ व सभ्यताएं रक्तरंजित हुईं।

कुण्डलिनी के विकास के लिए कोरोना (कोविड-19) से सहायता प्राप्त करना; नई दिल्ली की निजामुद्दीन-मस्जिद में तबलीगी जमात के मरकज की घटना; एक आध्यात्मिक-मनोवैज्ञानिक विश्लेषण

हम किसी भी धर्म का समर्थन या विरोध नहीं करते हैं। हम केवल धर्म के वैज्ञानिक और मानवीय अध्ययन को बढ़ावा देते हैं।

इस पोस्ट में दी गई समाचारीय सूचना को सबसे अधिक विश्वसनीय माने जाने वाले सूत्रों से लिया गया है। इसमें लेखक या वैबसाईट का अपना कोई योगदान नहीं है।

दोस्तों, अभी दुनियाभर में लौक डाऊन का सख्ती से पालन किया जा रहा है, ताकि कोरोना महामारी से बचा जा सके। भारत में भी पूरे देश में 14 अप्रैल तक संपूर्ण लौकडाऊन है। यह लौकडाऊन 21 दिनों का है। सभी लोग अपने घरों में कैद हैं। स्वास्थ्य विशेषज्ञ कह रहे हैं कि उससे कुछ दिनों के लिए तो महामारी कम हो जाएगी, पर लगभग 45 दिनों के लगातार लौकडाऊन से ही महामारी से पूरी तरह से बचा जा सकता है।

ऐसी लौकडाऊन की स्थिति में इस्लाम को मानने वाली कट्टरपंथी तबलीगी जमात के लोग कोरोना वायरस से दोस्ती निभा रहे हैं। नई दिल्ली में अनेक कोरोना संक्रमित देशों के लोग अभी हाल ही में इकट्ठे हुए, जब नई दिल्ली में कर्फ्यू लगा हुआ था। ये लोग टूरिस्ट वीजा पर भारत आए हुए थे, पर यहाँ पर वे धर्म-प्रचार कर रहे थे, जो कि अवैध है। इन्होंने पुलिस की चेतावनी को भी नहीं माना। अनेकों बार पुलिस भी इनसे डरती है, क्योंकि ये सामने तो खुली हिंसा पर उतारू हो जाते हैं, पर पीठ के पीछे प्रताड़ित होने का ढोंग करते हैं। अधिकाँश देशी-विदेशी मीडिया भी इन्हें प्रताड़ित की तरह प्रस्तुत करते हैं। सूक्ष्म परजीवियों (कोरोना वायरस) की भी शरीर के अन्दर ऐसी ही स्ट्रेटेजी होती है। मीडिया टेप के सामने आने से यह खुलासा हुआ है कि निजामुद्दीन की उस तबलीगी मस्जिद में उसके अध्यक्ष मौलाना साद लोगों को भड़का रहा है। वह सभी को कह रहा है कि मुसलामानों को आपस में नजदीकी बनाए रखना चाहिए, और एक थाली में खाना खाना नहीं छोड़ना चाहिए। और कहता है कि कोरोना वायरस का प्रोपेगेंडा मुसलमानों को अलग-थलग करने के लिए फैलाया गया है। अल्लाह ने अगर कोरोना से मौत लिखी है, तो कोई नहीं बचा सकता। मस्जिद में मरने से अच्छा क्या काम हो सकता है। अल्लाह को मानने वाले डाक्टर से ही अपना इलाज करवाएं। फिर वे लोग उस मस्जिद से निकलकर पूरे देश में फैल गए। उनमें से बहुत से लोग कोरोना से संक्रमित पाए गए। कुछ मर गए। बहुत से लोग अभी भी मस्जिद आदि में छुपे हुए हैं, जो पकड़ में नहीं आ रहे हैं। यहाँ तक कि जब कुछ लोगों को क्वारनटाइन में रखने का प्रयास किया गया, तो वे हरेक हिदायत को ठुकराने लगे, दुर्व्यवहार करने लगे, पत्थरबाजी करने लगे (कुछ तो फायरिंग करते हुए भी सुने गए), और कर्मचारियों पर थूकने लगे, ताकि कोरोना वायरस हर जगह फैल सके। इस घटना के बाद पूरे देश में कोरोना मरीजों की संख्या एकदम से बढ़ी है, जिसने लौकडाऊन की सफलता पर प्रश्नचिन्ह लगा दिया है।

कुण्डलिनी जीवन और मृत्यु के संगम में निहित है

धार्मिक शास्त्रों में मृत्यु से संबंधित युद्ध, दुर्भिक्ष आदि आपदाओं की बहुत सी कहानियां आती हैं। साथ में, उन्हीं शास्त्रों में ही जीवन से भरपूर कथा-रस भी बहुतायत में है। इससे जीवन और मृत्यु के संगम की अनुभूति होती है। उसी संगम को अद्वैत कहते हैं। उसी अद्वैत के साथ कुण्डलिनी भी विद्यमान होती है। यह धार्मिकता कथा-कहानियों तक ही सीमित रहनी चाहिए। जब उन्हें असली जीवन में हूबहू उतारने का प्रयास किया जाता है, तब उसे अतिवादी या कट्टर धार्मिकता कहा जाता है।

कुण्डलिनी की प्राप्ति के लिए अति लालसा से प्रेरित होकर ही अमानवीय काम होते हैं

इसी वजह से ही कई बार कुण्डलिनी योगी नीरस, उबाऊ, कट्टर, अमानवीय, व उग्रवादी जैसे लगते हैं। ऐसा इसलिए लगता है, क्योंकि उनमें मृत्यु का भय नहीं होता। अपनी कुण्डलिनी के प्रभाव से वे जीवन-मृत्यु में, यश-अपयश में, व सुख-दुःख में समान होते हैं। उनके मन में यह समता कुण्डलिनी योग साधना से छाई होती है। परन्तु धार्मिक कट्टरवादी इस समता/अद्वैत को अमानवीय कामों से पैदा करते हैं। वे गलत काम करते हैं, ताकि उनके मन से मृत्यु, अपयश व दुःख का भय ख़त्म हो ज्जाए। इससे वे भी जीवन-मृत्यु में, यश-अपयश में, व सुख-दुःख में समान रहने लगते हैं। इस अद्वैत से उनके मन में कुण्डलिनी अप्रत्यक्ष तरीके से आकर बस जाती है।

मतलब साफ है कि कुण्डलिनी योगी कुण्डलिनी की मदद से अद्वैत को प्राप्त करता है, परन्तु धार्मिक कट्टरवादी आमानवीय कामों से अद्वैत को प्राप्त करता है। किसी कारणवश धार्मिक कट्टरवादी कुण्डलिनीयोग नहीं कर पाते हैं।

उनके पास मध्य मार्ग के अनुसार संतुलित व तांत्रिक जीवन जीने का अवसर होता है, पर वे उस पर विशवास नहीं करते, और उसे बहुत धीमा तरीका भी मानते हैं। आध्यात्मिक मुक्ति के प्रति इसी अति लालसा से प्रेरित होकर वे अमानवतावादी बन जाते हैं। उनमें से बहुत कम लोग ही सफल हो पाते हैं, बाकि सारे तो नरक की आग में गिर जाते हैं। तभी तो कई धर्मों में पुनर्जन्म को माना गया है, ताकि आदमी निरुत्साहित होकर अमानवीय न बन जाए, और वह यह समझ सके कि उसकी साधना की कमी उसके अगले जन्म में पूरी हो जाएगी।

कुण्डलिनी भी आत्महत्या के लिए प्रेरित कर सकती है?

अभी कुछ दिन पहले बौलीवुड के **मशहूर सितारे सुशांत सिंह राजपूत की आत्महत्या का मामला** सामने आया। सबसे पहले हम उनकी आत्मा की शान्ति की कामना करते हैं। वह बुलंदियों पर था। बुलंदियां कुण्डलिनी से हासिल होती हैं। तो क्या कुण्डलिनी भी आत्महत्या की वजह बन सकती है? इस पोस्ट में हम इसका विश्लेषण करेंगे।

अवसाद एक छुआछूत वाले रोग की तरह है, जिसे कुंडलिनी योग की सहायता से दूर भगाया जा सकता है: एक अदभुत आध्यात्मिक मनोविज्ञान

एक ब्लयू व्हेल नाम की वीडियोगेम आई थी, जिसे खेलते हुए बहुत से बच्चों ने आत्महत्या की थी। सुशान्त ने एक आत्महत्यारे की पेंटिंग अपनी सोशल मीडिया वाल पर कई दिनों से लगाई हुई थी। उनकी छिछोरे फिल्म में वह अपने बेटे को इस रोग से बचने के लिए पूरी फिल्म में समझाते रहे। इसी तरह, एक खबर के अनुसार एक बिहार राज्य का लड़का देर रात तक अकेले में सुशांत की खुदकुशी की खबरें देखता रहा और सुबह को वह भी लटका हुआ मिला। यह सब मन का खेल है। ऐसे आत्महत्या से संबंधित चिंतन से विशुद्धि चक्र पर एक कसाव सा पैदा होता है। गला दबा हुआ सा लगता है, और गले पर एक घुटन सी महसूस होती है। कुंडलिनी योगी को तो विशुद्धि चक्र पर ध्यान करने की पहले से ही आदत होती है। वह बार-2 वहां कुंडलिनी को फोकस करता है। उससे गले को जीवनी शक्ति मिलती है, और कुंडलिनी भी मजबूत होती है। गले की घुटन में गेस्ट्राइटिस का भी रोल हो सकता है। तनावपूर्ण और अनहेल्थी जीवनशैली से गेस्ट्राइटिस होती है। आजकल इसके इलाज के लिए सुरक्षित दवाई मौजूद है। ऐसी दवाइयां योग अभ्यास करने वाले लोगों को नुकसान पहुंचा सकती हैं। इसलिए इनका आधा डोज खाकर उनका अपने ऊपर असर परख लेना चाहिए। अवसाद-रोधी दवाएं तो बहुत से लोगों का अवसाद बढ़ा भी सकती हैं, क्योंकि उनसे आदमी की स्मरणशक्ति व कार्यक्षमता काफी घट जाती है। वे दवाईयां लम्बे समय से बनी हुई कुण्डलिनी को नुकसान पहुंचाती हैं, जिससे उससे जुड़े सभी काम दुष्प्रभावित हो सकते हैं। अगर किस्मत अच्छी हो, और परिश्रम किया जाए, तो उससे नए कुण्डलिनी-चित्र के निर्माण का और उसे जागृत करने का सुअवसर भी प्राप्त होता है। नई कुंडलिनी से एडजस्ट होने में समय लगता है। सूत्रों के अनुसार, सुशांत भी लम्बे अरसे से अवसाद रोधी दवाएं खा रहे थे, हालांकि कुछ समय से उन्होंने उन्हें खाना छोड़ा हुआ था। जितना हो सके मौन रहना चाहिए और जीभ को तालु के साथ टाईटली जोड़कर रखना चाहिए ताकि मस्तिष्क की कुंडलिनी या विचार आसानी से नीचे बह सके। जिसने आत्महत्या की भावनाओं के बीच में रहते हुए भी उसे दबा दिया, वह असली योगी है।

सुशांत सिंह राजपूत कई बार अपनी स्वर्गवासिनी माँ की याद में खोकर भावुक हो जाते थे

वह अपनी माँ से सर्वाधिक प्रेम करते थे। यह बहुत अच्छी बात है, और बड़ों-बुजुर्गों से प्यार होना ही चाहिए। उनकी आखिरी सोशल मीडिया पोस्ट भी अपनी माँ की याद की थी। ऐसा हमें मीडिया से सुनने को मिला। सर्वाधिक प्रिय वस्तु ही मन में निरंतर बस कर कुण्डलिनी बन जाती है। इसका अर्थ है कि उनके मन में अपनी माँ की छवि कुण्डलिनी के रूप में बसी हुई हो सकती है। इसीसे उन्हें निरंतर सफलताएं मिलती गईं। वैसे तो पूर्वजों व पारिवारिक लोगों या बुजुर्गों से संबंधित शुद्ध कुंडलिनी हमेशा शांत और कल्याणकारी ही होती है। परंतु कई बार वैसी कुंडलिनी का सहारा लेकर इश्क-मोहब्बत वाली कुंडलिनी मन पर हावी हो जाती है। वह बहुत भड़कीली होती है और कई बार खतरनाक हो सकती है। सुशांत का कुछ स्टार लड़कियों से प्यार और ब्रेकअप भी सुनने में आया। कुंडलिनी को सकारात्मक व सही दिशा देने के लिए एक स्थिर दाम्पत्य जीवन बहुत जरूरी होता है। हालांकि सिने जगत में ऐसा चलता रहता है, पर सभी एक जैसे नहीं होते, और ऐसा सभी को सूट भी नहीं करता। इश्क-मुहब्बत के चक्कर में हुई आत्महत्याएं इसी कुदरती कुण्डलिनी से सम्बंधित होती हैं। डॉक्टर के अनुसार वह बाईपोलर डिसीस से पीड़ित थे। यह कुण्डलिनी-अवसाद का ही एक दूसरा रूप है। इसमें तीव्र उत्तेजना के दौर के बाद तीव्र अवसाद का दौर आता है।अगर ढंग से किया जाए, तो कुंडलिनी योग ही बाइपोलर रोग का सबसे बढ़िया इलाज है। कथित कलाकार ने थोड़े दिनों के लिए उसे इलाज के लिए किया था, फिर छोड़ दिया था।अगर ढंग से किया जाए, तो कुंडलिनी योग ही बाइपोलर रोग का सबसे बढ़िया इलाज है। कथित कलाकार ने थोड़े दिनों के लिए उसे इलाज के लिए किया था, फिर छोड़ दिया था। कुंडलिनी मन के विकारों को बाहर निकाल रही होती है। वास्तव में विकार ही अवसाद पैदा कर सकते हैं, कुंडलिनी नहीं।कुंडलिनी अवसाद से बचने के लिए हर समय काम में व्यस्त रहना चाहिए। कथित कलाकार कई दिनों से कामधाम छोड़कर कमरे में बंद हो गए थे।

किसीसे बिछुड़ने का गम भी कुंडलिनी अवसाद का ही एक प्रकार है। उस गम को खुशी में बदलने के लिए बिछुड़े हुए व्यक्ति के मानसिक चित्र को कुंडलिनी बनाकर कुंडलिनी योग साधना शुरु कर देनी चाहिए।

कुण्डलिनी से उस सिने कलाकार की आध्यात्मिक प्रगति भी तीव्रता से हो रही थी

प्रत्यक्षदर्शी कहते हैं कि वे अध्यात्मिक रुझान वाले व बेहद संवेदनशील व्यक्ति थे। उनकी कम उम्र के शरीर में एक बुजुर्ग का दिमाग था। ऐसे गुण कुण्डलिनी से ही उत्पन्न होते हैं।

कुण्डलिनी आदमी को जीवन के प्रति लापरवाह बना सकती है

कुण्डलिनी के कारण आदमी अद्वैत से भर जाता है। इसका मतलब है कि उसे रात-दिन, जीवन-मृत्यु, दोस्त-दुश्मन, सुख-दुःख आदि सभी विपरीत चीजें एकसमान जैसी लगने लगती हैं। इससे यह अर्थ निकलता है कि आदमी को किसी चीज से डर नहीं लगता। जब कोई आदमी अपनी मौत से नहीं डरेगा, तब वह अपनी जिंदगी के प्रति लापरवाह हो जाएगा। वही लापरवाही जब सीमा पार कर जाती है, तब वह आत्महत्या का रूप ले लेती है। वास्तव में तो अद्वैत से सतर्कता बढ़ती है, लापरवाही नहीं। पर कई लोग अद्वैत को गलत तरीके से ग्रहण करते हैं।

कुण्डलिनी को संभालने के लिए बाहरी सहारे की आवश्यकता होती है

उपरोक्त स्थिति में आदमी को बाहरी सहारा मिलना चाहिए। लोगों से मेल-जोल जारी रहना चाहिए। परिवार व दोस्तों के साथ खूब समय बिताना चाहिए। घूमना-फिरना चाहिए। सामाजिक समारोहों व कार्यों में शामिल होते रहना चाहिए। इससे कुण्डलिनी योगी को लोगों के मन में जीवन के प्रति लगाव नजर आएगा। लोगों के मन में अनहोनी का डर नजर आएगा। इससे उसे सही ढंग से जीवन जीने की प्रेरणा मिलेगी। आजकल के कोरोना लौकडाऊन ने बहुत सारे लोगों से यह सामाजिक सहारा छीन लिया है।

गुरु कुण्डलिनी के लिए सर्वोत्तम सहारा है

गुरु कुण्डलिनी के दौर से पहले ही गुजर चुका होता है। इसलिए उसे सब कुछ पता होता है। इसलिए वह नए-२ कुण्डलिनी योगी को अकेला ही पूरे समाज की शक्ति दे सकता है।

कुण्डलिनी अवसाद ही समुद्रमंथन से निकला हुआ विष है

समुद्रमंथन का वर्णन हिन्दू पुराणों में मिलता है। मंदराचल पर्वत कुण्डलिनी है। कुण्डलिनी-ध्यान वासुकी नाग है। मन समुद्र है। उससे निकली हुई अच्छी चीजें अच्छे विचार हैं, जो आदमी को देवता बनाते हैं। उससे निकली हुई गन्दी चीजें गंदे विचार हैं, जो आदमी को राक्षस बनाते हैं। मन के देवताओं और राक्षसों के परिश्रम व सहयोग से मंथन चलता रहता है। अंत के करीब जो विष निकलता है, वह कुण्डलिनी से पैदा हुआ अवसाद है। उसे पीने वाले शिव गुरु हैं। वे उसे गले में धारण करते हैं। इसका मतलब है कि वे शिष्य का अवसाद हर लेते हैं, पर स्वयं उससे प्रभावित नहीं होते। उसके बाद जो अमृत निकलता है, वह कुण्डलिनी से मिलने वाला आनंद है। समुद्र मंथन से जो लक्ष्मी मिलती है, उसका अर्थ तांत्रिक प्रतीत होता है। वह भगवान् नारायण तक ले जाती है।

कुण्डलिनी योग से सम्बंधित मेरा अपना अनुभव

जो मैंने इस पोस्ट में लिखा, वह मेरा अपना ही कुण्डलिनी अवसाद का, और उससे बाहर निकलने का अनुभव है। खुशकिस्मती से मुझे एक पड़ौसी सज्जन का सहारा मिल गया था, जिनके घर मैं बिना पूछे और खुलकर आ-जा सकता था, तथा जिनके साथ जितना चाहे समय बिता सकता था। दूसरे अधिकाँश लोग तो मुझे मंगल ग्रह से आए हुए प्राणी की तरह ट्रीट करते थे। अच्छा जोक कर दिया।

कुण्डलिनी मेडिटेशन की अवस्था ज्ञान की चरम अवस्था होती है, अवसाद तो वह दूसरे लोगों को लगती है

कुण्डलिनी अवसाद सापेक्ष होता है। स्वयं कुण्डलिनी योगी को वह ज्ञान की शीर्ष अवस्था लगती है। कुण्डलिनी के अन्य जानकारों को भी यह ऐसी ही लगती है। कुण्डलिनी से अनजान लोगों को ही वह अवसाद लगती है। इसलिए वैसे लोग कुण्डलिनी योगी की आलोचना करते रहते हैं, और उसे अवसाद से भर देते हैं। लोग तो उसके भले के लिए उसकी आलोचना करते हैं ताकि वह कुंडलिनी के बिना जीना सीख सके, पर वह इस बात को अक्सर समझ नहीं पाता। अवसाद उसे कुंडलिनी को मन से हटाने से होता है, क्योंकि उसे कुंडलिनी के नशे की लत लग जाती है। कुंडलिनी प्रकाश के सामने तो अवसाद का प्रश्न ही पैदा नहीं होता। इसीलिए या तो कुंडलिनी को किसी हालत में नहीं छोड़ना चाहिए या फिर कुंडलिनी से आसक्ति नहीं होनी चाहिए और उसके बिना जीने की आदत भी बनी रहनी चाहिए। नहीं तो वैसा ही अवसाद पैदा होने की संभावना है, जैसा नशेड़ी में एकदम से नशा छोड़कर पैदा होता है।

जितनी ज्यादा रौशनी होगी, जब वह बुझेगी तब उतना ही ज्यादा अंधेरा भी होगा। कुंडलिनी शरीर औऱ मन की शक्ति को खींचती है। उससे पैदा हुई कमजोरी ही अवसाद की वजह बन सकती है। इसीलिए तंत्र में उस कमजोरी से बचने के लिए पंचमकारों के सेवन का प्रावधान है।इसीलिए अच्छी संगति को अपनाने पर जोर दिया गया है। अच्छा हो, यदि औरों के रास्ते में फूल न बो सको, तो कांटे भी नहीं बोने चाहिए। इससे फूल खुद उग आएँगे। महात्मा बुद्ध ने भी ऐसा ही कहा है।

यह ध्यान रखना चाहिए कि कुंडलिनी अवसाद प्राकृतिक तौर से उभरी कुंडलिनी से ज्यादा होता है। यद्यपि प्राकृतिक कुंडलिनी बहुत तेजी से आध्यात्मिक विकास करती है। इसलिए प्राकृतिक कुंडलिनी के इस खतरे से बचे रहने के लिए कृत्रिम कुंडलिनी योग करते रहना चाहिए।

एक पुस्तक जिससे मुझे कुण्डलिनी अवसाद से पूरी तरह से बाहर आने में मदद मिली

वह पुस्तक है “शरीरविज्ञान दर्शन”।

कुंडलिनी के लिए शिवलिंग के रूप वाले गुम्बदाकार या शंक्वाकार पर्वत का महत्त्व: वर्ष 2020 की अंतिम ब्लॉग पोस्ट

दोस्तों, करोल पहाड़ हिमालय का एक बेहद आकर्षक पहाड़ है। यह शिवलिंग के जैसे आकार का है। मैदानी क्षेत्रों से ऊपर चढ़ते समय यह ऊंचे पहाड़ों के प्रवेशद्वार पर स्थित प्रतीत होता है। मेरी कुंडलिनी से जुड़े इसके योगदान पर वैज्ञानिक चर्चा हम आज इस पोस्ट में करेंगे।

करोल पहाड़ के साथ मेरा आजन्म रिश्ता

मैं इसी पहाड़ की नजर में पैदा हुआ, और इसीके सामने बड़ा हुआ। यह आसपास के क्षेत्र में सबसे ऊंचा पहाड़ एक साक्षी की तरह हर समय मेरे सामने खड़ा रहा। यह हमेशा मेरे कर्मों की गवाही देता रहा, और मुझे सन्मार्ग पर प्रेरित करता रहा। इसने मुझे कभी अहंकार नहीं करने दिया। जैसे ही मुझे कभी थोड़ा सा भी अहंकार होने लगता था, तो वह कहता था, "मैं तो सबसे बड़ा और ऊँचा हूँ, फिर भी मैं कभी अहंकार नहीं करता; फिर तू मेरे सामने कीड़े जितना छोटा होकर भी क्यों अहंकार कर रहा है"। उसके इस ताने से मेरा अहंकार समाप्त हो जाता था। उससे मेरे मन की कुंडलिनी चमकने लग जाती थी। इस पहाड़ पर मेरा आना-जाना लगा रहता था, क्योंकि मेरे ज्यादातर मित्र, रिश्तेदार व आजीविका के साधन इसी पहाड़ पर होते थे। प्रतिदिन सुबह जब मैं सूर्य को जल चढ़ा रहा होता था, तब वह इसी पहाड़ के पीछे से उग रहा होता था। इससे वह पूजा का जल उस पहाड़ को भी स्वयं ही लग जाता था। इससे अनजाने में ही वह पहाड़ मेरा इष्ट देवता और मित्र बन गया था।

समय के साथ करोल पहाड़ के साथ मेरी कुंडलिनी मजबूती से जुड़ती गई

सूर्य को जल देते समय मेरे मन में उमड़ने वाली कुण्डलिनी करोल पहाड़ के साथ स्वयं ही जुड़ती गई। सूर्य की तरफ तो सीधा देखा नहीं जा सकता, और न ही सूर्य देव दिनभर नजरों के सामने रहते हैं। परन्तु वह पहाड़ तो हमेशा नजरों के सामने रहता था। उसकी तरफ देर तक सीधी नजर से भी देखा जा सकता था। काम करते हुए जरा सा सिर ऊपर उठाता, तो वह पहाड़ अनायास ही दृष्टिपटल पर आ जाता था, और उसके साथ ही उससे जुड़ी हुई मेरी कुंडलिनी भी। इस तरह से मेरी कुण्डलिनी मेरे जीवनभर मेरे साथ लगातार बनी रही, और उत्तरोत्तर बढ़ती रही। परिणामस्वरूप, मुझे गुरुकृपा से क्षणिक आत्मज्ञान भी उसी खूबसूरत पहाड़ के नजारे के साथ मिला, और कुंडलिनी जागरण भी उसीके चरणों की छत्रछाया में जाकर मिला।

करोल पहाड़ का शिवलिंग के जैसा आकार भी मेरी तांत्रिक कुंडलिनी के विकास में सहायक बना

शिवपुराण में शिवलिंग की आकृति का बहुत ज्यादा आध्यात्मिक महत्त्व बताया गया है। वहाँ शिवलिंग की पूजा को सबसे श्रेष्ठ माना गया है। जरा सोचो कि जब छोटे से घरेलू आकार के शिवलिंग का इतना ज्यादा महत्त्व है, तब शिवलिंग के आकार वाले पहाड़ का महत्त्व क्योंकर नहीं होगा। इससे तो महत्त्व कई गुना बढ़ जाएगा, क्योंकि पहाड़ की विशालता, अचलता, अमरता, और अहंकारविहीनता के कारण उसके प्रति आदरबुद्धि वैसे भी ज्यादा होती है। तभी तो पहाड़ को देवता भी माना जाता है। इसी वजह से ही लोग साधना के लिए सुरम्य पहाड़ों की ओर जाते हैं। वैसे तो विभिन्न कोणों से देखने पर वह पहाड़ विभिन्न आकृतियों में दिखाई देता था, यद्यपि उसकी शिवलिंग के जैसी सुंदर आकृति तो मेरे घर व आसपास के क्षेत्र से ही ज्यादा दिखाई देती थी। इसका मतलब है कि वास्तविक आकृति का उतना महत्त्व नहीं है, जितना कि आकृति के भान होने का है। शिवलिंग के सूक्ष्म तांत्रिक महत्त्व के कारण ही मंदिर के शिखर कुछ शंक्वाकार या गुम्बदाकार लिए होते हैं। यह आकार वास्तव में मूलाधार से जुड़ा होता है, और उसी की शक्ति लिए होता है। कैलाश पर्वत का रूप भी ऐसा ही है, और संभवतः तंत्र के सर्वाधिक अनुरूप है। तभी तो यहाँ पर साक्षात शिव का निवास बताया गया है। इसी वजह से बहुत से लोग करोल पहाड़ को मिनी कैलाश कहकर भी संबोधित करते हैं।

पहाड़ एक साधना में लीन मनुष्य की तरह होता है

इसी वजह से तो पहाड़ के रूप को भगवान शिव के रूप के साथ जोड़ा गया है। उसकी वनस्पति शिव की जटाएं हैं। उससे निकलते नदी-नाले व झरने शिव की जटा से निकलती गंगा नदी है। उस पर उगता चाँद शिव के मस्तक का खूबसूरत अर्धचंद्र है। उसके अंदर बसने वाले लोग व वन्य जीवजंतु शिव के ऊपर लिपटे नाग के रूप में हैं। उसका वनस्पतिविहीन व पथरीला भूभाग शिव के शरीर के नग्न भाग के रूप में है।

पहाड़ का अपना स्वरूप कुंडलिनी जागरण के दौरान की अवस्था है

यह अवस्था भाव, अभाव, व पूर्णभाव का मिश्रित रूप है। नशे आदि की अवस्था में भी भाव व अभाव दोनों एकसाथ होते हैं, परंतु उसमें पूर्णभाव नहीं होता। पर्वत की आत्मा में अभाव की अवस्था अद्वैत व जजमेंट से रहित चेतना के रूप में है, भाव की अवस्था अस्तित्व के आनंद के रूप में है, और पूर्णभाव की अवस्था पूर्ण अस्तित्व के परमानन्द के रूप में है। यह पूर्णभाव सर्वोच्च अनुभव के रूप में है। इसे भावाभावहीनता (न भाव, न अभाव) के रूप में भी जाना जा सकता है। पर्वत की ही तरह अन्य सभी निर्जीव पदार्थ भी जागती हुई कुण्डलिनी के रूप में पूर्णजीवन के रूप में हैं, निर्जीव नहीं। तभी तो कुंडलिनी जागरण के दौरान सभी कुछ अपने जैसा और एकसमान लगता है। भगवान कृष्ण ने गोवर्धन पर्वत के इसी सर्वव्यापी रूप को समझा था, इसीलिए वे इंद्र देवता के कोप से बच पाए और व्रज के ग्रामीणों को भी बचा पाए। ग्रामीण तो गोवर्धन पर्वत को अपना स्थानीय देवता मानते थे, जो सीमित व अलग-थलग रूप वाला था। यह कथा मुझे एक रूपक की तरह भी लगती है। इंद्र विकास व संसाधनों के अहंकार से युक्त शहरवासियों व मैदानी भूभाग में रहने वाले लोगों का प्रतीक है। गोवर्धन पर्वत गांव की हरी-भरी वादियों का प्रतीक है। व्रजवासी एक अनपढ़, ग्रामीण, पहाड़ी, पिछड़े, अन्धविश्वासी व संकुचित सोच के अहंकारी आदमी का प्रतीक है। यहाँ यह ध्यान देने योग्य बात है कि अहंकार शहरवासी और ग्रामवासी, दोनों में है। यद्यपिशहरी में उच्चता व कृत्रिमता का अहंकार है, और ग्रामीण में निम्नता व प्रकृति का। ये दोनों प्रकार के अहंकार आपस में टकराते हैं। इन दोनों प्रकार के अहंकारों से रहित आदमी ज्ञानी कृष्ण की तरह है, जो इन दोनों प्रकार के लोगों के साथ मिश्रित होकर भी उनके दुष्प्रभावों से अछूता रहता है।

कुंडलिनी सबसे बड़ी धर्मनिरपेक्ष वस्तु है

दोस्तों, बहुत से लोग कुंडलिनी को धर्म के नाम से, विशेषकर हिंदु धर्म से जोड़ते हैं। पहले मैं भी लगभग यही समझता था। इसका कारण है, कुंडलिनी k बारे में गहराई से समझ न होना। इसी कमी को पूरा करना इस ब्लॉग का उद्देश्य प्रतीत होता है। आज हम इस पोस्ट में कुंडलिनी की सर्वाधिक धर्मनिरपेक्षता को सिद्ध करने का प्रयास करेंगे।

प्रत्येक धर्म या सम्प्रदाय में अपने अलग-अलग आराध्य हैं

उदाहरण के लिए हिन्दू धर्म के विभिन्न संप्रदायों में अनेक प्रकार के देवी-देवता हैं। शैव संप्रदाय भगवान शिव की अराधना की संस्तुति करता है। वैष्णव सम्प्रदाय में भगवान विष्णु के अवतारों की पूजा करने को कहा गया है। शाक्त लोग देवी माता की अराधना करते हैं। ब्रह्मवादी हिन्दू निराकार ॐ की अराधना करते हैं। इसी तरह सिख धर्म में गुरुओं का ध्यान और उनकी बताई गई शिक्षा को अमल में लाना प्रमुख है। जैन मत में भगवान महावीर व उनके उपदेशों का वर्णन है। बुद्धिस्ट लोग भगवान बुद्ध को अपना सबसे बड़ा ईश्वर मानते हैं। इस्लाम में अल्लाह के प्रति समर्पित होने को कहा गया है। इसाई धर्म में भगवान यीशु की भक्ति पर जोर दिया गया है।

कुंडलिनी योग में कोई भी आराध्य नहीं है

इसका यह अर्थ नहीं है कि कुंडलिनी योगी किसी का भी ध्यान नहीं करते। इसका अर्थ है कि कुंडलिनी योग में अपना अराध्य अपनी मर्जी से चुनने की स्वतंत्रता है। वास्तव में ध्यान के आलंबन का ही नाम कुंडलिनी है, जैसा कि पतंजलि ने अपने योगसूत्रों में कहा है। "यथाभिमतध्यानात् वा" इस सूत्र में पतंजलि ने कहा है कि किसी भी मनचाही वस्तु के ध्यान से मन को स्थिर और योगयुक्त किया जा सकता है। यह अलग बात है कि तांत्रिक हठयोग की तकनीकों से इसके साथ संवेदनात्मक एनर्जी को मिश्रित करके, इसे और ज्यादा मजबूत किया जाता है। कुंडलिनी किसी भी वस्तु या भाव के रूप में हो सकती है। यह प्रेमिका के रूप में भी हो सकती है, प्रेमी के रूप में भी, और दुश्मन के रूप में भी। कृष्ण की कुंडलिनी देवी राधा के रूप में, और देवी राधा की कुंडलिनी अपने प्रेमी कृष्ण के रूप में थी। शिशुपाल कृष्ण को अपना सबसे बड़ा शत्रु मानता था, इसलिए उसका ध्यान हमेशा कृष्ण में लगा रहता था। इस तरह से शिशुपाल की कुंडलिनी भी भगवान कृष्ण के रूप में थी। कुंडलिनी गुरु के रूप में भी हो सकती है, और शिष्य के रूप में भी। यह प्रकाश के रूप में भी हो सकती है, और अंधकार के रूप में भी। यह बड़े के रूप में भी हो सकती है, और छोटे के रूप में भी। यह तंत्र के रूप में भी हो सकती है, और मंत्र के रूप में भी। यह भगवान के रूप में भी हो सकती है, और भूत के रूप में भी। यह देवता के रूप में भी हो सकती है, और राक्षस के रूप में भी। यह निर्जीव पदार्थ के रूप में भी हो सकती है, और सजीव के रूप में भी। यह मनुष्य के रूप में भी हो सकती है, और पशु के रूप में भी। और तो और, यह ॐ, अल्लाह आदि निराकार रूप में भी हो सकती है। सीधा सा मतलब है कि एक आदमी का जिस वस्तु की तरफ सबसे ज्यादा झुकाव हो, वह उसी वस्तु को अपनी कुंडलिनी बना सकता है। फिर वह योग के माध्यम से उसका नियमित ध्यान करके

उसको जगा भी सकता है। यह अलग बात है कि अधिकांश लोग अच्छे व सुंदर व्यक्तित्वों जैसे कि गुरु, देवता आदि का ही ध्यान करते हैं, क्योंकि एक आदमी जैसा ध्यान करता है, वह वैसा ही बन जाता है।

कुंडलिनी भौतिकतावादी विज्ञान से भी ज्यादा धर्मनिरपेक्ष है

विज्ञान भी व्यावहारिक प्रयोगों से सिद्ध किए गए सिद्धांतों को ही मानने की वकालत करता है। यह उनके इलावा अन्य किसी विषय को नहीं मानता। कुंडलिनी तो इन बाध्यताओं की सीमा से भी परे है। कुंडलिनी को किसी सत्य वस्तु या भाव का भी रूप दिया जा सकता है, और असत्य का भी। विज्ञान देवताओं को नहीं मानता, पर बहुत से ऋषियों ने उन्हें कुंडलिनी के रूप में जगाया है। ऐसा ही मैंने पिछली पोस्टों में भी बताया था कि करोल पहाड़ का आकार वास्तव में शिवलिंग जैसा नहीं था, परंतु मेरे निवास से वह विशाल शिवलिंग प्रतीत होता था। उसी आभासिक आकृति पर कई शिवभक्त लोग ध्यान लगा लेते थे। उपरोक्त तथ्यों से तो यही निष्कर्ष निकलता है कि कुंडलिनी सबसे अधिक संवेदनात्मक, सहानुभूतिप्रद, स्वतंत्रताप्रद, प्रेमप्रद, मानवतावादी, लोकतांत्रिक, वैज्ञानिक, और धर्मनिरपेक्ष है; यहाँ तक कि भौतिकतावादी विज्ञान से भी ज्यादा। कुंडलिनी विज्ञान को यह भलीभांति ज्ञात है कि सभी की व्यक्तिगत रुचि का सम्मान करना चाहिए।

कुंडलिनी के साथ चक्र-संतुलन संतुलित जीवन की कुंजी है, जिससे तनाव खुद ही घट जाता है

दोस्तों, आजकल जीवन बहुत संघर्षपूर्ण व स्पर्धात्मक हो गया है। रिश्तों की पेचीदगियां भी आजकल बहुत बढ़ गई हैं। ऐसे में दिमाग में बोझ का बढ़ जाना स्वाभाविक ही है। आज हम इस पर और कुंडलिनी की सहायता से इससे बचाव के ऊपर चर्चा करेंगे।

दिमाग का अनियंत्रित बोझ ही अधिकांश समस्याओं का मूल कारण है

दिमाग के अनियंत्रित बोझ से आदमी में बहुत से व्यावहारिक परिवर्तन आते हैं। वह चिड़चिड़ा व गुस्सैल बन जाता है। इससे उसका तनाव बढ़ जाता है। तनाव बढ़ने से उसकी कार्य करने की क्षमता घट जाती है, और वह विभिन्न रोगों का शिकार होने लग जाता है। इन सभी से उसका पारिवारिक, सामाजिक और व्यावसायिक जीवन गड़बड़ाने लग जाता है। उसकी साँसें भी रुकने सी लगती हैं, और अनियमित भी हो जाती हैं। इससे शरीर में ऑक्सीजन की कमी भी होने लगती है।

चक्र साधना तनाव को कम करने में सहायक

सभी चक्रों का समान रूप से उपयोग न होने से प्राणशक्ति सभी चक्रों के बीच में बराबर मात्रा में विभक्त नहीँ हो पाती। इससे जिन चक्रों को जरूरत से ज्यादा प्राणशक्ति मिलती है, वे काम के बोझ से दुष्प्रभावित हो जाते हैं; और जिन चक्रों को जरूरत से कम प्राणशक्ति मिलती है, वे भी पर्याप्त काम न मिलने से दुष्प्रभावित हो जाते हैं। इसीलिए कहा जाता है कि योग से स्वास्थ्य लाभ मिलता है। वास्तव में सही ढंग से किए जाने वाले कुंडलिनी योग से सभी चक्र स्वस्थ व क्रियाशील बने रहते हैं। इससे जीवन संयमित व संतुलित बन जाता है। हमने अक्सर देखा है कि प्रकृति के बीच में काम करने वाले बुद्धिजीवी लोग आकर्षक व्यक्तित्व वाले होते हैं। उनकी जीवनशैली संतुलित होती है। इसका यही कारण है कि दिमाग के काम से उनके मस्तिष्क के चक्र स्वस्थ रहते हैं, और शारीरिक कार्यों से शरीर के अन्य चक्र। यदि वैसे लोग भी कुंडलिनी योग करेंगे तो उन्हें भी लाभ होगा, फिर आलस्यपूर्ण जीवनशैली वाले शहरी लोगों को भला क्योंकर नहीं होगा।

कुंडलिनी प्राणशक्ति के वाहक के रूप में काम करती है

प्राणशक्ति तो अदृश्य होती है। उसे तो हम आसानी से अनुभव भी नहीं कर सकते। फिर उसे चक्रों पर कैसे घुमाया जाएगा। वास्तव में, कुंडलिनी प्राणशक्ति के लिए एक हैन्डल का काम करती है। जहाँ भी कुंडलिनी जाती है, प्राणशक्ति वहाँ खुद चली जाती है। इसीलिए चक्रों पर केवल कुंडलिनी को ही घुमाया जाता है।

दिमाग के अनावश्यक बोझ को एकदम से कम करने वाला एक व्यावहारिक नुस्खा

जीभ को तालु के साथ सटा कर रखा जाता है। जीभ और तालु के संपर्क को ध्यान में रखा जाता है। मस्तिष्क में विचारों की हलचलों को यथावत चलने दें, और उन पर भी ध्यान बना कर रखें। शरीर के फ्रंट चैनल और बैक चैनल पर भी ध्यान बना कर रखें। यदि संभव हो तो सभी पर एकसाथ ध्यान बनाएं, अन्यथा ध्यान को एक-दूसरे पर शिफ्ट करते रहें। ऐसा करने पर कुंडलिनी अचानक मस्तिष्क में प्रकट हो जाएगी, और अन्य फालतू विचार धीमे पड़ जाएंगे। कुंडलिनी सभी चक्रों पर घूमते हुए आनन्द के साथ लगातार मस्तिष्क में बनी रहेगी, और मस्तिष्क का अनावश्यक बोझ भी कम हो जाएगा। बैक चैनल की कल्पना एक फन उठाए हुए शेषनाग के रूप में कर सकते हैं, जिसकी केंद्रीय रेखा पर कुंडलिनी चलती है। पेट से लंबे और गहरे साँस लेने से भी कुंडलिनी को चैनेल में चलने की शक्ति प्राप्त होती है। सीधे भी कुंडलिनी ध्यान को किसी विशेष चक्र पर केंद्रित किया जा सकता है, और साथ में यह भी ध्यान में रखा जा सकता है कि मस्तिष्क से उस चक्र तक फ्रंट चैनल के माध्यम से प्राणशक्ति स्वयं नीचे उतर जाएगी। इससे थोड़ी देर में ही मस्तिष्क की प्राणशक्ति भी उस चक्र पर पहुंच जाती है। उससे चक्र पर ऐंठन के साथ और आनन्द के साथ कुंडलिनी तेजी से चमकने लगती है। मस्तिष्क का बोझ एकदम से हल्का हो जाता है। यह ऐसे ही होता है जैसे कि इलेक्ट्रिक करेंट विद्युतचुम्बकीय तरँग के रूप में एकदम से लक्ष्य पर पहुंच जाता है, जबकि इलेक्ट्रॉनों को पहुंचने में ज्यादा समय लगता है।

चाय पीकर भूख को बढ़ाना

अक्सर देखा जाता है कि चाय पीकर भूख घट जाती है। ऐसा इसलिए होता है क्योंकि चाय से प्राणशक्ति मस्तिष्क को चली जाती है। तभी तो चाय पीने के बाद दिमाग में रंग-बिरंगे विचार उमड़ने लगते हैं। इससे पाचनतंत्र में प्राणशक्ति

की कमी हो जाती है। कई बार मैंने चाय से दिमाग में बढ़ी हुई प्राणशक्ति को कुंडलिनी योग के माध्यम से नीचे उतारा, और उसे विशेषकर नाभि चक्र पर स्थापित किया। उससे मेरी भूख अचानक से बढ़ गई। इसी तरह प्राणशक्ति को अन्य चक्रों पर भी केंद्रित किया जा सकता है। इसे हम चाय योगा कह सकते हैं। इससे सिद्ध होता है कि हम कुण्डलिनी योग के माध्यम से अपने शरीर की बहुत सी चयापचय क्रियाओं को नियंत्रित कर सकते हैं।

कुंडलिनी सहस्रार चक्र में जबकि कुंडलिनी शक्ति मूलाधार चक्र में निवास करती है

मित्रो, कुंडलिनी और कुण्डलिनी शक्ति के बीच में अंतर को लेकर दुनिया में अक्सर भ्रम देखा जाता रहता है। कई लोग कुंडलिनी को कुंडलिनी शक्ति समझ लेते हैं, और दूसरे कई लोग कुण्डलिनी शक्ति को कुंडलिनी समझ लेते हैं। आज हम इस बारे में अनुभवात्मक चर्चा करेंगे।

कुण्डलिनी शक्ति का मूल निवासस्थान मूलाधार चक्र है, जबकि कुण्डलिनी का मूल निवासस्थान सहस्रार है

शक्ति मूलाधार में उत्पन्न होती रहती है। वह सहस्रार तक जाकर कुण्डलिनी को पुष्ट करती है। इससे ऐसा लगता है कि कुण्डलिनी मूलाधार में पैदा हो रही है। सहस्रार से शक्ति आज्ञाचक्र से होकर नीचे उतरती है, और शरीर के सभी चक्रों में फैल जाती है। इससे ऐसा आभास होता है कि सभी चक्रों पर कुंडलिनी घूम रही है। वास्तव में वह शक्ति घूम रही होती है। शक्ति को प्राण या प्राणशक्ति भी कहते हैं।यदि चक्रों पर ही कुण्डलिनी हुआ करती, तो वह वहाँ पर जागृत भी होती। पर कुंडलिनी तो सहस्रार में ही जागृत होती है।

शरीर में अनुभव का स्थान मस्तिष्क ही है, कोई अन्य स्थान नहीं

शरीर के किसी भी भाग की चमड़ी में यदि खुजली हो, तो उसकी अनुभूति मस्तिष्क में ही होती है। हालांकि हमें ऐसा लगता है कि खुजली वाले स्थान पर संवेदना की अनुभूति होती है।कुण्डलिनी के साथ भी वैसा ही होता है। चाहे हम किसी भी चक्र पर कुण्डलिनी का ध्यान करें, उसकी अनुभूति मस्तिष्क में ही होगी। परन्तु लगता ऐसा है कि चक्र पर कुण्डलिनी है। यदि मस्तिष्क को दवा आदि से बेहोश किया जाए, तो शरीर के चक्रों पर भी संवेदना या कुण्डलिनी की अनुभूति नहीं होगी। इसी तरह जब सुषुम्ना नाड़ी पीठ में एक चमकती हुई लकीर के रूप में अनुभव होती है, तो वह अनुभूति भी मस्तिष्क में ही हो रही होती है।

मस्तिष्क से फ्रंट चैनेल के रास्ते उतरता हुआ प्राण कुंडलिनी के आभासिक चित्र को भी अपने साथ नीचे ले आता है

यह इस बात से सिद्ध होता है कि जब मस्तिष्क में कुंडलिनी का ध्यान हो रहा होता है, उस समय यदि जीभ को तालु से लगा कर प्राण को मस्तिष्क से नीचे उतारा जाए, तो कुंडलिनी भी उसके साथ उतरकर सभी चक्रों को भेदते हुए मूलाधार तक पहुंच जाती है। कुंडलिनी का चित्र तो लगातार मस्तिष्क में ही बन रहा होता है, पर उसका आभासिक अनुभव विभिन्न चक्रों पर होता है। इसी तरह, पीठ से ऊपर चढ़ता हुआ प्राण कुंडलिनी को भी वापिस ऊपर ले जाता हुआ प्रतीत होता है। हालांकि कुण्डलिनी कुण्डलिनी मस्तिष्क में ही होती है। इसका मतलब है कि जब प्राण कुण्डलिनी को अपने साथ चलाता है, तो कुण्डलिनी भी प्राण को अपने साथ चलाती है, क्योंकि दोनों आपस में जुड़े होते हैं। तांत्रिक हठयोग में प्राण को कुंडलिनी का हैन्डल बनाया जाता है, जबकि राजयोग में कुंडलिनी को प्राण का हैंडल बनाया जाता है। मिश्रित योग में दोनों ही तरीकों का इस्तेमाल होता है, इसलिए यह सबसे ज्यादा प्रभावी है।

मस्तिष्क के विभिन्न विचार भी जब प्राण के साथ नीचे उतरते हैं, तो वे कुंडलिनी बन जाते हैं

ऐसा इसलिए होता है क्योंकि योगी को कुण्डलिनी के चिंतन की आदत पड़ी होती है। इसलिए कुंडलिनी विचार सबसे प्रिय होता है। तभी तो प्रिय व्यक्ति के लिए कहते हैं कि वह तो मेरे दिल का टुकड़ा है। माँ बेटे के लिए अपनी कोख का हवाला देती है। जब प्राण किसी चक्र पर केंद्रित हो, तब मस्तिष्क में विचारों के लिए बहुत कम प्राण बचा होता है। उतने कम प्राण में तो कुण्डलिनी चित्र को ही बना के रखा जा सकता है, क्योंकि रोज के योगाभ्यास के बल से मस्तिष्क को उसको आसानी से और कम प्राण ऊर्जा से बनाने की आदत पड़ी होती है। इसी तरह, योगाभ्यास के समय जब मन विचारशून्य सा होता है, तो मूलाधार से सहस्रार को चढ़ने वाली शक्ति से कुंडलिनी ही उजागर होती है। यह इसलिए क्योंकि कुंडलिनी की लिए सोचकर ध्यान लगाने की जरूरत नहीं होती। वह रोज के अभ्यास से खुद ही ध्यानपटल पर बनी रहती है। इसी तरह, योगाभ्यास के दौरान जब साँसे प्राणों से भरपूर होती हैं, तब भी कुण्डलिनी ही पुष्ट होती है। ऐसा इसलिए है क्योंकि कुण्डलिनी चित्र ही उन साँसों के प्राणों का सबसे अधिक फायदा उठाते हुए सबसे तेजी से चमक सकती हैं। ऐसा रोज के कुंडलिनी अभ्यास से ही होता है।

अनुभूति का स्थान सहस्रार चक्र ही है, इसीलिए कहा जाता है कि आत्मा सहस्रार में निवास करती है

मुझे तो कुण्डलिनी जागरण की अनुभूति पूरे मस्तिष्क में हुई। ऐसा लगा कि मस्तिष्क का हरेक कण कम्पायमान या जागृत हो रहा था। यद्यपि कुण्डलिनी मस्तिष्क के सबसे ऊपरी हिस्से में महसूस हो रही थी। उसे ही क्राऊन चक्र भी कहते हैं। जब जागरण की अनुभूति समाप्त हुई, तब कुण्डलिनी आज्ञा चक्र में महसूस हुई। सहस्रार से जागरण की

शुरुआत इसलिए होती है क्योंकि मूलाधार से ऊपर चढ़ने वाली प्राणशक्ति सीधी सहस्रार में प्रविष्ट होकर वहाँ पर कुंडलिनी को चमकाती है। हो सकता है कि अनुभव केवल सहस्रार चक्र में ही होती हो, और अन्य मस्तिष्कीय केंद्रों में अनुभूति सहस्रार से ही रेफर्ड होकर आई हो। हालांकि मेरा यह अनुमान वैज्ञानिक प्रयोगों के विरुद्ध है, जिसमें मस्तिष्क में बहुत से अनुभूति के केंद्र बताए गए हैं। वैसे तो चिकित्सा विज्ञान अभी तक चक्रों और नाड़ियों की पहेली को नहीं सुलझा पाया है। इसी तरह, आज्ञा चक्र और उससे निचले चक्रों की तरह मस्तिष्क व शरीर के सभी बिंदुओं पर महसूस होने वाली संवेदनाएं रेफर्ड ही हैं। संवेदनाओं का मूल स्थान तो सहस्रार ही है। सहस्रार में जागरण के एकदम बाद कुंडलिनी आज्ञा चक्र पर आ जाती है। इससे जाहिर होता है कि निचला चक्र अपने ऊपर वाले चक्र से कम ऊर्जा स्तर का होता है। मतलब यह है कि सहस्रार की प्राणऊर्जा के विभिन्न स्तर विभिन्न चक्रों के रूप में अभिव्यक्त होते हैं। जागरण के समय ऊर्जा स्तर टॉप मोस्ट लेवल पर होता है। ऊर्जा स्तर के एक निश्चित सीमा के नीचे गिरने से जागरण की अनुभूति समाप्त हो जाती है। उस समय भी कुण्डलिनी रहती तो सहस्रार में ही है, पर वह आज्ञा चक्र में प्रतीत होती है। ऐसा इसलिए होता है क्योंकि सहस्रार से प्राण आज्ञा चक्र तक उतर गया होता है। यदि कुण्डलिनी प्राण के साथ न चला करती, तो जागरण के एकदम बाद किसी भी चक्र पर महसूस हुआ करती। उसके बाद जैसे-जैसे प्राण नीचे उतरता है, कुण्डलिनी भी उसके साथ उतरती महसूस होती है। यह ऐसे ही होता है, जैसे जब किसी अंग में बहुत तेज दर्द होता है, तो वह सहस्रार में महसूस होता है, और आदमी कहता है कि उसका सिर फटा जा रहा है। इससे ऐसी कहावत भी बनी है कि"इतनी दर्द हुई कि चोटी खड़ी हो गई"। दरअसल बालों की चोटी सहस्रार के निकट बँधी होती है। छोटी मोटी दर्द तो प्रभावित अंग के स्थानीय क्षेत्र में ही लोकेलाइज्ड महसूस होती है। यदि बिना सुन्न किए दाँत उखाड़ा जाए, तो सहस्रार में बहुत तेज दर्द होता है। आदमी बोलता है कि उससे बड़ा दर्द कोई नहीं हो सकता। कुंडलिनी जागरण के अनुभव के बाद भी तो आदमी यही बोलता है कि इससे बड़ा अनुभव नहीं हो सकता। वास्तव में कुंडलिनी जागरण ही दुनिया की सबसे बड़ी अनुभूति है। अगर कोई है, तो वह आत्मज्ञान या ईश्वर ही है। उसमें अद्वैत और आनंद की अनुभूति पूर्ण रूप में होती है। अद्वैत और आनन्द तो दाँत उखाड़ने के बाद भी महसूस होता है, पर पूर्णरूप में नहीं। इससे भी जाहिर होता है कि अनुभूति का स्थान सहस्रार ही है। दाँत निकालने के दर्द की अनुभूति की जागरण की अनुभूति से समानता की बात बहुत से योगियों ने की है। मैंने भी ऐसा दाँत निकालने का उच्चतम स्तर का दर्द एकबार महसूस किया था। सुन्न करने वाली दवा अपना असर नहीं दिखा पाई थी। उससे मुझे अपना मस्तिष्क फटता हुआ सा इसलिए महसूस हुआ, क्योंकि मेरे शरीर का सारा प्राण दर्द का पीछा करते हुए सहस्रार में घुस गया था। उसके बाद मुझे 3 साल पहले हुए आत्मज्ञान का स्मरण हो आया, क्योंकि वह अवस्था उसीके जैसी आध्यात्मिक थी। वह प्राणोत्थान की अवस्था लग रही थी। इसमें पूरे शरीर का प्राण सहस्रार में केंद्रित होता है। इसका वर्णन मैंने एक पुरानी पोस्ट में किया है। सम्भवतः दुःख या दर्द से पाप का नष्ट होना इससे पैदा हुई इस योग भावना से ही होता है। इससे इस बात की भी पुष्टि हो जाती है कि योग से पाप क्षीण होते हैं। अब कुण्डलिनी के अनुभव को तो दर्द के अनुभव की तरह पैदा नहीं किया जा सकता है। अगर ऐसा होता तो आदमी सावधानी से अपने बाहरी अंगों में संवेदना पैदा करके कुण्डलिनी को महसूस किया करता। कुण्डलिनी का ध्यान तो मस्तिष्क में ही किया जा सकता है। ऐसा करना आम आदमी के लिए कठिन है। इसलिए प्राण को कुंडलिनी के हैंडल के रूप में प्रयोग में लाया जाता है। तांत्रिक हठयोग से प्राण को सहस्रार तक चढ़ाया जाता है। उससे वहां खुद ही कुण्डलिनी प्रकट होकर मजबूत होती रहती है। इससे जाहिर होता है कि हठयोग राजयोग की अपेक्षा अधिक वैज्ञानिक, व्यावहारिक व आसान है। वैसे समयानुसार दोनों का मिश्रित प्रयोग मुझे ज्यादा कारगर लगा। उपरोक्तानुसार जब दर्द के साथ प्राण सहस्रार तक पहुंचता है, तो उससे कुण्डलिनी भी अनुभव होने लगती है। परंतु ज्यादा कुण्डलिनी लाभ नहीं मिलता, क्योंकि अधिकांश प्राण को दर्द की अनुभूति खा जाती है। हालांकि कई जगह स्पर्श की अनुभूति का कुण्डलिनी के लिए प्रयोग किया जाता है। उदाहरण के लिए, जीभ और तालु के आपसी स्पर्श के अनुभव से कुण्डलिनी और प्राण मस्तिष्क से वहां तक उतर जाते हैं, और फ्रंट चैनल से नीचे चले जाते हैं।उपरोक्तानुसार ही, जैसे सहस्रार में बनने वाले चित्र ही चक्रों पर बने हुए प्रतीत होते हैं, उसी तरह बाहरी दुनिया में बनने वाले सूर्य, नदी, पर्वत वगैरह के चित्र भी सहस्रार में ही बन रहे होते हैं, पर उनकी अनुभूति दूर बाहर होती है। यह ट्रिक मस्तिष्क ने क्रमिक जीवविकास के दौरान सीखी है। यदि सभी कुछ अंदर ही महसूस हुआ करता, तो बाहर की तरफ दौड़ न होती, और जीवविकास न होता।जितनी तेज अनुभूति होती है, वह उतनी ही ज्यादा आत्मा से चिपकती है। उसे ही समाधि भी कहते हैं। ऐसी तेज अनुभूति सहस्रार में ही होती है। तभी तो आदमी यौन प्रेमी को कभी भूल नहीं पाता। दरअसल मूलाधार से उठ रही अनुभूति सीधी सहस्रार में जा बैठती है और वहाँ प्रेमी के चित्र को मजबूत करती है। इसी वजह से कई लोग प्रेम में पागल होकर साधु बन जाते हैं।सहस्रार चक्र की इसी सार्वभौमिकता के कारण उसे एक हजार पंखुड़ियां दी गई हैं। इसका मतलब है कि यह शरीर के हरेक बिंदु से जुड़ा होता है। अन्य चक्रों में दो, तीन या चार पंखुड़ियां होती हैं, मतलब कि वे आसपास के कुछेक चक्रों से ही जुड़े होते हैं। इसका वर्णन मैंने एक पुरानी पोस्ट में किया है। शिवपुराण के अनुसार कुण्डलिनी ही

शिव है, और शिव ही कुंडलिनी है। ऐसा इसलिए है, क्योंकि उसमें शिव ही का ध्यान लगाने को कहा गया है। उसीके अनुसार वह शिव सहस्रार में निवास करते हैं। शक्ति उनसे मिलने के लिए मूलाधार से ऊपर चढ़ती रहती है। जब शक्ति का आवेग एक निश्चित सीमा से ऊपर उठ जाता है, तब उसका शिव के साथ मिलन का कामोन्माद चरम पर पहुंच जाता है। उससे शिव-शक्ति का मिलन पूर्ण हो जाता है, जो कुण्डलिनी जागरण के रूप में प्रकट होता है।

मिश्रित योग सबसे अधिक कारगर होता है, इस उपरोक्त कथन की पुष्टि के लिए मैं अपने साथ घटित घटना का एक उदाहरण देता हूँ। मैं उस समय प्राणोत्थान की अवस्था में था। प्रतिदिन योगाभ्यास कर रहा था। एक दिन मेरे अचानक मिले पुराने मित्र के कारण मुझे कुण्डलिनी का तेज स्मरण हो आया। मैं उसमें खो गया। तभी अचानक मेरे प्राण भी उस कुंडलिनी का साथ देने के लिए मूलाधार से उठकर पीठ के रास्ते मस्तिष्क को चढ़ गए। इससे वह कुण्डलिनी जागृत हो गई। इसका विस्तृत विवरण इस वेबसाइट के होमपेज पर है। प्राण इसीलिए ऊपर चढ़ पाए, क्योंकि मैं प्रतिदिन तांत्रिक हठयोग का अभ्यास कर रहा था, और मुझे प्राण को ऊपर चढ़ाने की आदत बनी हुई थी। यदि वह आदत न होती, तो कुंडलिनी का स्मरण तो मस्तिष्क में तेजी से होता पर वह जागृत न होती, क्योंकि उसे मूलाधार की प्राणशक्ति न मिलती। जागरण कराने वाली असली प्राणशक्ति तो मूलाधार चक्र में ही रहती है। इससे पूर्वकथित इस बात की भी पुष्टि हो जाती है कि प्राण कुंडलिनी का पीछा करता है, और जहाँ कुंडलिनी जाती है, वहाँ प्राण भी चला जाता है। कुण्डलिनी के स्मरण को आप राजयोग कह सकते हैं, और मूलाधार से प्राण को ऊपर चढ़ाने को हठयोग कहते हैं। इससे सिद्ध होता है कि सभी प्रकार के योग मिलजुल कर काम करते हैं, और सभी एक ही महायोग के विभिन्न हिस्से हैं।

कुंडलिनी ध्यान चौबीसों घंटे करने के तीन तरीके

मित्रो, मैंने पिछली पोस्टों में बताया था कि जीभ को तालु से छुआ कर कुंडलिनी को आगे के चैनल से नीचे उतारते हैं। मैंने यह भी कहा था कि किसी भी संवेदना के अनुभव का एकमात्र स्थान सहस्रार ही है, कोई अन्य चक्र नहीं। कुंडलिनी चित्र हमेशा सहस्रार में ही बन रहा होता है। अन्य चक्रों में वह तभी प्रतीत होता है, जब उसका ऊर्जा स्तर एक न्यूनतम सीमा से नीचे गिरता है। ऊर्जा का स्तर जितना नीचे गिरता है, वह उतना ही ज्यादा निचले चक्र में जाता है। मैंने हाल ही में इससे संबंधित एक नया अनुभव प्राप्त किया, जिसे मैं उन्हीं निम्नलिखित सिद्धांतों की पुष्टि के लिए प्रयोग में लाऊँगा।

आध्यात्मिक आयाम को प्राप्त कराने वाली दो मुख्य यौगिक विधियां हैं

पहली विधि दार्शनिक है, और दूसरी विधि प्रयोगात्मक या तांत्रिक है। पहली विधि में किसी पसंदीदा अद्वैत दर्शन को अपनी वर्तमान स्थिति पर आरोपित किया जाता है। दूसरी विधि में जीभ को तालु से छुआ कर रखा जाता है।

आध्यात्मिक लाभ प्राप्त कराने वाली दार्शनिक या राजयोग गत विधि

मैं एक दिन बहुत से जटिल कार्यों में व्यस्त था। उन कार्यों से लगातार द्वैत पैदा हो रहा था। द्वैत के साथ मानसिक परेशानी आ रही थी। उससे स्वाभाविक था कि शारीरिक परेशानी भी पैदा हो रही थी। मैं उस द्वैत को अद्वैत में रूपांतरित करने के लिए दार्शनिक विधि का सहारा लेने लगा। मैं स्वनिर्मित "शरीरविज्ञान दर्शन" नामक पुस्तक को अपनी उस समय की वर्तमान व मनोदोलन से भरी अवस्था पर आरोपित करने लगा। मैं अपनी अवस्था को बिल्कुल नहीं बदल रहा था। मतलब कि जैसी अवस्था बन रही थी, उसे वैसा ही रहने दे रहा था। अवस्था को बदलने से देवता नाराज होते हैं, और वे कामकाज में विघ्न डालते हैं। वे चाहते हैं कि आदमी हर प्रकार की अवस्था का अनुभव करे। यह अलग बात है कि असली योगी उन सभी अवस्थाओं को अनासक्ति से अनुभव करे। देवता इससे और ज्यादा खुश हो जाते हैं, क्योंकि वे खुद भी अनासक्त होते। वे हर अवस्था का अनासक्ति से सामना करते हैं, उनसे भागते नहीं हैं। अवस्थाओं से पलायन करने को अपना और अपनी बनाई सृष्टि का अपमान समझते हैं, क्योंकि सभी अवस्थाएं इस विभिन्नताओं से भरी सृष्टि के हक में ही होती हैं। इसीलिए मैं अवचेतन मन से ही यह मान रहा था कि मेरा अद्वैत दर्शन मेरी सभी अवस्थाओं से जुड़कर उनको अद्वैतशील बना रहा है। मैं सीधे तौर पर इसका चिंतन नहीँ कर रहा था, क्योंकि उससे मेरी अवस्थाएं दुष्प्रभावित हो सकती थीं। उससे क्या होता था कि मेरे अज्ञातस्थान वाले चिन्तन में कुंडलिनी प्रकट हो जाती थी, और मेरे किसी चक्र पर स्थित हो जाया करती थी। जितना कम मानसिक ऊर्जा स्तर मेरी अवस्था का होता, मेरी कुंडलिनी उतना ज्यादा निचले चक्र पर चली जाती थी। मन के कुछ ऊर्जावान रहने पर वह हृदय चक्र पर आ जाती थी। ऊर्जा स्तर के काफ़ी ज्यादा गिरने पर वह नाभि चक्र पर आ जाती थी। उससे भी कम ऊर्जा होने पर वह स्वाधिस्ठानचक्र पर भी स्थित हो जाती थी।

आत्म-जागरूकता पैदा करने वाली तांत्रिक विधि

फिर से मस्तिष्क की थकान होने पर मैंने अपनी उलटी जीभ को नरम तालु से छुआया। मुझे वहाँ नमकीन सा स्वाद लगा और तीव्र संवेदना की अनुभूति हुई। इसके साथ ही मस्तिष्क की ऊर्जा जीभ के पिछले हिस्से की केंद्रीय रेखा से सभी चक्रों को भेदते हुए नीचे उतर गई और नाभि चक्र पर स्थित हो गई। उसके साथ कुण्डलिनी भी थी। मस्तिष्क में केवल विचारों का कंफ्यूसिंग पुलिंदा था। वह नीचे उतरते हुए कुण्डलिनी बन गया। उससे मस्तिष्क की थकान एकदम से कम हो गई। अद्वैत व आनन्द के साथ शांति का उदय हुआ। विचार व कर्म अनासक्ति के साथ होने लगे।

राजयोग व तंत्र के नियमों के मिश्रण वाली तीसरी यौगिक विधि

कुछ देर बाद मेरे मस्तिष्क में फिर से द्वैत से युक्त दबाव बनने लगा था। उसे कम करने के लिए मैंने उपरोक्त दोनों विधियों का प्रयोग किया। पहले मैंने जीभ को तालु से लगातार छुआ कर रखा। उसके साथ ही शरीरविज्ञान पुस्तक से अपने मन में कुंडलिनी को पैदा करने का प्रयास किया। पर वह मस्तिष्क में ढंग से प्रकट हो पाती, उससे पहले ही फ्रंट चैनेल से नीचे आ गई। उसके जीभ को क्रॉस करते समय जीभ में स्वाद से भरी हुई तेज संवेदना पैदा होती थी। इससे कुंडलिनी लूप भी पूरा हो गया था। इससे वह नाभि चक्र से भी नीचे उतरकर स्वाधिष्ठान चक्र और मूलाधार चक्र से होते हुए मूलाधार को संकुचित करने से पीठ के बैक चैनेल से ऊपर चढ़ जाती थी और आगे से फिर नीचे उतर जाती थी। इससे कुंडलिनी चक्र की तरह लूप में घूमने लगी। यह विधि मुझे सर्वाधिक शक्तिशाली लगीं। हालांकि समय के अनुसार किसी भी विधि को अपने लाभ के लिए प्रयुक्त किया जा सकता है।

कुंडलिनी ही शिव को भीतर से सत्त्वगुणी बनाती है, बेशक वे बाहर से तमोगुणी प्रतीत होते हों

दोस्तो, भगवान शिव के बारे में सुना जाता है कि वे तमोगुणी हैं। तमोगुण मतलब अंधेरे वाला गुण। शिव भूतों के साथ श्मशान में रमण करते हैं। अपने ऊपर उन्होंने चिता की भस्म को मला होता है। साथ में यह भी कहा जाता है कि भगवान शिव परम सतोगुण स्वरूप हैं। सतोगुण मतलब प्रकाश वाला गुण। इस तरह दोनों विरोधी गुण शिव के अंदर दिखाए जाते हैं। फिर इसको जस्टिफाई करने के लिए कहा जाता है कि शिव बाहर से तमोगुणी हैं, पर भीतर से सतोगुणी हैं। आज हम इसे तांत्रिक कुंडलिनी योग के माध्यम से स्पष्ट करेंगे।

कुंडलिनी ही शिव के सत्त्वगुण का मूल स्रोत है

दरअसल शिव तन्त्र के अधिष्ठाता देव हैं। उन्हें हम सृष्टि के पहले तांत्रिक भी कह सकते हैं। यदि हम तांत्रिक योगी के आचरण का बारीकी से अध्ययन करें, तो शिव के संबंध में उठ रही शंका भी निर्मूल हो जाएगी। वामपंथी तांत्रिक को ही आमतौर पर असली तांत्रिक माना जाता है। वे पाँच मकारों का सेवन भी करते हैं। बेशक शिव पंचमकारी नहीँ हैं, पर तमोगुण तो उनके साथ वैसे ही रहता है, जैसे पंचमकारी तांत्रिक के साथ। दुनिया के आम आदमी के अंदर इनके सेवन से तमोगुण उत्पन्न होता है। ऐसा इसलिए होता है क्योंकि वे इससे उत्पन्न ऊर्जा को संभाल नहीं पाते और उसके आवेश में गलत काम कर बैठते हैं। वे गलत काम तमोगुण को और अधिक बढ़ा देते हैं। पंचमकार खुद भी गुणों में तेज हलचल पैदा करते हैं, जिससे स्वाभाविक तौर पर तमोगुण भी उत्पन्न हो जाता है, आम दुनिया के अधिकांश लोग जिसके प्रभाव में आकर निम्न हरकत कर बैठते हैं। परन्तु एक तंत्रयोगी गुणों की हलचल को अपने कुंडलिनी योग की बदौलत हासिल अद्वैत भाव से शांत कर देते हैं। इससे उन्हें बहुत अधिक कुंडलिनी लाभ मिलता है, क्योंकि अद्वैत के साथ कुंडलिनी अक्सर रहती ही है। इससे कुंडलिनी तेजी से चमकने लगती है। तमोगुण से दबी हुई प्राण शक्ति और नाड़ी शक्ति जब कुंडलिनी को लगती है, तो वह जीवंत होने लगती है। यह वैसे ही होता है जैसे अंधेरे में दीपक या चिंगारी अच्छे से चमकते हैं। तभी तो भगवान शिव की तरह श्मशान में किया गया कुंडलिनी योगाभ्यास शीघ्रता से फलीभूत होता है। वैसे भी देखने में आता है कि तमोगुण की अधिकता में मस्तिष्क में विचारों की हलचल रुक सी जाती है। ऐसा किसी भय से, उदासी से, हादसे के नजदीक गुजरने से, तनाव से, अवसाद से, नशे से, तमोगुणी आमिषादि भोजन से, काम आदि से मन व शरीर की थकान से, आदि अनेक कारणों से हो सकता है। ऐसे समय में मस्तिष्क में न्यूरोनल एनर्जी का संग्रहण हो रहा होता है। इसमें जो बीच-बीच में इक्का-दुक्का विचार उठते हैं, वे बहुत शक्तिशाली और चमकीले होते हैं, क्योंकि उन्हें घनीभूत न्यूरोनल एनर्जी मिल रही होती है। योगी लोग इन्हीं विचारों को कुंडलिनी विचार में तब्दील करते रहते हैं। इससे सारी न्यूरोनल एनर्जी कुंडलिनी को मिलती रहती है। बुरे समय में भगवान या कुंडलिनी को याद करने से उत्पन्न महान लाभ के पीछे यही सिद्धांत काम करता है। इस तमोगुण के दौर के बाद सतोगुण व रजोगुण का दौर आता है। यह विचारों के प्रकाश से भरा होता है। दरअसल संग्रहीत न्यूरोनल एनर्जी बाहर निकल रही होती है। इसमें चमकीले विचारों की बाढ़ सी आती है। आम आदमी तो इनमें न्यूरोनल एनर्जी को बर्बाद कर देता है, पर योगी उन विचारों को कुंडलिनी मैँ तब्दील करके सारी एनर्जी कुंडलिनी को दे रहा होता है। योगी ऐसा करने के लिए अक्सर किसी अद्वैत शास्त्र की मदद लेता है। अद्वैत शास्त्रों में देवता संबंधी दार्शनिक पुस्तकें होती हैं, जैसे कि पुराण, स्तोत्र आदि। शरीरविज्ञान दर्शन भी एक उत्तम कोटि का आधुनिक अद्वैत शास्त्र है। वह अद्वैतशास्त्र को अपनी वर्तमान गुणों से भरपूर अवस्था के ऊपर पिरोता रहता है। वह इस सच्चाई को समझता रहता है कि उसके जैसी सभी अवस्थाएँ हर जगह व हर किसी में विद्यमान हैं। इससे शान्ति और आनन्द के साथ कुंडलिनी चमकने लगती है। वह कुंडलिनी, योग के माध्यम से सभी चक्रों पर भ्रमण करते हुए सभी को स्वस्थ और मजबूत करती है। पूरा तन और मन आनन्द व प्रकाश से भर जाता है। इस प्रकार जिन चीजों से आम आदमी के भीतर तमोगुण उत्पन्न होता है, उनसे तन्त्रयोगी के भीतर सतोगुण उत्पन्न हो जाता है। सम्भवतः यही वजह है कि दुनिया वालों को भगवान शिव बाहर से तमोगुणी दिखते हैं, पर असल में वे भीतर से सतोगुणी होते हैं। इससे यिन और यांग का मिलन भी हो जाता है, जिससे ज्ञान पैदा होता है। यिन तमोगुण है, और यांग सतोगुण।

कुंडलिनी योग का निरूपण करती हुई श्रीमद्भागवत गीता

मित्रों, एक मित्र ने मुझे कुछ दिनों पहले व्हाट्सएप पर ऑनलाइन गीता भेजना शुरु किया। एक श्लोक सुबह और एक शाम को प्रतिदिन भेजता है। उसमें मुझे बहुत सी सामग्री मिली जो कुंडलिनी और अद्वैत से सम्बंधित थी। कुछ ऐसे बिंदु भी मिले जिनके बारे में समाज में भ्रम की स्थिति भी प्रतीत होती है। वैसे तो गीता के संस्कार मुझे बचपन से ही मिले हैं। मेरे दादाजी का नाम गीता से शुरु होता था, और वे गीता के बहुत दीवाने थे। मैंने भी गीता के ऊपर विस्तृत टीका पढ़ी थी। पर पढ़ने और कढ़ने में बहुत अंतर होता है।

गीता के चौथे अध्याय के 29वें श्लोक में तांत्रिक कुंडलिनी योग का वर्णन

अपाने जुह्वति प्राणं प्राणेऽपानं तथापरे।प्राणापानगती रुद्ध्वा प्राणायामपरायणाः॥४-२९॥

इस श्लोक की पहली पंक्ति का शाब्दिक अर्थ है कि कुछ योगी अपान वायु में प्राणवायु का हवन करते हैं। प्राण वायु शरीर में छाती से ऊपर व्याप्त होता है। अपान वायु स्वाधिष्ठान चक्र और मूलाधार चक्र के क्षेत्रों में व्याप्त होता है। जब आज्ञा चक्र, स्वाधिष्ठान चक्र और मूलाधार चक्र पर एकसाथ ध्यान किया जाता है, तब स्वाधिष्ठान चक्र पर प्राण और अपान इकट्ठे हो जाते हैं। इससे स्वाधिष्ठान चक्र पर कुंडलिनी चमकने लगती है। योग में स्वाधिष्ठान की जगह पर मणिपुर चक्र को भी रखते हैं। फिर प्राण और अपान का हवन समान वायु में होता है। फिर भी इसे अपान में प्राण का हवन ही कहते हैं, क्योंकि अपान वहाँ से प्राण की अपेक्षा ज्यादा नजदीक होता है। कई बार एक ही चक्र का, सहस्रार का या आज्ञा चक्र का ध्यान किया जाता है। फिर हल्का सा ध्यान स्वाधिष्ठान चक्र का या मूलाधार चक्र का किया जाता है। इससे ऊपर का प्राण नीचे आ जाता है, और वह अपान बन जाता है। एक प्रकार से अपान प्राण को खा जाता है, वैसे ही जैसे अग्नि समिधा या हविष्य को खा जाती है। इसीलिए यहाँ अपान में प्राण का हवन लिखा है। राजयोगी प्रकार के लोग सांसारिक आधार को अच्छी तरह से प्राप्त करने के लिए इस भेंट को अधिक चढ़ाते हैं, क्योंकि उनके वैचारिक स्वभाव के कारण उनके शीर्ष चक्रों में बहुत ऊर्जा होती है।

इस श्लोक की दूसरी पंक्ति का शाब्दिक अर्थ है कि कुछ दूसरे लोग प्राण में अपान का हवन करते हैं। जब आज्ञा चक्र, अनाहत चक्र और मूलाधार या स्वाधिष्ठान चक्र का एकसाथ ध्यान किया जाता है, तब अनाहत चक्र पर प्राण और अपान इकट्ठे हो जाते हैं। क्योंकि आज्ञा चक्र के साथ अनाहत चक्र पर भी प्राण ही है, इसीलिए कहा जा रहा है कि अपान का हवन प्राण अग्नि में करते हैं। इसमें भी कई बार दो ही चक्रों का ध्यान किया जाता है। पहले मूलाधार या स्वाधिष्ठान चक्र का ध्यान किया जाता है। फिर हल्का सा ध्यान सहस्रार या आज्ञा चक्र की तरफ मोड़ा जाता है। इससे नीचे का अपान एकदम से ऊपर चढ़ कर प्राण में मिल जाता है। इसे ही अपान का प्राण में हवन लिखा है। ध्यान रहे कि कुंडलिनी ही प्राण या अपान के रूप में महसूस होती है। तांत्रिक प्रकार के लोग इस प्रकार की भेंट अधिक चढ़ाते हैं, क्योंकि उनके नीचे के चक्रों में बहुत ऊर्जा होती है। इससे उन्हें कुंडलिनी सक्रियण और जागरण के लिए आवश्यक मानसिक ऊर्जा प्राप्त होती है।

तीसरी और चौथी पंक्ति का शब्द है कि प्राणायाम करने वाले लोग प्राण और अपान की गति को रोककर, मतलब प्रश्वास और निश्वास को रोककर ऐसा करते हैं। योग में यह सबसे महत्त्वपूर्ण है। वास्तव में यही असली और मुख्य योग है। अन्य क्रियाकलाप तो केवल इसके सहायक ही हैं। प्रश्वास अर्थात अंदर साँस भरते समय प्राण मेरुदंड से होकर ऊपर चढ़ता है। उसके साथ कुंडलिनी भी। निःश्वास अर्थात साँस बाहर छोड़ते समय प्राण आगे की नाड़ी से नीचे उतरता है, मतलब वह अपान को पुष्ट करता है। इसके साथ कुंडलिनी भी नीचे आ जाती है। फिर प्रश्वास के साथ दुबारा पीछे की नाड़ी से ऊपर चढ़ता है। यह चक्र चलता रहता है। इससे कुंडलिनी एक जगह स्थिर नहीं रह पाती, जिससे उसका सही ढंग से ध्यान नहीं हो पाता। प्राण को तो हम रोक नहीं सकते, क्योंकि यह नाड़ियों में बहने वाली सूक्ष्म शक्ति है। हाँ, हम प्राणवायु या साँस को रोक सकते हैं, जिससे प्राण जुड़ा होता है। इस तरह साँस प्राण के लिए एक हैन्डल का काम करता है। जब साँस रोकने से प्राण स्थिर हो जाता है, तब हम उसे या कुंडलिनी को ध्यान से नियंत्रित गति दे सकते हैं। साँस लेते समय हम उसे ध्यान से ज्यादा नियंत्रित नहीं कर सकते, क्योंकि साँसे उसे इधर-उधर नचाती रहती हैं। अंदर जाती हुई साँस के साथ प्राण और कुँडलिनी पीठ की नाड़ी से ऊपर चढ़ते हैं, और बाहर जाती हुई साँस के साथ आगे की नाड़ी से नीचे उतरते हैं। साँस को रोककर प्राण और कुंडलिनी दोनों रुक जाते हैं। कुंडलिनी के रुकने से मन भी स्थिर हो जाता है, क्योंकि कुंडलिनी मन का ही एक प्रायोगिक अंश जो है। **पूरे मन को तो हम एकसाथ काबू नहीं कर सकते, इसीलिए कुंडलिनी के रूप में उसका एक एक्सपेरिमेंटल टुकड़ा या सैम्पल टुकड़ा लिया जाता है।** इसी वजह से तो कुंडलिनी योग के बाद मन की स्थिरता व शांति के साथ आनन्द महसूस होता है। प्राण एक ही है। केवल समझाने के लिए ही जगह विशेष के कारण उसे झूठमूठ में विभक्त किया गया है, जिसे प्राण, अपान आदि। प्राण और अपान को किसी चक्र पर, कल्पना करो मणिपुर चक्र पर आपस में भिड़ाने के लिए साँस को रोककर मुख्य ध्यान मणिपुर चक्र पर

रखा जाता है, और साथ में तिरछा ध्यान आज्ञा चक्र और मूलाधार पर भी रखा जाता है। इससे ऊपर का प्राण नीचे और नीचे का अपान ऊपर आकर मणिपुर चक्र पर आपस में भिड़ जाते हैं। इससे वहाँ कुंडलिनी उजागर हो जाती है। हरेक चक्र पर इन दोनों को एक बार बाहर साँस छोड़कर व वहीँ रोककर भिड़ाया जाता है, और एक बार साँस भरकर व वहीं रोककर भिड़ाया जाता है। यह ध्यान में रखना चाहिए कि साँस को अपनी सामर्थ्य से अधिक देर तक नहीं रोकना चाहिए। अपनी बर्दाश्त की सीमा को लांघने से मस्तिष्क को हानि पहुंच सकती है।

बीच वाले चक्र पर हाथ रखकर ध्यान लगाने में मदद मिलती है। इसी तरह, सिद्धासन में बैठने पर एक पैर की एड़ी के दबाव से मूलाधार पर दबाव की संवेदना महसूस होती है, और दूसरे पैर से स्वाधिष्ठान चक्र पर। इस संवेदना से भी चक्र के ध्यान में मदद मिलती है। पर याद रखो कि पूर्ण सिद्धासन से कई बार घुटने में दर्द होती है, खासकर उस टांग के घुटने में जिसकी ऐड़ी स्वाधिष्ठान चक्र को स्पर्श करती है। इसलिए ऐसी हालत में अर्ध सिद्धासन लगाना चाहिए। इसमें केवल एक टांग की एड़ी ही मूलाधार चक्र को स्पर्श करती है। दूसरी टांग पहली टांग के ऊपर नहीं बल्कि जमीन पर नीचे आराम से टिकी होती है। घुटनों के दर्द की लंबी अनदेखी से उनके खराब होने की संभावना भी बढ़ जाती है।

गीता के चौथे अध्याय के 30वें श्लोक में राजयोग का निरूपण

अपरे नियताहाराः प्राणान्प्राणेषु जुह्वति।सर्वेऽप्येते यज्ञविदोयज्ञक्षपितकल्मषाः॥४-३०॥

इस श्लोक का शाब्दिक अर्थ है कि नियमित आहार-विहार वाले लोग प्राणों का प्राणों में ही हवन करते हैं। ये सभी साधक यज्ञों द्वारा पापों का नाश करने वाले और यज्ञों को जानने वाले हैं॥30॥

नियमित आहार-विहार वाले योगी राजयोगी होते हैं। ये तांत्रिक पंचमकारों का आश्रय नहीं लेते। इसलिए इनके शरीर के निचले भागों में स्थित चक्र कमजोर होते हैं, वहाँ पर प्राणशक्ति या अपान की कमी से। ये मस्तिष्क से हृदय तक ही, शरीर के ऊपर के चक्रों में कुंडलिनी का ध्यान करते हैं। ये मुख्यतया ध्यान का त्रिभुज बनाते हैं। उस त्रिभुज का एक बिंदु सहस्रार चक्र होता है, दूसरा बिंदु आगे का आज्ञा चक्र होता है, और तीसरा बिंदु पीछे का आज्ञा चक्र होता है। इसमें एक बिंदु पर खासकर आगे के आज्ञा चक्र पर सीधा या मुख्य ध्यान लगा होता है, और बाकि दोनों चक्रों पर तिरछा या गौण ध्यान। बिंदुओं को आपस में बदल भी सकते हैं। इसी तरह त्रिभुज दूसरे चक्रों को लेकर भी बनाया जा सकता है। तीनों बिंदुओं का प्राण त्रिभुज के मुख्य ध्यान बिंदु पर इकट्ठा हो जाता है, और वहाँ कुंडलिनी चमकने लगती है। इन त्रिभुजों में टॉप का बिंदु अधिकांशतः सहस्रार चक्र ही होता है। दरअसल, त्रिभुज या खड़ी रेखा को चारों ओर से आस-पास के क्षेत्रों से प्राण को अपनी रेखाओं केंद्रित करने के लिए बनाया गया है। कोई एक साथ बड़े क्षेत्र का ध्यान नहीं कर सकता। त्रिभुज पर स्थित प्राण की अधिक सघनता के लिए इसके तीन शंक्वाकार बिन्दुओं का चयन किया जाता है। इन तीन बिन्दुओं में से एक बिंदु पर मुख्य ध्यान केन्द्रित करके प्राण को उस एक बिन्दु पर केन्द्रित किया जाता है। अंत में, हमें कुंडलिनी के साथ-साथ उस एक बिंदु पर अत्यधिक एकाग्र या सघन प्राण मिलता है, जिससे वहाँ कुंडलिनी चमकने लगती है। इसी तरह, सीधी रेखा, कल्पना करो मूलाधार, मणिपुर और आज्ञा चक्र बिंदुओं को आपस में जोड़ने वाली रेखा के साथ भी ऐसा ही होता है। पहले रेखा के चारों ओर के शरीर का प्राण रेखा पर केंद्रित किया जाता है। फिर रेखा का प्राण इन तीनों चक्र बिंदुओं पर केंद्रित किया जाता है। फिर तीनों बिंदुओं का प्राण उस चक्र बिंदु पर इकट्ठा हो जाता है, जिस पर मुख्य ध्यान लगा होता है। अन्य दोनों बिंदुओं पर गौण या तिरछा ध्यान लगा होता है। यह एक अद्‌भुत आध्यात्मिक मनोविज्ञान है।

ईसाई धर्म में प्राण-अपान संघ

जीवित यीशु ने उत्तर दिया और कहा: "धन्य है वह मनुष्य जिसने इन बातों को जाना। वह स्वर्ग को नीचे ले आया, उसने पृथ्वी को उठा लिया और उसे स्वर्ग में भेज दिया, और वह बीच का बन गया, क्योंकि यह कुछ भी नहीं है। मुझे लगता है कि स्वर्ग प्राण है जिसे ऊपर वर्णित अनुसार नीचे लाया गया है। इसी तरह, पृथ्वी अपान है जो ऊपर उठाया गया है। मध्य दोनों का मिलन है। वहां उत्पादित "कुछ भी नहीं" कुंडलिनी ध्यान से उत्पन्न मन की स्थिरता ही है, जो अद्वैत के साथ आती है। अद्वैत के साथ मन की स्थिरता "कुछ भी नहीं" के बराबर ही है। प्राण को स्वर्ग इसलिए कहा गया है क्योंकि यह शरीर के ऊपरी चक्रों में व्याप्त रहता है, और ऊपरी चक्रों का स्वभाव स्वर्गिक लोकों के जैसा ही है, और ऐसा ही अनेक स्थानों पर निरूपित भी किया जाता है। इसी तरह अपान को पृथ्वी इसलिए कहा है क्योंकि यह शरीर के निचले चक्रों विशेषकर मूलाधार में व्याप्त रहता है। इन निचले चक्रों को घटिया या नारकीय लोकों की संज्ञा भी दी गई है। मूलाधार को पृथ्वी की उपमा दी गई है, क्योंकि इसके ध्यान से आदमी अच्छी तरह से जमीन या

भौतिक आयाम से जुड़ जाता है, अर्थात यह आदमी को आधार प्रदान करता है। इसीलिए इसका नाम मूल और आधार शब्दों को जोड़कर बना है। धरती भी जीने के लिए और खड़े रहने के लिए सबसे बड़ा आधार प्रदान करती है।

कुंडलिनी जागरण से आत्मा की पारलौकिक परमावस्था का पता नहीं चलता

मित्रो, मैं कुछ दिन पहले रिलेक्स होने के लिए इस कड़ी गर्मी में दिन की धूप में छतरी लेकर बाहर निकला। चारों तरफ गलियों की सड़कों का जाल था, पर छायादार पेड़ कम थे। जहाँ थे, वहाँ उनके नीचे चबूतरे नहीं बने थे बैठने के लिए। पूरी कॉलोनी में तीन-चार जगह चबूतरे वाले पेड़ थे। मैं बारी-बारी से हर चबूतरे पर बैठता रहा, और आसपास से आ रही कोयल की संगीतमयी आवाज का आनंद लेता रहा। गाय और बैल मेरे पास आ-जा रहे थे, क्योंकि उनको पता था कि मैं उनके लिए आटे की पिन्नियां लाया था। अच्छा है, अगर सैरसपाटे के साथ कुछ गौसेवा भी होती रहे। एक छोटे चबूतरे पर पेड़ से सटा हुआ एक पत्थर था। मैं उसपे बैठा तो मेरा खुद ही एक ऐसा आसन लग गया, जिसमें मेरा स्वाधिष्ठान चक्र पेड़ को मजबूती से छू रहा था, और पीठ पेड़ के साथ सीधी और छाती के पीछे पीठ की हड्डी पेड़ से सटी हुई थी। इससे मेरे मन में वर्षों पुरानी रंगबिरंगी भावनाएं उमड़ने लगीं। बेशक पुरानी घटनाओं के दृश्य मेरे सामने नहीं थे, पर उनसे जुड़ी भावनाएँ बिल्कुल जीवंत और ताज़ा थीं। ऐसा लग रहा था जैसे कि वे भावनाएं सत्य हों और उस अनुभव के समय वर्तमान में ही बनी हों। यहाँ तक कि अपने असली घटनाकाल में भी वे भावनाएँ उतनी सूक्ष्म और प्रत्यक्ष रूप में अनुभव नहीं हुई थीं, जितनी उस स्मरणकाल में अनुभव हो रही थीं। भावनाओं के साथ आनंद तो रहता ही है। असल में भावनाएँ ही घटनाओं का सार या चेतन आत्मा होती है। भावना के बिना तो घटना निष्प्राण और निर्जीव होती है। सम्भवतः स्वाधिष्ठान चक्र को इसीलिए इमोशनल बेगेज या भावनाओं का थैला भी कहते हैं। वैसे तो सभी चक्रौं के साथ विचारात्मक भावनाएँ जुड़ी होती हैं। स्वाधिष्ठान चक्र से इसलिए ज्यादा जुड़ी होती हैं, क्योंकि सम्भोग सबसे बड़ा अनुभव है, और उसी अनुभव के लिए आदमी अन्य सभी अनुभव हासिल करता है। मतलब कि सम्भोग का अनुभव हरेक अनुभव पर हावी होता है। विज्ञान भी इस बात को मानता है कि सम्भोग ही जीवन के हरेक पहलू के विकास के लिए मूल प्रेरक शक्ति है। क्योंकि स्वाधिष्ठान चक्र सम्भोग का केंद्र है, इसलिए स्वाभाविक है कि उससे सभी भावनाएं जुड़ी होंगी।

किसी भी चीज में रहस्य इसलिए लगता है, क्योंकि हम उसे समझ नहीं पाते, नहीं तो कुछ भी रहस्य नहीं है। जो कुछ समझ आ जाता है, वह विज्ञान ही लगता है। पूरी सृष्टि हाथ पे रखे आंवले की तरह सरल और प्रत्यक्ष है, यदि लोग योग विज्ञान के नजरिए से इसे समझें, अन्यथा इसके झमेलों का कोई अंत नहीं है।

मूलाधार को ग्राउंडिंग चक्र इसलिए कहते हैं क्योंकि वह मस्तिष्क को ऐसे ही अपने से जोड़ता है, जैसे पेड़ की जड़ पेड़ को अपने से जोड़कर रखती है। मूल का शाब्दिक अर्थ ही जड़ होता है। जैसे जड़ मिट्टी के सहयोग से अपनी ऊर्जा पैदा करके पेड़ को पोषण भी देती है और खुद भी पेड़ के पत्तों से अतिरिक्त ऊर्जा को अपनी ओर नीचे खींचकर खुद भी मजबूत बनती है, उसी तरह मूलाधार भी सम्भोग से अपनी ऊर्जा पैदा करके मस्तिष्क को ऊर्जा की आपूर्ति भी करता है, और मस्तिष्क में निर्मित फालतू विचारों की ऊर्जा को अपनी तरफ नीचे खींचकर खुद भी ताकतवर बनता है।

फिर एक दिन मैं फिर से उसी पुरानी झील के किनारे गया। एक पेड़ की छाँव में बैठ गया। मुझे अपनी सेहत भी ठीक नहीं लग रही थी, और मैं थका हुआ सा महसूस कर रहा था। लग रहा था कि जुकाम के वायरस का हमला हो रहा था मेरे ऊपर, क्योंकि एकदम से मौसम बदला था। अचानक भारी बारिश से भीषण गर्मी के बीच में एकदम से कड़ाके की ठंड पड़ी थी। उससे स्वाभाविक है कि मन भी कुछ बोझिल सा था। सोचा कि वहाँ शांति मिल जाए। गंगापुत्र भीष्म पितामह भी इसी तरह गंगा नदी के किनारे जाया करते थे शांति के लिए। मुझे तो लगता है कि यह एक रूपक कथा है। क्योंकि भीष्म पितामह आजीवन ब्रह्मचारी थे, इसलिए स्वाभाविक है कि उनकी यौन ऊर्जा बाहर की ओर बर्बाद न होकर पीठ की सुषुम्ना नाड़ी से ऊपर चढ़ती थी। इसे ही ही भीष्म पितामह का बारम्बार गंगा के पास जाना कहा गया है। गंगा नदी सुषुम्ना नाड़ी को कहा जाता है। क्योंकि सुषुम्ना नाड़ी अपनी ऊर्जा रूपी दुग्ध से बालक रूपी कुंडलिनी-मन का पोषण-विकास करती है, इसीलिए गंगारूपी सुषुम्ना को माँ कहा गया है। थोड़ी देर बाद मैं मीठी और ताज़ा हवा की लम्बी सांस लेते हुए उस पर ध्यान देने लगा। इससे पुराने भावनात्मक विचार मन में ऐसे उमड़ने लगे, जैसे तेज हवा चलने पर आसमान में धूल उमड़ आती है। अगर आदमी धूल को देखने लगे, तो उसका दम जैसा घुटता है, और मन उदास हो जाता है। यदि उस पर ध्यान न देकर केवल हवा को महसूस करे, तो वह प्रसन्नचित हो जाता है। मैंने भी उन विचारों की धूल पर ध्यान देना बंद कर दिया, और सांसों पर ध्यान देने लगा। विचार तो तब भी थे, पर तब परेशान नहीं कर रहे थे। सांस और विचार हमेशा साथ रहते हैं। आप उन्हें अलग नहीं कर सकते, ऐसे ही जैसे हवा और धूल साथ रहते हैं। हवा है, तो धूल भी है, और धूल है तो हवा भी है। अगर आप धूल हटाने के लिए दीवार आदि लगा दो, तो वहाँ हवा भी नहीं आएगी। इसी तरह यदि आप बलपूर्वक विचारों को दबाएंगे, तो सांस भी दब जाएगी। और ये आप जानते ही हैं कि सांस ही जीवन है। इसलिए विचारों को दबाना नहीं है, उनसे ध्यान हटाकर सांसों पर केंद्रित करना है। विचारों को आतेजाते रहने दो। जैसे धूल के कण थोड़ी देर उड़ने के बाद एकदूसरे से जुड़कर

या नमी आदि से भारी होकर नीचे बैठने लगते हैं, उसी तरह विचार भी श्रृंखलाबद्ध होकर मन के धरातल में गायब हो जाते हैं। बस यह करना है कि उन विचारों की धूल को ध्यान रूपी छेड़ा नहीं देना है। बाहर के विविध दृश्य नजारे और आवाजें मन के धरातल को मजबूत करते हैं, जिससे फालतू विचार उसपे लैंड करते रह सकें। इसीलिए लोग ऐसे कुदरती नजारों की तरफ भागते हैं। जैसे धूल का कुछ हिस्सा आसमान में दूर गायब हो जाता है और बाकि ज्यादातर हिस्सा फिर से उसी जमीं पर बैठता है, इसी तरह विचारों के उमड़ने से उनका थोड़ा हिस्सा ही गायब होता है, बाकि बड़ा हिस्सा पुनः उसी मन के धरातल पर बैठ जाता है। इसीलिए तो एक ही किस्म के विचार लम्बे समय तक बारबार उमड़ते रहते हैं, बहुत समय बाद ही पूरी तरह गायब हो पाते हैं। बारीक़ धूल जैसे हल्के विचार जल्दी गायब हो जाते हैं, पर मोटी धूल जैसे आसक्ति से भरे स्थूल विचार ज्यादा समय लेते हैं। इसीलिए यह नहीं समझना चाहिए कि एकबार के साक्षीभाव से विचार गायब होकर मन निर्मल हो जाएगा। लम्बे समय तक साधना करनी पड़ती है। आसान खेल नहीं है। इसलिए जिसे जल्दी हो और जो इंतजार न कर सके, उसे साधना करने से पहले सोच लेना चाहिए। वैसे भी मुझे लगता है कि यह दुनिया से कुछ दूरी बनाने वाली साधना उन्हीं लोगों के लिए योग्य है, जो अपनी कुंडलिनी को जागृत कर चुके हैं, या जो दुनिया के लगभग सभी अनुभवों को हासिल कर चुके हैं। आम लोग तो इससे गुमराह भी हो सकते हैं। आम लोगों के लिए तो व्यावहारिक कर्मयोग ही सर्वोत्तम है। हालांकि जो लोग एकसाथ विविध साधना मार्गों पर चलने की सामर्थ्य और योग्यता रखते हैं, उनके लिए ऐसी कोई पाबंदी नहीं। थोड़ी ही देर में मेरा शरीर खुद ही भिन्न-भिन्न सिटिंग पोज बनाने लगा, ताकि कुंडलिनी ऊर्जा को मूलाधार चक्र से ऊपर चढ़ने में आसानी हो। स्वतोभूत योगासनों को मैंने पहली बार ढंग से महसूस किया, हालांकि घर में बिस्तर पर रिलेक्स होते हुए मेरे आसन लगते ही रहते हैं, ख़ासकर शाम के 5-6 बजे के बीच। सम्भवतः ऐसा दिनभर की थकान को दूर करने के लिए होता है, संध्या का ऊर्जावर्धक प्रभाव भी होता है साथ में। तो लगभग सुबह के थकानरहित समय में झील के निकट मेरी कुंडलिनी ऊर्जा का उछालें मारने का मतलब था कि मेरी थकान काम के बोझ से नहीं हुई थी, बल्कि किसी आसन्न रोग की वजह से थी। वह उसका एडवांस में इलाज करने के लिए आई थी। कुंडलिनी ऊर्जा इंटेलिजेंट होती है, इसलिए सब समझती है। विचारों के प्रति साक्षीभाव के साथ कुछ देर तक लम्बी और गहरी साँसे लेने से कुंडलिनी ऊर्जा को ऊपर चढ़ाने वाला दबाव तैयार हो गया था। जूते के सोल की पिछली नोक की हल्की चुभन से मूलाधार चक्र आर्गेस्मिक आनंदमयी संवेदना के साथ बहुत उत्तेजित हुआ, जिससे कुंडलिनी ऊर्जा उफनती नदी की तरह ऊपर चढ़ने लगी। विभिन्न चक्रौं के साथ इड़ा, पिंगला और सुषुम्ना नाड़ियों में आर्गेस्मिक आनंदमयी संवेदना महसूस होने लगी। ऐसा लग रहा था कि जैसे कुंडलिनी ऊर्जा से पूरा शरीर रिचार्ज हो रहा था। साँसें भी आर्गेस्मिक आनंद से भर गई थीं। कुंडलिनी के साथ आगे के आज्ञा चक्र, स्वाधिष्ठान चक्र और वज्र शिखा के संयुक्त ध्यान से ऊर्जा आगे से नीचे के हिस्से में उतरकर सभी चक्रौं के साथ पूरे शरीर को शक्तियुक्त कर रही थी। दरअसल आमधारणा के विपरीत मूलाधार चक्र में अपनी ऊर्जा नहीं होती, बल्कि उसे संभोग से ऊर्जा मिलती है। मूलाधार को रिचार्ज किए बगैर ही अधिकांश लोग वहाँ से ऊर्जा उठाने का प्रयास उम्रभर करते रहते हैं, पर कम ही सफल हो पाते हैं। सूखे कुएँ में टुलु पम्प चलाने से क्या लाभ। मूलाधार के पूरी तरह डिस्चार्ज होने के बाद यौन अंगों, विशेषकर प्रॉस्टेट का दबाव बहुत कम या गायब हो जाता है। उससे फिर से मन सम्भोग की तरफ आकर्षित हो जाता है, जिससे मूलाधार फिर से रिचार्ज हो जाता है। वैसे तो योग आधारित साँसों से भी मूलाधार चक्र शक्ति से आवेशित हो जाता है, जो संन्यासियों के लिए एक वरदान की तरह ही है। चाय से प्रॉस्टेट समस्या बढ़ती है, ऐसा कहते हैं। दरअसल चाय से मस्तिष्क में रक्तसंचार का दबाव बढ़ जाता है, इसीलिए तो चाय पीने से सुहाने विचारों के साथ फील गुड महसूस होता है। इसका मतलब है कि फिर यौन अंगों से ऊर्जा को ऊपर चढ़ाने वाला चुसाव नहीं बनेगा। इससे कुंडलिनी ऊर्जा घूमेगी नहीं, जिससे यौन अंगों समेत पूरे शरीर के रोगी होने की सम्भावना बढ़ेगी। उच्च रक्तचाप से भी ऐसी ही सैद्धांतिक वजह से प्रॉस्टेट की समस्या बढ़ती है। ऐसा भी लगता है कि प्रॉस्टेट की इन्फेलेमेशन या उत्तेजना भी इसके बढ़ने की वजह हो सकती है। स्वास्थ्य वैज्ञानिक भी ऐसा ही अंदेशा जता रहे हैं। जरूरत से ज्यादा तांत्रिक सम्भोग से प्रॉस्टेट उत्तेजित हो सकती है। तांत्रिक वीर्यरोधन से एक चुसाव भी पैदा हो सकता है जिससे संक्रमित योनि का गंदा स्राव प्रॉस्टेट तक भी पहुंच सकता है, जिससे प्रोस्टेट में इन्फेलेमेशन और संक्रमण पैदा हो सकता है। इसे एंटीबायोटिक से ठीक करना भी थोड़ा मुश्किल हो सकता है। इसीलिए खूब पानी पीने को कहा जाता है, ताकि गंदा स्राव मूत्रनाल से बाहर धुल जाए। योनि-स्वास्थ्य का भी भरपूर ध्यान रखा जाना चाहिए। वैसे आजकल प्रोस्टेट की हर समस्या का इलाज है, प्रोस्टेट कैंसर का भी, यदि समय रहते जाँच में लाया जाए। क्योंकि पुराने जमाने में ऐसी सुविधाएं नहीं थीं, इसीलिए तंत्र विद्या को गुप्त रखा जाता था। इस ब्लॉग की एक पुरानी पोस्ट में कबूतर बने अग्निदेव को दिए माता पार्वती के श्राप को जो दिखाया गया है, जिसमें वे उसे उसके द्वारा किए घृणित कार्य की सजा के रूप में उसे लगातार जलन महसूस करने का शाप देती हैं, वह सम्भवतः प्रॉस्टेट के संबंध में ही है। योगी इस जलन की ऊर्जा को कुंडलिनी को देने के लिए पूर्ण सिद्धासन लगाते हैं। इसमें एक पाँव की एड़ी से मूलाधार पर दबाव लगता है, और दूसरे पाँव की एड़ी से आगे के

स्वाधिष्ठान चक्र पर। इसलिए यह अर्ध सिद्धासन से बेहतर है क्योंकि अर्धसिद्धासन में दूसरा पैर भी जमीन पर होने से स्वाधिष्ठान पर नुकीला जैसा संवेदनात्मक और आर्गेस्मिक दबाव नहीं लगता। इससे स्वाधिष्ठान की ऊर्जा बाहर नहीं निकल पाती। कुंडलिनी ऊर्जा के घूमते रहने से यह यौनता-आधारित सिलसिला चलता रहता है, और आदमी का विकास होता रहता है। हालांकि यह सिलसिला साधारण आदमी में भी चलता है, पर उसमें इसका मुख्य लक्ष्य द्वैतपूर्ण दुनियादारी से संबंधित ही होता है। जबकि कुंडलिनी योगी का लक्ष्य कुंडलिनी युक्त अद्वैतपूर्ण जीवनयापन होता है। साधारण आदमी में बिना किसी प्रयास के ऊर्जा चढ़ती है, इसलिए यह प्रक्रिया धीमी और हल्की होती है। जबकि कुंडलिनी योगी अपनी इच्छानुसार ऊर्जा को चढ़ा सकता है, क्योंकि अभ्यास से उसे ऊर्जा नाड़ियों का और उन्हें नियंत्रित करने का अच्छा ज्ञान होता है, जिससे शक्ति उसके वश में आ जाती है। तांत्रिक योगी तो इससे भी एक कदम आगे होता है। इसीलिए तांत्रिकों पर सामूहिक यौन शोषण के आरोप भी लगते रहते हैं। वे कठोर तांत्रिक साधना से शक्ति को इतना ज्यादा वश में कर लेते हैं कि वे कभी सम्भोग से थकते ही नहीं। ऐसा ही मामला एक मेरे सुनने में भी आया था कि एक हिमालयी क्षेत्र में मैदानी भूभाग से आए तांत्रिक के पास असली यौन आनंद की प्राप्ति के लिए महिलाओं की पंक्ति लगी होती थी। कुछ लोगों ने हकीकत जानकर उसे पीटा भी, फिर पता नहीं क्या हुआ। तांत्रिकों के साथ यह बहुत बड़ा धोखा होता है। आम लोग उनके कुंडलिनी अनुभव को नहीं देखते, बल्कि उनकी साधना के अंगभूत घृणित खानपान और आचार-विचार को देखते हैं। वे आम नहीं खाते, पेड़ गिनते हैं। इससे वे उनका अपमान कर बैठते हैं, जिससे उनकी तांत्रिक कुंडलिनी वैसे लोगों के पीछे पड़ जाती है, और उनका नुकसान करती है। इसी को देवता का खोट लगना, श्राप लगना, बुरी नजर लगना आदि कहा जाता है। इसीलिए तांत्रिक साधना को, विशेषकर उससे जुड़े तथाकथित कुत्सित आचारों-विचारों को गुप्त रखा जाता था। साधारण लोक परिस्थिति में भी तो लोग तांत्रिक विधियों का प्रयोग करते ही हैं, पर वे साधारण सम्भोग चाहते हैं, यौन योग नहीं। शराब से शबाब हासिल करना हो या मांसभक्षण से यौनसुख को बढ़ाना हो, सब में यही सिद्धांत काम करता है। ऐसी चीजों से दिमाग़ के विचार शांत होने से दिमाग़ में एक वैक्यूम पैदा हो जाता है, जो मूलाधार से ऊर्जा को ऊपर चूसता है। इससे आगे के चैनल से ऊर्जा नीचे आ जाती है। इससे ऊर्जा घूमने लगती है, जिससे सभी अंगों के साथ मूलाधार से जुड़े अंग भी पुनः सक्रिय और क्रियाशील हो जाते हैं। मुझे तो लगता है कि बीयर पीने से जो पेशाब खुल कर आता है, वह इससे यौनांगों का दबाव कम होने से ही आता है, न कि इसमें मौजूद पानी से, जैसा अधिकांश लोग समझते हैं। सीधे पानी पीने से तो पेशाब इतना नहीं खुलता, चाहे जितना मर्जी पानी पी लो। अल्कोहल का प्रभाव मिटने पर पुनः दबाव बन जाए, यह अलग बात है। अब कोई यह न समझ ले कि अल्कोहल से कुंडलिनी ऊर्जा को घूमने में मदद मिलती है, इसलिए यह स्वास्थ्य के लिए लाभप्रद है। हाहाहा। टेस्टॉस्टिरोन होर्मोन ब्लॉकर से इसलिए प्रॉस्टेट दबाव कम होता है, क्योंकि उससे इस होर्मोन की यौनाँग प्रेरक शक्ति क्षीण हो जाती है। इसके विपरीत, बहुत से आदर्शवादी पुरुष अपनी स्त्री को संतुष्ट नहीं कर पाते। मुझे मेरा एक दोस्त बता रहा था कि एक आदर्शवादी और संत प्रकार के उच्च सरकारी प्रोफेसर की पत्नि जो खुद भी एक सरकारी उच्च अधिकारी थी, उसने अपने कार्यालय से संबंधित एक बहुत मामूली से अविवाहित नवयुवक कर्मचारी से अवैध संबंध बना रखे थे। जब उन्हें इस बात का पता पुख्ता तौर पर चला, तो उनको इतना ज्यादा भावनात्मक सदमा लगा कि वे बेचारे सब कुछ यहीं छोड़कर विदेश चले गए, क्योंकि उन्हें पता चल गया था कि एक औरत को जब अश्लीलता का चस्का लग जाए तो उसे उससे पीछे हटाना बहुत मुश्किल है, हालांकि असम्भव नहीं है। हालांकि एक औरत के लिए व उसके अवैध प्रेमी के लिए ऐसा करना बहुत नुकसानदायक हो सकता है, विशेषकर यदि उसका असली प्रेमी या पति सिद्ध प्रेमयोगी हो। शिवपुराण के अनुसार जब शिव और पार्वती का विवाह हो रहा था, तो ब्रह्मा उस विवाह में पुरोहित की भूमिका निभा रहे थे। शिवपार्वती से पूजन करवाते समय ब्रह्मा की नजर पार्वती के पैर के नख पर पड़ गई। उसे वे मोहित होकर देखते ही रहे और पार्वती पर कमासक्त हो गए। इससे उनका वीर्यपात हो गया। शिव को इस बात का पता चल गया। इससे शिव इतने ज्यादा क्रोधित हुए कि प्रलय मचाने को तैयार हो गए। बड़ी मुश्किल से देवताओं ने उन्हें मनाया, फिर भी उन्होंने ब्रह्मा को भयंकर श्राप दे ही दिया। प्रलय तो टल गई पर ब्रह्मा की बहुत बड़ी दुर्गति हुई। यदि पार्वती के मन में भी विकार पैदा हुआ होता, और वह ब्रह्मा के ऊपर कमासक्त हुई होती, तो उसे भी शिव की कुंडलिनी शक्ति दंड देती। यदि वह शिव की अतिनिकट संगति के कारण उस दंड से अप्रभावित रहती, तो उस दंड का प्रभाव उससे जुड़े कमजोर मन वाले उसके नजदीकी संबंधियों पर पड़ता, जैसे उसकी होने वाली संतानेँ आदि। ऐसा सब शिव की इच्छा के बिना होता, क्योंकि कौन अपनी पत्नि को दंड देना चाहता है। दरअसल कुंडलिनी खुद ही सबकुछ करती है। यदि ऐसा कुत्सित कुकर्म अनजाने में हो जाए तो इसका प्रायश्चित यही है कि दोनों अवैध प्रेमी मन से एकदूसरे को भाई-बहिन समझें और यदि कभी अपनेआप मुलाक़ात हो जाए, तो एक दूसरे को भाई-बहिन कह कर सम्बोधित करें, और सच्चे मन से कुंडलिनी से माफी मांगे, ऐसा मुझे लगता है। जो हुआ, सो हुआ, उसे भूल जाएं। आगे के लिए सुधार किया जा सकता है। मेरे उपरोक्त ऊर्जा-उफान से मुझे ये लाभ मिला कि एकदम से मुझे छीकें शुरु हो गईं, और नाक से पानी बहने लगा, जिससे जुकाम का वायरस दो दिन में ही गायब हो

गया। गले तक तो वह लगभग पहुंच ही नहीं पाया। दरअसल वह कुंडलिनी ऊर्जा वायरस के खिलाफ इसी सुरक्षा चक्र को मजबूती देने के लिए उमड़ रही थी। इसी तरह एकबार कई दिनों से मैं किसी कारणवश भावनात्मक रूप से चोटिल अवस्था में था। शरीरविज्ञान दर्शन की भावना से कुंडलिनी मुझे स्वस्थ भी कर रही थी, पर कामचलाऊ रूप में ही। फिर एक दिन तांत्रिक कुंडलिनी योग की शक्ति से कुंडलिनी ऊर्जा लगातार मेरे दिल पर गिरने लगी। मैं मूलाधार, स्वाधिष्ठान और आज्ञा चक्र और नासिकाग्र के साथ छाती के बाईं ओर स्थित दिल पर भी ध्यान करने लगा। इससे दोनों कुंडलिनी चैनल भी महसूस हो रहे थे, और साथ में उससे दिल की ओर जाती हुई ऊर्जा भी और फिर पुनः नीचे उसी केंद्रीय चैनल में उसे जुड़ते हुए महसूस कर रहा था। यह सिलसिला काफी देर तक चलता रहा, जिससे मेरी यौन कुंडलिनी ऊर्जा से मेरा दिल बिल्कुल स्वस्थ हो गया। बाद में यह मेरे व्यवहार में एकाएक परिवर्तन से और लोगों के मेरे प्रति सकारात्मक व्यवहार से भी सिद्ध हो गया।

चलो, फिर से अध्यात्म की तरफ लौटते हैं। वैसे अध्यात्म भी दुनियादारी के बीच ही पल्लवित-पुष्पित होता है, उससे अलग रहकर नहीं, ऐसे ही जैसे सुंदर फूल काँटों के बीच ही उगते हैं। कांटे ही फूलों की शत्रुओं से रक्षा करते हैं। मैं पिछली पोस्ट में जो प्रकृति-पुरुष विवेक के बारे में बात कर रहा था, उसे अपने समझने के लिए थोड़ा विस्तार दे रहा हूँ, क्योंकि कई बार मैं यहाँ अटक जाता हूँ। चाहें तो पाठक भी इसे समझ कर फायदा उठा सकते हैं। वैसे है यह पूरी थ्योरी ही, प्रेक्टिकल से बिल्कुल अलग। हाँ, थ्योरी को समझ कर आदमी प्रेक्टिकल की ओर प्रेरित हो सकता है। जब कुछ क्षणों के लिए मुझे कुंडलिनी-पुरुष अपनी आत्मा से पूर्णतः जुड़ा हुआ महसूस हुआ, मतलब कि जब मैं प्रकृति से मुक्त पुरुष बन गया था, तब ऐसा नहीं था कि उस समय प्रकृति रूपी विचार और दृश्य अनुभव नहीं हो रहे थे। वे अनुभव हो रहे थे, और साथ में कुंडलिनी चित्र भी, क्योंकि वह भी तो एक विचार ही तो है। पर वे मुझे मुझ पुरुष के अंदर और उससे अविभक्त ऐसे महसूस हो रहे थे, जैसे समुद्र में लहरें होती हैं। इसका मतलब है कि वे उस समय प्रकृति रूप नहीं थे, क्योंकि उनकी पुरुष रूप आत्मा से अलग अपनी कोई सत्ता नहीं थी। आम साधारण जीवन में तो प्रकृति की अपनी अलग सत्ता महसूस होती है, हालांकि ऐसा मिथ्या होता है पर भ्रम से सत्य लगता है। दुनियादारी झूठ और भ्रम पर ही टिकी है। दरअसल कुंडलिनी चित्र अर्थात मन पुरुष और प्रकृति के मेल से बना होता है। जब वह निरंतर ध्यान से अज्ञानावृत आत्मा से एकाकार हो जाता है, तब वह शुद्ध अर्थात पूर्ण पुरुष बन पाता है। मतलब कि तब ही वह प्रकृति के बंधन से छूट पाता है। पूर्ण और शुद्ध पुरुष का असली अनुभव परमानंद स्वरूप जैसा होता है। इससे स्वाभाविक है कि उसके पूर्ण अनुभव के साथ भी तो मन के विचार चित्र तो उभरेंगे ही। पर तब वे ऐसे मिथ्या या आभासी महसूस होंगें जैसे चूने के ढेर में खींची लकीरें। मतलब उनकी सत्ता नहीं होगी, केवल पुरुष की सत्ता होगी। इसीलिए तो उस कुंडलिनी जागरण के चंद क्षणों में परमानंद के साथ सब कुछ पूरी तरह एक सा ही महसूस होता है, सबकुछ अद्वैत। जीवित मनुष्य में आनंद के साथ मन के विचार बंधे होते हैं। आनंद के साथ विचार आएंगे ही आएंगे। इस तरह से पूर्ण निर्विचार अवस्था के साथ आत्मरूप का अनुभव असम्भव के समान ही है जीवित अवस्था में। वैसे साधना की वह सर्वोच्च अवस्था होती है। वहाँ तक असंख्य आत्मज्ञानियों में केवल एक-आध ही पहुंच पाता है। उसीके पारलौकिक अनुभव को वेदों में लिखा गया है, जिसे आप्तवचन कहते हैं। उस पर विश्वास करने के इलावा पूर्ण मुक्त आत्मा की पारलौकिक अवस्था को जानने का कोई तरीका नहीं है। ऐसा नहीं है कि कुंडलिनी जागरण के बाद आदमी इस परमावस्था को प्राप्त नहीं कर सकता। वह कर सकता है, पर जानबूझकर नहीं करता। इसकी मुख्य वजह है परमावस्था का अव्यवहारिक होना। यह अवस्था संन्यास की तरह होती है। इस अवस्था में आदमी प्रतिस्पर्धात्मक दुनिया में भौतिक रूप से पिछड़ जाता है। यहाँ तक कि खाने के भी लाले पड़ सकते हैं। अभी मानव समाज इतना विकसित नहीं हुआ है कि इस अवस्था के योग्य उम्मीदवारों के भरणपोषण और सुरक्षा का उत्तरदायित्व संभाल सके। सम्भवतः प्राचीन भारत में कोई ऐसी कार्यप्रणाली विकसित कर ली गई थी, तभी तो उस समय संन्यासी बाबाओं का बोलबाला हुआ करता था। पर आज के तथाकथित आधुनिक भारत में ऐसे बाबाओं की हालत बहुत दयनीय प्रतीत होती है। प्राचीन भारत में समाज का, विशेषकर समाज के उच्च वर्ग का पूरा जोर कुंडलिनी जागरण के ऊपर होता था। यह सही भी है, क्योंकि कुंडलिनी ही जीवविकास की अंतिम और सर्वोत्तम ऊंचाई है। हिन्दुओं की अनेकों कुंडलिनी योग आधारित परम्पराओं में उपनयन संस्कार में पहनाए जाने वाले जनेऊ अर्थात यग्योपवीत के पीछे भी कुंडलिनी सिद्धांत ही काम करता है। इसे ब्रह्मसूत्र भी कहते हैं। इसका मतलब है ब्रह्म अर्थात कुंडलिनी की याद दिलाने वाला धागा। कई लोग कहते हैं कि यह बाईं बाजू की तरफ फिसल कर काम के बीच में अजीब सा व्यवधान पैदा करता है। सम्भवतः यह अंधे कर्मवाद से बचाने का एक तरीका हो। यह भी लगता है कि इससे यह शरीर के बाएं भाग को अतिरिक्त बल देकर इड़ा और पिंगला नाड़ियों को संतुलित करता है, क्योंकि बिना जनेऊ की साधारण परिस्थिति में आदमी का ज्यादा झुकाव दाईं तरफ ही होता है। इसे शौच के समय तब तक दाएं कान पर लटका कर रखा जाता है, जब तक आदमी शौच से निवृत होकर जल से पवित्र न हो जाए। इसके दो मुख्य लाभ हैं। एक तो यह कि शौच-स्नान

आदि के समय क्रियाशील रहने वाले मूलाधार चक्र की शक्तिशाली ऊर्जा कुंडलिनी को लगती रहती है, और दूसरा यह कि आदमी की अपवित्र अवस्था का पता अन्य लोगों को लगता रहता है। इससे एक फायदा यह होता है कि इससे शौच के माध्यम से फैलने वाले संक्रामक रोगों से बचाव होता है, और दूसरा यह कि शौच जाने वाले आदमी की शक्तिशाली कुंडलिनी ऊर्जा का लाभ उसके साथ उसके नजदीकी लोगों को भी मिलता है, क्योंकि इससे वे उस ऊर्जा का गलत मतलब निकालने से होने वाले अपने नुकसान से बचे रह कर कुंडलिनी लाभ प्राप्त करते हैं। इसी तरह कमर के आसपास बाँधी जाने वाली मेखला से नाभि चक्र और स्वाधिष्ठान चक्र स्वस्थ रहते हैं, जिससे पाचन सामान्य बना रहता है, और प्रॉस्टेट जैसी समस्याओं से भी बचाव होता है। यह अलग बात है कि क्रूर और अत्याचारी मुगल हमलावर औरंगजेब जनेऊ के कुंडलिनी विज्ञान को न समझते हुए प्रतिदिन तब खाना खाता था, जब तथाकथित काफ़िर लोगों के गले से सवा मन जनेऊ उतरवा लेता था। अफ़सोस की बात कि आज के वैज्ञानिक और लोकतान्त्रिक युग में भी विशेष वर्ग के लोग उसे अपना रोल मॉडल समझते हैं।

कुंडलिनी जागरण को वैज्ञानिक रूप से सिद्ध करने वाले शारीरिक चिह्न या मार्कर की खोज से ही असली आध्यात्मिक सामाजिक युग की शुरुआत हो सकती है

दोस्तो, मैं पिछले हफ्ते की पोस्ट में बता रहा था कि कैसे जनेऊ आदमी की कुंडलिनी को संतुलित और मजबूत करता है। विभिन्न कामों के बीच में इसके बाएं बाजू की तरफ खिसकते रहने से आदमी का ध्यान इस पर जाता रहता है, और कई बार वह इसे सीधा करने का प्रयास भी करता है। इससे उसका ध्यान खुद ही कुंडलिनी की तरफ जाता रहता है, क्योंकि जनेऊ कुंडलिनी और ब्रह्म का प्रतीक ही तो है। शौच के समय इसे दाएं कान पर इसलिए लटकाया जाता है, क्योंकि उस समय इड़ा नाड़ी का प्रभाव ज्यादा होता है। इसके शरीर के दाएं तरफ आने से मस्तिष्क के बाएं हिस्से अर्थात पिंगला नाड़ी को बल मिलता है। शौच की क्रिया को भी अक्सर स्त्रीप्रधान कहा जाता है, और इड़ा नाड़ी भी स्त्री प्रधान ही होती है। इसको संतुलित करने के लिए पुरुषप्रधान पिंगला नाड़ी को सक्रिय करना पड़ता है, जो मस्तिष्क के बाएं हिस्से में होती है। जनेऊ को दाएं कान पर टांगने से यह काम हो जाता है। शौच के दौरान साफसफाई में भी बाएं हाथ का प्रयोग ज्यादा होता है, जिससे भी दाएं मस्तिष्क में स्थित इड़ा नाड़ी को बल मिलता है। वैसे तो शरीर के दाएं अंग ज्यादा क्रियाशील होते हैं, जैसे कि दायां हाथ, दायां पैर ज्यादा मजबूत होते हैं। ये मस्तिष्क के पिंगला प्रधान बाएं हिस्से से नियंत्रित होते हैं। मस्तिष्क का यह पिंगला प्रधान बायां हिस्सा इसके इड़ा प्रधान दाएं हिस्से से ज्यादा मजबूत होता है आमतौर पर। जनेऊ के शरीर के बाएं हिस्से की तरफ खिसकते रहने से यह अप्रत्यक्ष तौर पर मस्तिष्क के दाएं हिस्से को मजबूती देता है। सीधी सी बात के तौर पर इसे यूँ समझो जैसा कि पिछली पोस्ट में बताया गया था कि शौच के समय कुंडलिनी ऊर्जा का स्रोत मूलाधार सक्रिय रहता है। उसकी ऊर्जा कुंडलिनी को तभी मिल सकती है, यदि इड़ा और पिंगला नाड़ी समान रूप से बह रही हों। इसके लिए शरीर के बाएं भाग का बल जनेऊ धागे से खींच कर दाएं कान तक और अंततः दाएं मस्तिष्क तक पहुंचाया जाता है। इससे आमतौर पर शिथिल रहने वाला दायां मस्तिष्क मज़बूत हो जाता है। इससे मस्तिष्क के दोनों भाग संतुलित होने से आध्यात्मिक अद्वैत भाव बना रहता है। वैसे भी उपरोक्तानुसार कुंडलिनी या ब्रह्म का प्रतीक होने से जनेऊ लगातार कुंडलिनी का स्मरण बना कर रखता ही है। अगर किसी कारणवश जनेऊ को शौच के समय कान पर रखना भूल जाओ, तो बाएं हाथ के अंगूठे से दाहिने कान को स्पर्श करने को कहा गया है, मतलब एकबार दाहिने कान को पकड़ने को कहा गया है। इससे बाएं शरीर को भी शक्ति मिलती है और दाएं मस्तिष्क को भी, क्योंकि बाएं शरीर की इड़ा नाड़ी दाएं मस्तिष्क में प्रविष्ट होती है। वैसे भी दायाँ कान दाएं मस्तिष्क के निकट ही है। इससे दाएं मस्तिष्क को दो तरफ से शक्ति मिलती है, जिससे वह बाएं मस्तिष्क के बराबर हो जाता है। यह अद्भुत प्रयोगात्मक आध्यात्मिक मनोविज्ञान है। मेरे यूनिवर्सिटी के एक प्रोफेसर मुझे अपनी नजरों में एक बेहतरीन संतुलित व्यक्ति मानते थे, एक बार तो उन्होंने एक परीक्षा के दौरान ऐसा कहा भी था। सम्भवतः वे मेरे अंदर के प्रथम अर्थात स्वप्नकालिक क्षणिक जागरण के प्रभाव को भांप गए थे। सम्भवतः मेरे जनेऊ का भी मेरे संतुलित व्यक्तित्व में बहुत बड़ा हाथ हो। वैसे पढ़ाई पूरी करने के बाद एकबार मैंने इसके बाईं बाजू की तरफ खिसकने को काम में रुकावट डालने वाला समझ कर कुछ समय के लिए इसे पहनना छोड़ भी दिया था, पर अब समझ में आया कि वैसा काम में रुकावट डालने के लिए नहीं था, अपितु नाड़ियों को संतुलित करने के लिए था। कोई यदि इसे लम्बा रखकर पेंट के अंदर से टाइटली डाल के रखे, तब यह बाईं बाजू की तरफ न खिसकते हुए भी लाभ ही पहुंचाता है, क्योंकि बाएं कंधे पर टंगा होने के कारण फिर भी इसका झुकाव बाईं तरफ को ही होता है।

कुंडलिनी जागरण से परोक्ष रूप से लाभ मिलता है, प्रत्यक्ष रूप से नहीं

पिछली पोस्ट में बताए गए कुंडलिनी जागरण रूपी प्रकृति-पुरुष विवेक से मुझे कोई सीधा लाभ मिलता नहीं दिखता। इससे केवल यह अप्रत्यक्ष लाभ मिलता है कि पूर्ण व प्रकृतिमुक्त शुद्ध पुरुष के अनुभव से प्रकृति-पुरुष के मिश्रण रूपी जगत के प्रति इसी तरह आसक्ति नष्ट हो जाती है, जैसे सूर्य के सामने दीपक फीका पड़ जाता है। जैसे शुद्ध चीनी खा लेने के बाद कुछ देर तक चीनी-मिश्रित चाय में मिठास नहीं लगती, उसी तरह शुद्ध पुरुष के अनुभव के बाद कुछ वर्षों तक पुरुष-मिश्रित जगत से रुचि हट जाती है। इससे आदमी के व्यवहार में सुधार होता है, और वह प्रकृति से मुक्ति की तरफ कदम दर कदम आगे बढ़ने लगता है। मुक्ति तो उसे इस तरह की मुक्त जीवनपद्धति से लम्बा जीवन जीने के बाद ही मिलती है, एकदम नहीं। तो फिर कुंडलिनी जागरण का इंतजार ही क्यों किया जाए, क्यों न सीधे ही मुक्त लोगों की तरह जीवन जिया जाए। मुक्त जीवन जीने में वेद-पुराण या शरीरविज्ञान दर्शन पुस्तक बहुत मदद करते हैं।आदमी चाहे तो अपने ऐशोआराम का दायरा बढ़ा कर कुंडलिनी जागरण के बाद भी ऐसे मुक्त व्यवहार को नकार सकता है, क्योंकि आदमी को हमेशा स्वतंत्र इच्छा मिली हुई है, बाध्यता नहीं। यह ऐसे ही है जैसे वह चाय में ज्यादा चीनी घोलकर चीनी खाने के बाद भी चाय की मिठास हासिल कर सकता है। ऐसा करने से तो उसे भी आम

जागृतिरहित आदमी की तरह कोई लाभ नहीं मिलेगा। कोई बुद्धिमान आदमी चाहे तो ऐशोआराम के बीच भी उसकी तरफ मन से अरुचि बनाए रखकर या बनावटी रुचि पैदा करके कुंडलिनी जागरण के बिना ही उससे मिलने वाले लाभ को प्राप्त कर सकता है। यह ऐसे ही है जैसे कोई व्यक्ति व्यायाम आदि से या चाय में कृत्रिम स्वीटनर डालकर नुकसानदायक चीनी से दूरी बना कर रख सकता है।

दूसरों के भीतर कुण्डलिनी प्रकाश दिखना चाहिए, उसका जनक नहीं

पिछली पोस्ट के अनुसार, लोग तांत्रिकों के आहार-विहार को देखते हैं, उनकी कुंडलिनी को नहीं। इससे वे गलतफहमी में उनका अपमान कर बैठते हैं, और दुख भोगते हैं। भगवान शिव का अपमान भी प्रजापति दक्ष ने इसी गलतफहमी में पड़कर किया था। इसी ब्लॉग की एक पोस्ट में मैंने दक्ष द्वारा शिव के अपमान और परिणामस्वरूप शिव के गणों द्वारा दक्ष यज्ञ के विध्वन्स की कथा रहस्योदघाटित की थी। कई लोगों को लग सकता है कि यह वैबसाईट हिन्दुप्रचारक है। पर दरअसल ऐसा नहीं है। यह वैबसाईट कुंडलिनी प्रचारक है। जिस किसी भी प्रसंग में कुंडलिनी दिखती है, चाहे वह किसी भी धर्म या संस्कृति से संबंधित क्यों न हो, यह वैबसाईट उसे उठा लेती है। अब क्योंकि सबसे ज्यादा कुंडलिनी-प्रसंग हिन्दु धर्म में ही हैं, इसीलिए यह वैबसाईट हिन्दु रंग से रंगी लगती है।

कुंडलिनी योगी चंचलता योगी की स्तरोन्नता से भी बनता है

इस हफ्ते मुझे एक और अंतरदृष्टि मिली। एक दिन एक आदमी मुझे परेशान जैसे कर रहा था। ऊँची-ऊँची बहस किए जा रहा था। अपनी दादागिरी जैसी दिखा रहा था। मुझे जरूरत से ज्यादा प्रभावित और मेनीपुलेट करने की कोशिश कर रहा था। स्वाभाविक था कि उसका वह व्यवहार व उसके जवाब में मेरा व्यवहार आसक्ति और द्वैत पैदा करने वाला था। हालांकि मैं शरीरविज्ञान दर्शन के स्मरण से आसक्ति और द्वैत को बढ़ने से रोक रहा था। वह दोपहर के भोजन का समय था। उससे वार्तालाप के कारण मेरा लंच का समय और दिनों की अपेक्षा आगे बढ़ रहा था, जिससे मुझे भूख भी लग रही थी। फिर वह चला गया, जिससे मुझे लंच करने का मौका मिल गया। शाम को मैं रोजमर्रा के योगाभ्यास की तरह कुंडलिनी योग करते समय अपने शरीर के चक्रौं का नीचे की तरफ जाते हुए बारी-बारी से ध्यान कर रहा था। जब मैं मणिपुर चक्र में पहुंच कर वहाँ कुंडलिनी ध्यान करने लगा, तब दिन में बहस करने वाले उस आदमी से संबंधित घटनाएं मेरे मानस पटल पर आने लगीं। क्योंकि नाभि में स्थित मणिपुर चक्र भूख और भोजन से संबंधित होता है, इसीलिए उस आदमी से जुड़ी घटनाएं उसमें कैद हो गईं या कहो उसके साथ जुड़ गईं, क्योंकि उससे बहस करते समय मुझे भूख लगी थी। क्योंकि यह सिद्धांत है कि मन में पुरानी घटना के शुद्ध मानसिक रूप में स्पष्ट रूप में उभरने से उस घटना का बीज ही खत्म हो जाता है, और मन साफ हो जाता है, इसलिए उसके बाद मैंने मन का हल्कापन महसूस किया। प्रायश्चित और पश्चाताप को इसीलिए किसी भी पाप की सबसे बड़ी सजा कहा जाता है, क्योंकि इनसे पुरानी पाप की घटनाएं शुद्ध मानसिक रूप में उभर आती हैं, जिससे उन बुरे कर्मों का बीज ही नष्ट हो जाता है। जब कर्म का नामोनिशान ही नहीं रहेगा, तो उससे फल कैसे मिलेगा। जब पेड़ का बीज ही जल कर राख हो गया, तो कैसे उससे पेड़ उगेगा, और कैसे उस पर फल लगेगा। इसी तरह हरेक कर्म किसी न किसी चक्र से बंध जाता है। उस कर्म के समय आदमी में जिस चक्र का गुण ज्यादा प्रभावी हो, वह कर्म उसी चक्र में सबसे ज्यादा बंधता है। वैसे तो हमेशा ही आदमी में सभी चक्रौं के गुण विद्यमान होते हैं, पर किसी एक विशेष चक्र का गुण सबसे ज्यादा प्रभावी होता है। भावनात्मक अवस्था में अनाहत चक्र ज्यादा प्रभावी होता है। यौन उत्तेजना या रोमांस में स्वाधिष्ठान चक्र ज्यादा प्रभावी होता है। मूढ़ता में मूलाधार, मधुर बोलचाल के समय विशुद्धि, बौद्धिक अवस्था में अज्ञाचक्र और ज्ञान या अद्वैत भाव की अवस्था में सहस्रार चक्र ज्यादा प्रभावी होता है। इसीलिए योग करते समय बारीबारी से सभी चक्रौं पर कुंडलिनी ध्यान किया जाता है ताकि सबमें बंधे हुए विविध प्रकार के आसक्तिपूर्ण कर्मों के संस्कार मिट सकें। मेरा आजतक का अधिकांश जीवन रोमांस और यौन उत्तेजना के साथ बीता है, ऐसा मुझे लगता है, इसलिए मेरे अधिकांश कर्म स्वाधिष्ठान चक्र से बंधे हैं। सम्भवतः इसीलिए मुझे स्वाधिष्ठान चक्र पर कुंडलिनी ध्यान से सबसे ज्यादा राहत मिलती है। आसक्ति के कारण ही चक्र ब्लॉक हो जाते हैं, क्योंकि कुंडलिनी ऊर्जा उन पर एकत्रित होती रहती है, और ढंग से घूम नहीं पाती। तभी तो आपने देखा होगा कि जो लोग चुस्त और चंचल होते हैं, वे हरफनमौला जैसे होते हैं। हरफनमौला वे इसीलिए होते हैं क्योंकि वे किसी भी विषय से ज्यादा देर चिपके नहीं रहते, जिससे किसी भी विषय के प्रति उनमें आसक्ति पैदा नहीं होती। वे लगातार विषय बदलते रहते हैं, इसलिए वे चंचल लगते हैं। वैसे चंचलता को अध्यात्म की राह में रोड़ा माना जाता है, पर तंत्र में तो चंचलता का गुण मुझे सहायक लगता है। ऐसा लगता है कि तंत्र के प्रति कभी इतनी घृणा पैदा हुई होगी आम जनमानस में कि इससे जुड़े सभी विषयों को घृणित और अध्यात्मविरोधी माना गया। इसी चंचलता से उत्पन्न अनासक्ति से कुंडलिनी ऊर्जा के घूमते रहने से ही चंचल व्यक्ति ऊर्जावान लगता है। स्त्री स्वभाव होने के कारण चंचलता भी मुझे तंत्र के पंचमकारों का अंश ही लगती है। बौद्ध दर्शन

का क्षणिकवाद भी तो चंचलता का प्रतीक ही है। मतलब कि सब कुछ क्षण भर में नष्ट हो जाता है, इसलिए किसी से मन न लगाओ। बात भी सही और वैज्ञानिक है, क्योंकि हरेक क्षण के बाद सब कुछ बदल जाता है, बेशक स्थूल नजर से वैसा न लगे। इसलिए किसी चीज से चिपके रहना मूर्खता ही लगती है। पर तार्किक लोग पूछेंगे कि फिर बुद्धिस्ट लोग ध्यान के बल से एक ही कुंडलिनी से क्यों चिपके रहते हैं उम्रभर। तो इसका जवाब है कि कुंडलिनी के इलावा अन्य सभी कुछ से अपनी चिपकाहट छुड़ाने के लिए ही वे कुंडलिनी से चिपके रहते हैं। गोंद सारा कुंडलिनी को चिपकाने में खर्च हो जाता है, बाकि दुनिया को चिपकाने के लिए बचता ही नहीं। पूर्णावस्था प्राप्त होने पर तो कुंडलिनी से भी चिपकाहट खुद ही छूट जाती है। इसीलिए मैं चंचलता को भी योग ही मानता हुँ, अनासक्ति योग। चंचलता योग भी कुंडलिनी योग की तरफ ले जाता है। जब आदमी कभी ऐसी अवस्था में पहुंचता है कि वह चंचलता योग को जारी नहीं रख पाता है, तब वह खुद ही कुंडलिनी योग की तरफ झुक जाता है। उसे अनासक्ति का चस्का लगा होता है, जो उसे चंचलता योग की बजाय कुंडलिनी योग से मिलने लगती है। चंचलता के साथ जब शरीरविज्ञान दर्शन जैसी अद्वैत भावना का तड़का लगता है, तब वह चंचलता योग बन जाती है। हैरानी नहीं होनी चाहिए यदि मैं कहूँ कि मैं चंचलता योगी से स्तरोन्नत होकर कुंडलिनी योगी बना। चंचलता योग को कर्मयोग का पर्यायवाची शब्द भी कह सकते हैं क्योंकि दोनों में कोई विशेष भेद नहीं है। कई बार कुंडलिनी योगी को डिमोट होकर फिर से चंचलता योगी भी बनना पड़ता है। यहाँ तक कि जागृत व्यक्ति की डिमोशन भी हो जाती है, बेशक दिखावे के लिए या दुनियादारी के पेचीदे धंधे चलाने के लिए ही सही। प्राचीन भारत में जागृत लोगों को अधिकांशतः संन्यासी बना दिया जाता था। सम्भवतः यह इसलिए किया जाता था ताकि हर कोई अपने को जागृत बताकर मुफ्त की सामाजिक सुरक्षाएं प्राप्त न करता। संन्यास के सारे सुखों को छोड़ने के भय से संभावित ठग अपनी जागृति का झूठा दावा पेश करने से पहले सौ बार सोचता। इसलिए मैं वैसी सुरक्षाओं को अपूर्ण मानता हुँ। क्या लाभ ऐसी सुरक्षाओं का जिसमें आदमी खुलकर सुख ही न भोग सके, यहाँ तक कि सम्भोग सुख भी। मैं तो ओशो महाराज वाले सम्पन्न संन्यास को बेहतरीन मानता हुँ, जिसमें वे सभी सुख सबसे बढ़कर भोगते थे, वह भी संन्यासी रहते हुए। सुना है कि उनके पास बेहतरीन कारों का जखीरा होता था स्वयं के ऐशोआराम के लिए। हालांकि मुझे उनकी अधिकांश प्रवचन शैली वैज्ञानिक या व्यावहारिक कम और दार्शनिक ज्यादा लगती है। वे छोटीछोटी बातों को भी जरूरत से ज्यादा गहराई और बोरियत की हद तक ले जाते थे। यह अलग बात है कि फिर भी उनके प्रवचन मनमोहक या सममोहक जैसे लगते थे कुछ देर के लिए। मैं खुद भी उनकी एक पुस्तक से उच्च आध्यात्मिक लक्ष्य की ओर प्रेरित हुआ हुँ। उस पुस्तक का नाम था, तंत्र, अ सुप्रीम अंडरस्टेंडिंग। हालांकि उसे पढ़ कर ऐसा लगा कि छोटी सी बात समझने के लिए बहुत समय लगा और बहुत विस्तृत या सजावटी लेख पढ़ना पड़ा। दरअसल उनकी शैली ही ऐसी है। उनकी रचनाएं इतनी ज्यादा व्यापक और विस्तृत हैं कि उनमें से अपने काम की चीज ढूंढना उतना ही मुश्किल है, जितना भूसे में सुई ढूंढना है। यह मेरी अपनी सीमित सोच है। हो सकता है कि यह गलत हो। आज के व्यस्त युग में इतना समय किसके पास है। फिर भी उनके विस्तार में जो जीवंतता, व्याव्हारिकता और सार्थकता है, वह अन्य विस्तारों में दृष्टिगोचर नहीं होती। मैं अगली पोस्ट में इस पर थोड़ा और प्रकाश डालूंगा। सभी जागृत लोगों को विज्ञान ही ऐसा सम्पन्न संन्यास उपलब्ध करा सकता है। शरीर या मस्तिष्क में जागृति को सिद्ध करने वाला चिन्ह या मार्कर जरूर होता होगा, जिसे विज्ञान से पकड़ा जा सके। फिर वैसे मार्कर वाले को जागृत पुरुष की उपाधि और उससे जुड़ी सर्वश्रेष्ठ सुविधाएं वैसे ही दी जाएंगी, जैसे आज डॉक्टरेट की परीक्षा पास करने वाले आदमी को दी जाती हैं। फिर सभी लोग जागृति की प्राप्ति के लिए प्रेरित होंगे जिससे सही में आध्यात्मिक समाज का उदय होगा।

मैदानी क्षेत्रों में तंत्रयोग निर्मित मुलाधार में कुंडलिनी शक्ति का दबाव पहाड़ों में सहस्रार की तरफ ऊपर चढ़कर कम हो जाता है

जिन पंचमकारों की ऊर्जा से आदमी कुंडलिनी जागरण के करीब पहुंचता है, वे कुंडलिनी जागरण में बाधक भी हो सकते हैं तांत्रिक कुंडलिनी सम्भोग को छोड़कर। दरअसल कुंडलिनी जागरण सत्वगुण की चरमावस्था से ही मिलता है। कुंडलिनी सम्भोग ही सत्वगुण को बढ़ाता है, अन्य सभी मकार रजोगुण और तमोगुण को ज्यादा बढ़ाते हैं। सतोगुण से ही कुंडलिनी सहस्रार में रहती है, और वहीं पर जागरण होता है, अन्य चक्रौं पर नहीं। दरअसल सतोगुण से आदमी का शरीर सुस्त व ढीला व थकाथका सा रहता है। हालांकि मन और शरीर में भरपूर जोश और तेज महसूस होता है। पर वह दिखावे का ज्यादा होता है। मन और शरीर पर काम का जरा सा बोझ डालने पर भी शरीर में कंपन जैसा महसूस होता है। आनंद बना रहता है, क्योंकि सहस्रार में कुंडलिनी क्रियाशीलता बनी रहती है। यदि तमोगुण या रजोगुण का आश्रय लेकर जबरदस्ती बोझ बढ़ाया जाए, तो कुंडलिनी सहस्रार से नीचे उतर जाती है, जिससे आदमी की दिव्यता भी कम हो जाती है। फिर दुबारा से कुंडलिनी को सहस्रार में क्रियाशील करने के लिए कुछ दिनों तक समर्पित तांत्रिक योगाभ्यास करना पड़ता है। यदि साधारण योगाभ्यास किया जाए तो बहुत दिन या महीने लग सकते

हैं। गुणों के संतुलित प्रयोग से तो कुंडलिनी पुरे शरीर में समान रूप से घूमती है, पर सहस्रार में उसे क्रियाशील करने के लिए सतोगुण की अधिकता चाहिए। ऐसा समझ लो कि तीनों गुणों के संतुलन से आदमी नदी में तैरता रह पाता है, और सतोगुण की अधिकता में बीचबीच में पानी में डुबकी लगाता रहता है। डुबकी तभी लगा पाएगा जब तैर रहा होगा। शांत सतोगुण से जो ऊर्जा की बचत होती है, वह कुंडलिनी को सहस्रार में बनाए रखने के काम आती है। ऊर्जा की बचत के लिए लोग साधना के लिए एकांत निवास ढूंढते हैं। गाँव देहात या पहाड़ों में इतना ज्यादा शारीरिक श्रम करना पड़ता है कि वीर्य शक्ति को ऊपर चढ़ाने के लिए ऊर्जा ही नहीं बचती। इसीलिए वहाँ तांत्रिक सम्भोग का कम बोलबाला होता है। हालांकि पहाड़ और मैदान का मिश्रण तंत्र के लिए सर्वोत्तम है। पहाड़ की प्राकृतिक शक्ति प्राप्त करने से तरोताज़ा आदमी मैदान में अच्छे से तांत्रिक योगाभ्यास कर पाता है। बाद में उस मैदानी अभ्यास के पहाड़ में ही कुंडलिनी जागरण के रूप में फलीभुत होने की ज्यादा सम्भावना होती है, क्योंकि वहाँ के विविध मनमोहक प्राकृतिक नज़ारे कुंडलिनी जागरण के लिए चिंगारी का काम करते हैं। मैदानी क्षेत्रों में तंत्रयोग निर्मित मूलाधार और स्वाधिष्ठान चक्रौं से जुड़े अंगों में कुंडलिनी शक्ति का दबाव पहाड़ों में सहस्रार की तरफ ऊपर चढ़कर कम हो जाता है। ऐसा इसलिए होता है क्योंकि पहाड़ों की गगनचुम्बी पर्वतश्रृंखलाएं कुंडलिनी को ऊपर की ओर खींचती हैं। पहाड़ों में गुरुत्वाकर्षण कम होने से भी कुंडलिनी शक्ति मूलाधार से ऊपर उठती रहती है, जबकि मैदानों में गुरुत्व बल अधिक होने से वह मूलाधार के गड्ढे में गिरते रहने की चेष्टा करती है। दरअसल कुंडलिनी शक्ति सूक्ष्म रूप में उस खून में ही तो रहती है, जो नीचे की ओर बहता है। सम्भवतः जगद्गुरु आदि शंकराचार्य ने पहाड़ों के इसी दिव्यगुण के कारण इन्हें चार धाम यात्रा में प्रमुखता से शामिल किया था। इसी वजह से पहाड़ पर्यटकों से भरे रहते हैं। सम्पन्न लोग तो एक घर पहाड़ में और एक घर मैदान में बनाते हैं। सम्भवतः भारत को इसीलिए कुंडलिनी राष्ट्र कहा जाता है, क्योंकि यहाँ मैदानों और पहाड़ों का अच्छा और अनुकूल अनुपात है। सादे आहारविहार वाले तो इस वजह से शक्ति अवशोषक सम्भोग को ही घृणित मानने लगते हैं। इसी वजह से तंत्र का विकास पंजाब जैसे अनुकूल भौतिक परिवेशों में ज्यादा हुआ। इसी तरह बड़े शहरों में आराम तो मिलता है, पर शांति नहीं। इससे ऊर्जा की बर्बादी होती है। इसीलिए छोटे, अच्छी तरह से प्लानड और शांत, सुविधाजनक, मनोरम व अनुकूल पर्यावरण वाले स्थानों पर स्थित, विशेषकर झील आदि विशाल जलराशि युक्त स्थानों पर स्थित शहर तंत्रयोग के लिए सर्वोत्तम हैं। राजोगुण और तमोगुण से शरीर की क्रियाशीलता पर विराम ही नहीं लगता, जिससे ऊर्जा उस पर खर्च हो जाती है, और कुंडलिनी को सहस्रार में बनाए रखने के लिए कम पड़ जाती है। बेशक दूसरे चक्रौं पर कुंडलिनी भरपूर चमकती है, पर वहाँ जागरण नहीं होता। सम्भवतः यह अलग बात है कि एक निपुण तांत्रिक सभी पंचमकारों के साथ भी सत्त्वगुण बनाए रख सकता है। जब कुंडलिनी सहस्रार में क्रियाशील होती है तो खुद ही सतोगुण वाली चीजों की तरफ रुझान बढ़ जाता है, और रजोगुण या तमोगुण वाली चीजों के प्रति अरुचि पैदा हो जाती है। यह अलग बात है कि कुंडलिनी को सहस्रार के साथ सभी चक्रौं में क्रियाशील करने के लिए तीनों गुणों की संतुलित अवस्था के साथ पर्याप्त ऊर्जा की उपलब्धता की महती भूमिका है। हालांकि कुंडलिनी जागरण सतोगुण की प्रचुरता वाली अवस्था में ही प्राप्त होता है।

कुंडलिनी योग बनाम परमाणु विश्वयुद्ध

कुंडलिनी ऊर्जा ही नीलकंठ शिव महादेव के हलाहल विष को नष्ट करती है

दोस्तों, मैं हाल ही में एक स्थानीय मेले में गया। वहाँ मैं ड्रेगन ट्रेन को निहारने लगा। उसका खुले दांतों वाला मुंह दिखते ही मेरे अंदर ऊर्जा मुलाधार से ऊपर उठकर घूमने जैसी लग जाती थी। हालांकि यह हल्का आभास था, पर आनंद पैदा करने वाला था, लगभग वैसा ही जैसा शिवलिंगम के दर्शन से महसूस होता है। स्थानीय संस्कृति के अनुसार बाहरी अभिव्यक्ति के तरीके बदलते रहते हैं, पर मूल चीज एक ही रहती है। इसी के संबंध में मैं पिछली पोस्ट में बता रहा था कि कैसे गुस्से आदि से कुंडलिनी शक्ति मस्तिष्क से नीचे उतरकर यौद्धा अंगों को चली जाती है। इससे मस्तिष्क में स्मरण शक्ति और भावनाएं क्षीण हो जाती हैं। भावनाएँ बहुत सारी ऊर्जा को खाती हैं। इसीलिए तो तीखी भावनाओं या भावनात्मक आघात के बाद आदमी अक्सर बीमार पड़ जाता है। आपने सुना होगा कि फलां आदमी अपने किसी प्रिय परिचित को खोने के बाद बीमार पड़ गया या चल बसा। गहरे तनाव के दौरान दिल का दौरा पड़ना तो आजकल आम ही हो गया है। शरीरविज्ञान दर्शन से अनियंत्रित भावनाओं पर लगाम लगती है। उपरोक्त मनोवैज्ञानिक विश्लेषण से इसमें भी कोई आश्चर्य नहीं होना चाहिए कि ड्रेगन के ध्यान से या उसको अपने शरीर पर आरोपित करने से कुंडलिनी शक्ति विभिन्न चक्रौं पर उजागर होने लगती है। सम्भवतः बुद्धिस्टों के रैथफुल डाइटि भी इसी सिद्धांत से कुंडलिनी की मदद करते हैं। दरअसल विभिन्न धर्मशास्त्रों में जो आचार शिक्षा दी जाती है, उसके पीछे यही कुंडलिनी विज्ञान छुपा है। सत्य बोलो, चोरी न करो, क्रोध न करो, मीठा बोलो, हमेशा प्रसन्न व हँसमुख रहो, आसक्ति न करो आदि वचन हमें अवैज्ञानिक लगते हैं, पर इनके पीछे की वजह बहुमूल्य ऊर्जा को बचा कर उसे कुंडलिनी को उपलब्ध कराना ही है, ताकि वह जल्दी से जल्दी जागृत हो सके। कइयों को इसमें केवल स्वास्थ्य विज्ञान ही दिखता है, पर इसमें आध्यात्मिक विज्ञान भी छुपा होता है। ड्रेगन, शेर आदि हिंसक जीवों की ऊर्जा जब मस्तिष्क से नीचे उतरती है, तब सबसे पहले चेहरे, जबड़े और गर्दन पर आती है। इसीलिए तो क्रोध भरे मुख से गुर्राते हुए ये जबड़े और गर्दन की कलाबाजी पूर्ण गतियों से शिकार के ऊपर टूट पड़ते हैं। फिर कुछ अतिरिक्त ऊर्जा आगे की टांगों पर भी आ जाती है, जिससे ये शिकार को कस कर पकड़ लेते हैं। जब इन क्रियाओं से दिल थक जाता है, तब अतिरिक्त ऊर्जा दिल को भी मिलती है। उसके बाद ऊर्जा पेट को पहुंचती है, जिससे भूख बढ़ती है। इससे वह और हमलावर हो जाता है, क्योंकि वहाँ से ऊर्जा बैक चैनल से वापिस ऊपर लौटने लगती है, और टॉप पर पहुंचकर एकदम से जबड़े को उतर जाती है। जब इतनी मेहनत के बाद भी शिकार काबू में न आकर भागने लगता है, तो ऊर्जा टांगों में पहुंच कर शिकारी को उसके पीछे भगाने लगती है। थोड़ी देर बाद वह ऊर्जा मस्तिष्क को वापिस चली जाती है, और शिकारी पशु थक कर बैठ जाता है। फिर वह अपनी ऊर्जा को नीचे उतारने के लिए चेहरे को विकृत नहीं करता क्योंकि तब उसे पता लग जाता है कि इससे कोई फायदा नहीं होने वाला। वह इतना थक जाता है कि उसके पास ऊर्जा उतारने के लिए भी ऊर्जा नहीं बची होती। ऊर्जा उतारने के लिए भी ऊर्जा चाहिए होती है। इसीलिए उस समय वह गाय की तरह शांत, दयावान, अहिंसक और सदगुणों से भरा लगता है, उसकी स्मरणशक्ति और शुभ भावनाएँ लौट आती हैं, क्योंकि उस समय उसका मस्तिष्क ऊर्जा से भरा होता है। यह अलग बात है कि मस्तिष्क से नीचे उतरी हुई ऊर्जा उसे अंधकार के रूप में महसूस होती है, कुंडलिनी चित्र के रूप में नहीं, क्योंकि निम्न जीव होने से उसमें दिमाग़ भी कम है, और वह कुंडलिनी योगी भी नहीं है। दरअसल जो शिव ने विष ग्रहण करके उसे गले में फँसा कर रखा था, वह आदमी के मस्तिष्क की दुर्भावनाओं के रूप में अभिव्यक्त ऊर्जा ही है। विष का पान किया, मतलब आम दुनिया की बुरी बातें और बुरे दृश्य नकारात्मक ऊर्जा के रूप में कानों और आँखों आदि से अंदर प्रविष्ट हो गए। वह नकारात्मक ऊर्जा जब विशुद्धि चक्र पर पहुंचती है, तब वह कुंडलिनी ऊर्जा में रूपांतरित होकर वहाँ लम्बे समय तक फंसी रहती है। इसकी वजह है गर्दन की स्थिति और बनावट। गर्दन सिर और धड़ के जोड़ की तरह है, जो सबसे ज्यादा गतिशील है। जैसे पाईप आदि के बीच में स्थित लचीले और मुलायम जोड़ों पर पानी या उसमें मौजूद मिट्टी आदि जम कर फंस जाते हैं, उसी तरह गर्दन में ऊर्जा फंसी रह जाती है। इसीलिए तो भगवान शिव से वह विष न तो उगलते बना और न ही निगलते, वह गले में ही फंसा रह गया, इसीलिए शिव नीलकंठ कहलाते हैं। इसीलिए कहते हैं कि जिसने विशुद्धि चक्र को सिद्ध कर दिया, उसने बहुत कुछ सिद्ध कर लिया। दरअसल अगर कुंडलिनी शक्ति को गले से नीचे के किसी चक्र पर उतारा जाए, तो वह एकदम से घूम कर दुबारा मस्तिष्क में पहुंच जाती है, और वहाँ तनाव के दबाव को बढ़ाती है। हालांकि फिर ज्यादातर मामलों में वह सकारात्मक या अद्वैतात्मक कुंडलिनी ऊर्जा के रूप में महसूस होती है, नकारात्मक या द्वैतात्मक ऊर्जा के रूप में नहीं। हृदय चक्र पर भी काफी देर तक स्थिर रहती है, नाभि चक्र और उसके नीचे के चक्रौं से तो पेट की सिकुड़न के साथ एकदम वापिस मुड़ने लगती है। यद्यपि फिर यह सकारात्मक कुंडलिनी ऊर्जा है, लेकिन मस्तिष्क में इसके वापस बुरे विचारों में परिवर्तित होने की संभावना तब भी बनी ही रहती है। वह ऊर्जा योद्धा अंगों से उठापटक भी करवा सकती है। इसीलिए उसे गले के विशुद्धि चक्र पर रोककर रखा जाता है।

मतलब कि अगर भगवान शिव तनाव रूपी जहर को गले से नीचे उतारकर पी जाए, तो वे विनाशकारी तांडव नृत्य से दुनिया में तबाही भी मचा सकते हैं, या वह रूपांतरित जहर उनके पेट से चूस लिया जाएगा, और वह रक्त में मिलकर पुनः मस्तिष्क में पहुंच जाएगा। मस्तिष्क में जहर पहुंचने का अर्थ है, अज्ञानरूपी या मनोदोष रूपी अंधकार के रूप में मृत्यु की सम्भावना। मनोदोषों से दुनिया में फिर से तबाही का खतरा पैदा हो जाएगा। सम्भवतः कुंडलिनी शक्ति भोजन के साथ पेट में पहुंचती है, और वहाँ से इसी तरह मस्तिष्क में पहुंच जाती है। हालांकि, तथाकथित विकृत ऊर्जा रूपी जहर पीने के बाद, मस्तिष्क में पुन: अवशोषण के साथ, थोड़े अतिरिक्त विचारशील प्रयास के साथ लंबे समय तक इसके कुंडलिनी ऊर्जा में रूपांतरित बने रहने की अधिकतम संभावना होती है। शिव जहर को उगल भी नहीं सकते, क्योंकि अगर वे उसे बाहर उगलते हैं तो भी उससे जीवों का विनाश हो सकता है। आदमी के मस्तिष्क की दुर्भावनाएं यदि बदजुबानी, गुस्से, बुरी नजर या मारपीट आदि के रूप में बाहर निकल जाएं, तो स्वाभाविक रूप से वे अन्य लोगों और जीवजंतुओं का अहित ही करेंगी। उससे समाज में आपसी वैमनस्य और हिंसा आदि दोष फैलेंगे। इसीलिए लोग कहते हैं कि फलां आदमी को गुस्सा तो बहुत आया पर वह उसे पी गया। दरअसल गुस्सा पीआ नहीं जाता, उसे गले में अटकाकर रखा जाता है, पीने से तो वह फिर से दिमाग़ में पहुंच जाएगा। इसीलिए कई लोगों को आपने परेशान होकर कहते हुए सुना होगा, मेरे तो गले तक आ गई। दरअसल कमजोर वर्ग के लोग ऐसा ज्यादा कहते हैं, क्योंकि न तो वे परेशानी को निगल सकते हैं, और न ही उगल सकते हैं, लोगों के द्वारा बदले में सताए जाने के डर से। दरअसल वे सबसे खुश होते हैं भोले शंकर की तरह, परेशानी को गले में फँसाए रखने के कारण। वे परेशान नहीं होते, परेशानी का उचित प्रबंधन करने के कारण। परेशान वे औरों को लगते हैं, क्योंकि उन्हें परेशानी को प्रबंधित करना नहीं आता। बहुत से लोगों को नीले गले वाले शिव बेचारे लग सकते हैं, पर बेचारे तो वे लोग खुद हैं, जो उन्हें समझ नहीं पाते। शिव किसीके डर की वजह से विष को गले में धारण नहीं करते, बल्कि अपने पुत्र समान सभी जीवों के प्रति दया के कारण ऐसा करते हैं। भगवान शिव सारी सृष्टि को बनाते और उसका पूरा कार्यभार सँभालते हैं। इसलिए स्वाभाविक है कि उनका दिमाग़ भी तनाव और अवसाद से भर जाता होगा। वह तनाव गुस्से के रूप में दुनिया के ऊपर न निकले, इसीलिए वे तनाव रूपी विष को अपने गले में धारण करके रखते हैं। क्योंकि रक्त का रंग भी लाल-नीला ही होता है, जो शक्ति का परिचायक है, इसीलिए उनका गला नीला पड़ जाता है। वे एक महान योगी की तरह व्यवहार करते हैं।

समुद्र मंथन या पृथ्वी-दोहन मानसिक दोषों के रूप में विष उत्पन्न करता है, जिसे शिव जैसे महापुरुषों द्वारा पचाया या नष्ट किया जाता है

कहते हैं कि वह हलाहल विष समुद्रमंथन के दौरान निकला था। उसमें और भी बहुत सी ऐश्वर्यमय चीजें निकली थीं। समुद्र का मतलब संसार अर्थात पृथ्वी है, मंथन का मतलब दोहन है, ऐश्वर्यशाली चीजें आप देख ही रहे हैं, जैसे कि मोटरगाड़ियां, कम्प्यूटर, हवाई जहाज, परमाणु रिएक्टर आदि अनगिनत मशीनें। आज भी ऐसा ही महान मंथन चल रहा है। अनगिनत नेता, राष्ट्रॉध्यक्ष, वैश्विक संस्थाएं, वैज्ञानिक और तकनीशियन समुद्रमंथन के देवताओं और राक्षसों की तरह है। इस आधुनिक समुद्रमंथन से पैदा क्रोध, ईर्ष्या, अहंकार आदि मन के दोषों के रूप में पैदा होने वाले विष को पीने की हिम्मत किसी में नहीं है। दुनिया दो धड़ों में बंट गई है। एकतरफ तथाकथित राक्षस या तानाशाह लोग हैं, तो दूसरी तरफ तथाकथित देवता या लोकतान्त्रिक लोग हैं। इसीलिए पूरी दुनिया आज परमाणु युद्ध के मुहाने पर खड़ी है। सभी को इंतजार है कि किसी महापुरुष के रूप में शिव आएंगे और इस विष को पीकर दुनिया को नष्ट होने से बचाएंगे।

आज के समय में जिम व्यायाम के साथ योग बहुत जरूरी है

बहुत सी खबरें सुनने को मिल रही हैं कि फलां कलाकार या सेलिब्रिटी या कोई अन्य जिम व्यायाम करते हुए दिल के दौरे का शिकार होकर मर गया। मुझे लगता है कि वे पहले ही तनाव से भरे जीवन से गुजर रहे होते हैं। इससे उनके दिल पर पहले ही बहुत बोझ होता है। फिर बंद कमरे जैसे घुटन भरे स्थान पर भारी व्यायाम से वह बोझ और बढ़ जाता है, जिससे अचानक दिल का दौरा पड़ जाता है। पहले योग से तनाव को कम कर लेना चाहिए। उसके बाद ही भौतिक व्यायाम करना चाहिए, अगर जरूरत हो तो, और जितनी झेलने की क्षमता हो। योग से नाड़ियों में ऊर्जा घूमने लगती है। जीभ और तालु के आपसी स्पर्श के सहयोग से वह आसानी से मस्तिष्क से गले को या नीचे के अन्य चक्र को उतरती है, विशेषकर जब साथ में शरीरविज्ञान दर्शन की भी मन में भावना हो। शरीरविज्ञान दर्शन से मानसिक कुंडलिनी चित्र प्रकट होता है, और इसके साथ तालु-जीभ के परस्पर स्पर्ष के ध्यान से कुंडलिनी ऊर्जा अपने साथ ले जाता हुआ वह चित्र मस्तिष्क के दबाव को न बढ़ाता हुआ आगे के चैनल से होता हुआ किसी भी अनुकूल चक्र पर चमकने लगता है। इससे कुंडलिनी ऊर्जा व्यर्थ की बातचीत में बर्बाद न होकर विशुद्धि चक्र को भी पुष्ट करती है।

मस्तिष्क की ऊर्जा के सिंक या अवशोषक के रूप में विशुद्धि चक्र

ठंडे जल से नहाते समय जब नीचे से चढ़ती हुई ऊर्जा से मस्तिष्क का दबाव बढ़ जाता है या सिरदर्द जैसा होने लगता है, तब नीचे से आ रही ऊर्जा विशुद्धि चक्र पर कुंडलिनी प्रकाश और सिकुड़न के साथ घनीभूत होने लगती है। ऐसा लगता है कि नीचे का शरीर आटा चक्की का निचला पाट है, मस्तिष्क ऊपर वाला पाट है और विशुद्धि चक्र वह बीच वाला छोटा स्थान है, जिस पर दाना पिस रहा होता है। या ऊर्जा सीधी भी विशुद्धि चक्र को चढ़ सकती है, मस्तिष्क में अनुभव के बिना ही। जिसे ताउम्र प्रतिदिन गंगास्नान का अवसर प्राप्त होता था, उसे सबसे अधिक भाग्यवान, पुण्यवान और महान माना जाता था। "पंचस्नानी महाज्ञानी" कहावत भी शीतजल स्नान की महत्ता को दर्शाती है। गंगा के बर्फीले ठन्डे पानी में साल के सबसे ठंडे जनवरी (माघ) महीने के लगातार पांच पवित्र दिनों तक हरिद्वार के भिन्न-भिन्न पवित्र घाटों पर स्नान करना आसान नहीं है। आदमी में काफी योग शक्ति होनी चाहिए। पर यह जरूर है कि जिसने ये कर लिए, उसकी कुंडलिनी क्रियाशील होने की काफी सम्भावना है। इसीलिए कहते हैं कि ऐसे स्नान करने वाले को लोक और परलोक में कुछ भी दुर्लभ नहीं, मुक्ति भी नहीं। ठंडे पानी से नहाने वाले व ठंडे स्थानों में रहने वाले लोग इसके विशुद्धि चक्र प्रभाव की वजह से बहुत ओजस्वी और बातचीत में माहिर लगते हैं। यह ध्यान रहे कि ठंडे पानी का अभ्यास भी अन्य योगाभ्यासों की तरह धीरेधीरे ही बढ़ाना चाहिए, ताकि स्वास्थ्य को कोई हानि न पहुंचे। जिस दिन मन न करे, उस दिन नहीं नहाना चाहिए। अभ्यास और सहजता का नाम ही योग है। यकायक और जबरदस्ती योग नहीं है। अगर किसी दिन ज्यादा थकान हो तो न करने से अच्छा योगाभ्यास धीरे और आराम से करना चाहिए। इससे आदमी सहज़ योगी बनना सीखता है। किसी दिन कमजोरी लगे या मन न करे तो उस दिन अन्य धार्मिक गतिविधियों को छोड़ा भी जा सकता है, मूलभूत हठ योगाभ्यास को नहीं, क्योंकि योग सांसों या प्राणों से जुड़ा होने के कारण जीवन का मूल आधार ही है, जबकि अन्य गतिविधियां ऐड ऑन अर्थात अतिरिक्त हैं। होता क्या है कि बातचीत के समय मन में उमड़ रही भावनाएं और विचार विशुद्धि चक्र पर कैद जैसे हो जाते हैं, क्योंकि उस समय विशुद्धि चक्र क्रियाशील होता है। जब योग आदि से पुनः विशुद्धि चक्र को क्रियाशील किया जाता है, तब वे वहाँ दबे विचार व भावनाएँ बाहर निकल कर नष्ट हो जाती हैं, जिससे शांति महसूस होती है, और आदमी आगे की नई कार्यवाही के लिए तरोताज़ा हो जाता है। यह ऐसे ही है, जैसे खाली ऑडियो रिकॉर्डर में ऑडियो कैसेट को घुमाने से उस पर आवाज दर्ज हो जाती है। जब उस लोडिड कैसेट को पुनः उसी तरह घुमाया जाता है, तो वह दबी हुई आवाज गाने के रूप में बाहर आ जाती है, जिसे हम सब सुनते हैं। इसी तरह सभी चक्रों पर होता है। यह मुझे बहुत बड़ा चक्र रहस्य लगता है, जिसके बारे में एक पुरानी पोस्ट में भी बात कर रहा था।

श्री शब्द एक महामंत्र के रूप में (धारणा और ध्यान में अंतर)

जिंदगी की भागदौड़ में यदि शरीरविज्ञान दर्शन शब्द का मन में उच्चारण न कर सको, तो श्रीविज्ञान या शिवविज्ञान या शिव या शविद या केवल श्री का ही उच्चारण कर लो, कुंडलिनी आनंद और शांति के साथ क्रियाशील हो जाएगी। श्री शब्द में बहुत शक्ति है, इसी तरह श्री यंत्र में भी। सम्भवतः यह शक्ति शरीरविज्ञान दर्शन से ही आती है, क्योंकि श्री शब्द शरीर से निकला हुआ शब्द और उसका संक्षिप्त रूप लगता है। श्री शब्द सबसे बड़ा मंत्र लगता है मुझे, क्योंकि यह बोलने में सुगम है और एक ऐसा दबाव पैदा करता है, जिससे कुंडलिनी क्रियाशील होने लगती है। सम्भवतः इसीलिए किसी को नाम से सम्बोधित करने से पहले उसके साथ श्री लगाते हैं। इसी तरह धार्मिक अवसरों व क्रियाकलापों को श्री शब्द से शुरु किया जाता है। इसी तरह शिव भी शरीर से मिलता जुलता शब्द है, शव भी। इसीलिए शक्तिहीन शिव को शव भी कहते हैं। अति व्यस्तता या शक्तिहीनता की अवस्था में केवल "श" शब्द का स्मरण भी धारणा को बनाए रखने के लिए काफी है। मन की भावनात्मक अवस्था में इसके स्मरण से विशेष लाभ मिलता है। "श" व "स" अक्षर में बहुत शक्ति है। इसीलिए श अक्षर से शांति शब्द बना है। श अक्षर के स्मरण से भी शांति मिलती है और कुंडलिनी से भी। श अक्षर से कुंडलिनी मस्तिष्क के नीचे के चक्रों मुख्यतः हृदय चक्र पर क्रियाशील होने लगती है। इससे आनंद के साथ शांति भी मिलती है, और मस्तिष्क का बोझ हल्का हो जाने से काम, क्रोध आदि मन के जंगी दोष भी शांत हो जाते हैं। इसी तरह श अक्षर से ही शक्ति शब्द बना है, जो कुंडलिनी का पर्याय है। यह संस्कृत भाषा का विज्ञान है। आपने संस्कृत मंत्र स्वस्तिवाचन के बाद चारों ओर शांति का माहौल महसूस किया ही होगा। यह सामूहिक रूप में गाया जाता है, जिसमें सम्पूर्ण सृष्टि की मंगलकामना की जाती है। ज्ञान होने पर भी उसका लाभ क्यों नहीं मिलता? क्योंकि हम ज्ञान की धारणा बना कर नहीं रखते। मैं ध्यान करने को नहीं बोल रहा। व्यस्त जीवन के दौरान ध्यान कर भी नहीं सकते। धारणा तो बना सकते हैं। धारणा और ध्यान में अंतर है। ध्यान का मतलब है उसको लगातार सोचना। इससे ऊर्जा का व्यय होता है। धारणा का मतलब है उस पर विश्वास या आस्था या उस तरफ सोच का झुकाव रखना। इसमें ऊर्जा व्यय नहीं होती। जब उपयुक्त समय कभी जिंदगी में प्राप्त होता है, तो धारणा एकदम से

ध्यान में बदल जाती है और तनिक योगाभ्यास से समाधि तक ले जाती है। धारणा जितनी मजबूती से होगी और जितने लम्बे समय तक होगी, ध्यान उतना ही मजबूत और जल्दी लगेगा। पतंजलि ने भी अपने सूत्रों में धारणा से ध्यान स्तर का प्राप्त होना बताया है। मेरे साथ भी ठीक ऐसे ही हुआ। मैं शरीरविज्ञान दर्शन नामक अद्वैत दर्शन पर धारणा बना कर रखता था पर समय और ऊर्जा की कमी से ध्यान नहीं कर पाता था। इनकी उपलब्धता पर वह धारणा ध्यान में बदल गई और ====बाकि का सफर आपको पता ही है (कि क्या होता है)। अद्वैत की धारणा अप्रत्यक्ष रूप में कुंडलिनी की धारणा ही होती है, क्योंकि अद्वैत और कुंडलिनी साथसाथ रहने की कोशिश करते हैं। ध्यान प्रत्यक्ष रूप में, मतलब जानबूझकर कुंडलिनी का किया जाता है, जिसमे कुंडलिनी जागरण प्राप्त होता है।

रूपान्तरण से आदमी पुरानी चीजों को भूलता नहीं हैं, अपितु उन्हें सकारात्मकता के साथ अपनाता है

योग खुद कोई रूपान्तरण नहीं करता। यह अप्रत्यक्ष रूप से खुद होता है। योग से मन का कचरा बाहर निकलने से मन खाली और तरोताज़ा हो जाता है। इससे मन नई चीजों को ग्रहण करता है। नई चीजों में भी अच्छी चीजें और आदतें ही ग्रहण करता है, क्योंकि योग से सतोगुण बढ़ता है, जो अच्छी चीजों को ही आकर्षित करता है। कई लोगों को लगता होगा कि योग से रूपान्तरण के बाद आदमी इतना बदल जाता है कि उसके पुराने दोस्त व परिचित उससे बिछड़ जाते हैं, उसके मन में पुरानी यादें मिट जाती हैं, वह अकेला पड़ जाता है वगैरह वगैरह। पर दरअसल बिल्कुल ऐसा नहीं होता। रहता उसमें सबकुछ है, पर उसे उनके लिए वह क्रेविंग या छटपटाहाट महसूस नहीं होती, जो कि रूपान्तरण से पहले होती है। उनके लिए उसके मन में विकार नहीं होते, जैसे कि काम, क्रोध, लोभ, मोह और मत्सर। इसका मतलब है कि फिर पुराने दुश्मन भी उसे दोस्त लगने लगते हैं। अगर ऐसा रूपान्तरण सभी के साथ हो जाए, तो दुनिया से लड़ाई-झगड़े ही खत्म हो जाएं। अगर ऐसा ही रूपान्तरण सभी देशों या राष्ट्रध्यक्ष लोगों के साथ हो जाए, तो युद्ध वगैरह कथा-कहानियों तक ही सीमित रह जाएंगे।

कुंडलिनी योग में बीजमंत्रों का महत्त्व

दोस्तों, हरेक चक्र के साथ एक बीजमंत्र जुड़ा होता है। सहस्रार चक्र के साथ ॐ आज्ञा चक्र के साथ ओम या शं, विशुद्धि चक्र के साथ हं, अनाहत चक्र के साथ यं, मणिपुर चक्र के साथ रं, स्वाधिष्ठान चक्र के साथ वं, और मूलाधार चक्र के साथ लं जुड़ा होता है। इस लेख में हम उनसे जुड़ा विज्ञान समझने की कोशिश करेंगे। बीजमंत्र के ऊपर जो बिंदी होती है, वह चक्र रूप होती है। इससे ध्यान ज्यादा पिनपोइंट मतलब ज्यादा केंद्रित और प्रभावी हो जाता है। बीजमंत्र के दृश्यात्मक रूप आकार का ध्यान चक्र पर करने से और उसकी आवाज मन में बोलने से ऊपर का प्राण और नीचे का अपान उस बीजमंत्र पर पहुंच कर इकट्ठे हो जाते हैं। यह अच्छी वैज्ञानिक तकनीक है पूरे शरीर की शक्ति को एक बिंदु पर केंद्रित करने की। चक्र पर कईयों को सीधा ध्यान केंद्रित करने में दिक्कत आती है। उनके लिए यह अच्छा विकल्प है। इससे ध्यानचित्र भी चक्र पर ज्यादा स्पष्ट हो जाता है। मुझे तो वैसे बीजमंत्र की जरूरत नहीं पड़ी थी, क्योंकि चक्रों पर ध्यानचित्र मुझे पहले से ही स्पष्ट अनुभव होता था। लगता है कि उसी ने मेरे लिए बीजमंत्र का काम किया। उसी से मैं चक्रों को शक्ति दे पाया। अब जाकर मैं बीजमंत्रों की उपयोगिता समझ पाया हूं। पहले तो मैं इन्हें हल्के में लेता था। जिनका ध्यानचित्र अभी विकसित नहीं हुआ है, उनके लिए बीजमंत्र बहुत अहम हैं, क्योंकि ये ध्यानचित्र को विकसित करते हैं। बीजमंत्र के शीर्ष पर जो बिंदु होता है, उसे चक्र के सबसे संवेदनात्मक स्थान पर संलग्न करो, और उसके साथ बीजमंत्र का शेष भाग जिस मर्जी आड़े तिरछे, सीधे, उल्टे, यहां तक कि बिंदु के चारों ओर घुमाते हुए जोड़कर पूरा बीजमंत्र बनने दो और मन में उसका उच्चारण करो तो एकदम से फायदा महसूस होता है। उदाहरण के लिए नाभि के छेद को रं बीजमंत्र का बिंदु बना दो। हं गले के चक्र से इसलिए जुड़ा है क्योंकि शायद यह अहंकार का प्रतीक है, और गले से ही मैं मैं मतलब अहम अहम की आवाज निकलती है। ॐ अक्षर सहस्रार व आज्ञा चक्र को इसलिए दिया गया है क्योंकि तीनों में ही अद्वैत का भाव है। शं बीजमंत्र आज्ञा चक्र को इसलिए दिया गया है क्योंकि संस्कृत में इसका मतलब शांति है, और दिमाग के भटकाव, थकान या अशांति का प्रभाव आज्ञा चक्र पर ज्यादा पड़ता है, क्योंकि यह बुद्धि और दिमाग के सांसारिक कार्यों से जुड़ा है। सहस्रार तो पहले ही पारलौकिक चक्र है, इसलिए उसमें अशांति का मतलब ही नहीं है। दिमाग के ये दो ही मुख्य चक्र हैं। यं हृदय चक्र को इसलिए दिया गया है क्योंकि दया भाव हृदय में रहता है, और दोनों में य अक्षर है। रं नाभि को इसलिए दिया गया होगा क्योंकि पेट में भोजन जलता है, और जलाने को राड़ना भी कहते कहते हैं। ब बं बं बं बं लहरी की मंत्र तो शिव को प्रसन्न करने वाला प्रमुख मंत्र है। शायद यह स्वाधिष्ठान चक्र का बीजमंत्र वं ही है। लं मूलाधार को इसलिए दिया गया होगा क्योंकि ल अक्षर में कामभाव है। बीजमंत्र के ऊपर स्थित बिंदु के दो फायदे हैं। एक तो उससे ॐ जैसी अद्वैतबोधक ध्वनि मिलती है, और दूसरा इससे संवेदनात्मक चक्रबिंदु पर ध्यान केंद्रित करने में मदद मिलती है। वैसे तो विभिन्न चक्रों के साथ विभिन्न रंगों और पंखुड़ियों के कमल भी जुड़े होते हैं। रंगों से ध्यानचित्र का रिसोलयुशन अर्थात स्पष्टता बढ़ती है। पंखुड़ियों से चक्रों के शरीर से संपर्क माने कनेक्शन का पता चलता है। इससे शरीर से चक्र तक पर्याप्त प्राणशक्ति पहुंचती है। जैसे कि आज्ञा चक्र पर दो पंखुड़ियों का मतलब दोनों भौहों की तरफ से दो नाड़ियां हैं। ये इड़ा और पिंगला ही हैं जो आज्ञा चक्र तक शक्ति लाती हैं। इसी तरह हृदय चक्र का षट्कोण यहां चारों तरफ से शक्ति लाता है। आसमानी नीला रंग गले के चक्र को इसलिए दिया गया है क्योंकि आवाज आसमान में ही चलती है। हरा रंग हृदय चक्र को इसलिए दिया गया है क्योंकि यह शांति, दया, हरियाली, वृद्धि व विकास का प्रतीक है। पीला रंग नाभि चक्र को इसलिए दिया गया है क्योंकि पेट में खाना जल कर पीला पड़ जाता है, जैसे पेड़ के पत्ते ज्यादा धूप से पीले पड़ जाते हैं। हल्दी भी पीली होती है और लड्डू भी। स्वाधिष्ठान चक्र पर संतरी रंग से ज्यादा ध्यान लगता है। कामभाव खट्टे स्वाद से जुड़ा है और संतरा भी खट्टा मीठा होता है। मूलाधार चक्र को लाल रंग इसलिए दिया गया है क्योंकि अज्ञानता के अंधेरे में हिंसा आदि के साथ ही लाल रक्त जुड़ा है आदि आदि। सहस्रार चक्र पर बैंगनी रंग से अच्छा ध्यान लगता है। इसी तरह आज्ञा चक्र पर गहरे नीले या काले रंग से अच्छा ध्यान लगता है। वैसे रंगों का और कमल के फूल का अभ्यास थोड़ा मुश्किल होता है, पर लगता है कि इससे फायदा भी उतना ही ज्यादा मिलता है। सिर्फ रंग या रंगदार घेरे का ध्यान भी किया जा सकता है। वं के बिंदु को एक संतरा माना जा सकता है। इसी तरह मूलाधार चक्र के संवेदनात्मक बिंदु मतलब लं के बिंदु को टमाटर माना जा सकता है। नाभि छिद्र को रं का बिंदु और एक पीला लड्डू माना जा सकता है। हृदय चक्र पर जो हरा षट्कोण है, उसे यं का बिंदु समझा जा सकता है। सहस्रार के कमल या किसी भी फूल के केंद्रीय सघन गोले को ॐ का बिंदु माना जा सकता है। चारों तरफ इसके पंखुड़ियां होती हैं। कमल का फूल इसलिए लिया गया है क्योंकि कमल का पत्ता जल में रहकर भी उससे निर्लिप्त रहता है, और शायद इसके ध्यान से आदमी भी दुनिया में निर्लिप्त रहना सीख जाए। फूल के केंद्रीय गोले का आकार भी ऐसा ही होता है, जैसे ॐ के ऊपर एक तिरछी ब्रेकेट होती है। बिंदु को उस गोले के अंदर उस फूल का बीज समझा जा सकता है। कुछ भी निर्धारित नियम नहीं है। जैसा आसान व प्रभावी लगे, उस तरीके से ध्यान कर सकते हैं। इसी तरह आज्ञा चक्र और विशुद्धि चक्र के फूल को भी क्रमशः

ओम और हं अक्षर का भाग माना जा सकता है। जो बीजमंत्र ध्यान में आए, उसी का ध्यान करते रहना चाहिए, वह खुद अपनी जगह पर बैठ जाता है। सभी चक्र आपस में जुड़े होते हैं। यदि गले पर हं का ही ध्यान हो रहा है, तो कोई बात नहीं, यह जब ऊर्जा खींचेगा, तो बीच वाले अनाहत, मणिपुर आदि चक्र खुद ऊर्जा प्राप्त करेंगे क्योंकि वे बीच के रास्ते में ही पड़ते हैं। इससे उन चक्रों के यं, रं आदि बीजमंत्र खुद ही ध्यान में आ जाते हैं। जब ऊर्जा की जंजीर घूमती है तो सभी चक्रों की मालिश खुद ही हो जाती है। एक चक्र को बल देने से सभी चक्रों को खुद ही बल मिलता है। यह ऐसे ही है जैसे चंडोल अर्थात मैरी गो राउंड के इसी एक बॉक्स सीट को धक्का देने से सभी बॉक्स सीटों को गति मिलती है। अभ्यास होने पर सिर से पैर तक सभी चक्रों पर उनके बीजमंत्रों का माला के मनके की तरह ध्यान किया जा सकता है। शायद यही असली माला है और भौतिक माला भी इसीको क्रियाशील करती है।

महिलाओं को तन्त्र में पूजित किया जाता है

एक मिथ्या विश्वास है कि तंत्र में महिला का शोषण किया जाता है, और एक पुरुष के आध्यात्मिक उत्थान (तंत्र में महिला) के लिए उसका एक खिलौने के रूप में उपयोग किया जाता है। असल में तंत्र में एक आदमी पूरी तरह से ऋषि के समान बन जाता है। क्या ऋषि किसी का भी शोषण करने के बारे में कभी सोच भी सकता है? ताओवाद भी ऋषि के लिए एक यौन-क्रियाशील ऋषि बनने की सिफारिश करता है, एक साधारण ऋषि बनने की नहीं। असल में, धार्मिक रूप से चरमपंथी लोग, जिन्होंने अमानवीय प्रथाओं के लिए तांत्रिक शक्तियों का दुरुपयोग किया, उन्होंने ही महिला का हिंसक तरीके से शोषण किया, लेकिन दोष वास्तविक तंत्र के ऊपर आ गया।

क्या आत्मजागरण के लिए शाकाहारी होना जरूरी है

बहुत से लोग मुझसे ऐसे प्रश्न पूछते हैं कि क्या उन्हें जागृत होने के लिए नॉनवेज / मांसाहार को जारी रखना चाहिए या छोड़ देना चाहिए। दरअसल यह मांसाहार नहीं है, जो अधिक हानिकारक है, अपितु यह मानसिक द्वैत-दृष्टिकोण है, जो खराब है। यदि इसके साथ रवैया अद्वैतात्मक है, तब यह तंत्र है। पंचमाकर यानी मांसाहार समेत तंत्र के पांच एम मानसिक ऊर्जा के सबसे शक्तिशाली स्रोत हैं। उनसे उद्भूत वह प्रचंड मानसिक ऊर्जा अगर अद्वैतपूर्ण दृष्टिकोण के साथ कुंडलिनी के ऊपर निर्देशित होती है, तो उसे जागृत कर देती है, अन्यथा उसे और अधिक गहराई में दफन कर देती है। अद्वैतपूर्ण रवैया जीवन में संतुलन की मांग करता है, और इसी तरह वह जीवन को भी संतुलित बना देता है, यदि उसे अपनाया जाए। इसलिए उस अद्वैतपूर्ण-दृष्टिकोण के साथ एक आदमी अपने शरीर की न्यूनतम जरूरतों के अनुसार ही आमिषाहार का उपयोग करता है, न कि केवल दो इंच की लंबी अपनी जीभ के अनुसार।

गुरु पूर्णिमा के सम्मान में

गुरु को परिभाषित, प्रस्तावित व विज्ञापित नहीं किया जा सकता; और न ही किसी को जबरदस्ती गुरु बनाया जा सकता है। गुरु तो किसी के अपने स्वयं के / आत्मा के रूप में ही होते है। भला अपना रूप कैसे किसी के द्वारा वर्णित या प्रशंसित किया जा सकता है। गुरु केवल अनुभव ही किए जा सकते हैं।

प्रेमयोगी वज्र के साथ भी यही हुआ। वह गुरु के बारे में पूरी तरह से गूंगा है। उसके पास केवल अनुभवात्मक विवरण है, जिसे वह किसी भी तरह से वर्णित नहीं कर सकता है। जब वह गुरु को किसी विशेष रूप में वर्णित करने का प्रयास करता है, तो वह उसका सार पूरी तरह से खो देता है। यह ऐसे होता है, जैसे कोई भी व्यक्ति मीठा स्वाद तो ले सकता है, लेकिन मिठास को एक वास्तविक रूप में वर्णित नहीं कर सकता है। जब वह व्यक्ति मधुरता का वर्णन करने की कोशिश करता है, तो वह अचानक उसकी खुशी / मिठास को खो देता है। गुरु एक दोस्त है, दोस्त भी नहीं, इनमें से दोनों भी है, और इनमें से कोई भी नहीं। गुरु एक शुभचिंतक है, नहीं भी है, दोनों भी है, और इन दोनों में से कोई भी नहीं। गुरु आध्यात्मिक प्रगति में मदद करता है, नहीं भी करता है, दोनों भी सत्य हैं, इन दोनों में से कोई भी सत्य नहीं है। गुरु की एक विशिष्ट उम्र है, उसकी कोई भी विशिष्ट उम्र नहीं है, इनमें से दोनों भी, और कोई भी नहीं। गुरु के अन्दर विशिष्ट गुणों का एक समूह होता है, नहीं भी होता है, इनमें से दोनों भी, और इनमें से कोई भी नहीं है। गुरु आध्यात्मिक रूप से उन्नत है, आध्यात्मिक रूप से उन्नत नहीं भी है, इनमें से दोनों भी है, और इनमें से कोई भी नहीं। गुरु प्रिय हैं, प्रिय नहीं भी हैं, इनमें से दोनों, और इनमें से कोई भी नहीं। गुरू बहुत सम्मानित हैं, नहीं भी हैं, इनमें से दोनों भी हैं, और इनमें से कोई भी नहीं है। गुरु अच्छी तरह से जाना-माना होता है, और सामाजिक रूप से अच्छी तरह से स्थापित होता है, अच्छी तरह से ज्ञात और सामाजिक रूप से स्थापित नहीं भी होता, इनमें से दोनों भी, और इनमें से कोई भी नहीं। गुरु अपने शिष्य से प्यार करते हैं, प्यार नहीं भी करते, इनमें से दोनों भी, और इनमें से कोई भी नहीं। गुरु खुद को गुरु के रूप में दिखाता है, नहीं भी दिखाता है, इन दोनों में से दोनों ही, और इनमें से कोई भी नहीं। गुरु की खोज की जा सकती है, या किसी को जानबूझकर / बलपूर्वक गुरु के रूप में बनाया जा सकता है; उसे नहीं भी खोजा जा सकता है, या जानबूझकर / बलपूर्वक नहीं भी बनाया जा सकता है, इन दोनों में से दोनों ही, और दोनों में से कोई भी नहीं। गुरु किसीके जीवन में उसकी तांत्रिक प्रेमिका / प्रेमी के प्रति आकर्षण के माध्यम से प्रकट होता है, ऐसा नहीं भी होता है, इनमें से दोनों भी, और इनमें से कोई भी नहीं। गुरु स्वयं ही अपने शिष्य की खोज करता है, ऐसा नहीं है, इनमें से दोनों भी, और इनमें से कोई भी नहीं। गुरु द्वैतमयी नहीं है, वह द्वैतमयी है भी, इनमें से दोनों भी, और इनमें से कोई भी नहीं। गुरु अपने शिष्य की आध्यात्मिक प्रगति का श्रेय स्वयं को देते हैं, वह ऐसा नहीं करते हैं, इनमें से दोनों भी, और इनमें से कोई भी नहीं। गुरु एक परिवार का सदस्य है, वह शिष्य के परिवार का सदस्य नहीं है, इनमें से दोनों भी, और इनमें से कोई भी नहीं। गुरु एक वृद्ध व्यक्ति हैं, ऐसा नहीं है, इनमें से दोनों भी, और इनमें से कोई भी नहीं। गुरु स्वार्थी हैं, और अपने उद्देश्य को हल करना चाहते हैं; ऐसा नहीं है, इनमें से दोनों भी, और इनमें से कोई भी नहीं। गुरु जीवन में जरूरी है, ऐसा नहीं है, इनमें से दोनों भी, और इनमें से कोई भी नहीं। गुरु भगवान का दिया हुआ एक विशेष उपहार है, ऐसा नहीं है, इनमें से दोनों भी, और इनमें से कोई भी नहीं। गुरु दंडित करते हैं, वह दण्डित नहीं करते हैं, इनमें से दोनों, और इनमें से कोई भी नहीं। गुरु हर जगह है, वह कहीं नहीं है, इनमें से दोनों भी, और इनमें से कोई भी नहीं है। गुरु एक दूसरी मां है, क्योंकि वह एक दूसरे जन्म को एक प्रबुद्ध जीवन के रूप में देता है, ऐसा नहीं है, इनमें से दोनों भी, और इनमें से कोई भी नहीं। गुरु आत्मजागृति के लिए जरूरी है, जरूरी नहीं है, इन दोनों में से दोनों भी, और इनमें से कोई भी नहीं। गुरु सब कुछ है, वह सब कुछ नहीं है, इनमें से दोनों भी है, और इनमें से कुछ भी नहीं है। जब कोई व्यक्ति हर जगह से खारिज कर दिया जाता है, तो गुरु उसको स्वीकार करता है, ऐसा नहीं है, इनमें से दोनों भी, और इनमें से कोई भी नहीं। कोई पूरी तरह से सुनिश्चित कर सकता है कि कौन उसका गुरु है, ऐसा नहीं है, इनमें से दोनों भी, और इनमें से कोई भी नहीं। गुरु एक कुंडलिनी / केंद्रित मानसिक छवि है, जिसे तंत्र के माध्यम से मूलाधार से सबसे आसानी से उठाया जा सकता है, ऐसा नहीं है, इनमें से दोनों भी हैं, और इनमें से कोई भी नहीं है। गुरु केवल ज्ञान ही प्रदान नहीं करते हैं, बल्कि ज्ञान के साथ प्यार और मानसिक सहायता / सहानुभूति भी, क्योंकि खाली ज्ञान तो Google / गूगल के द्वारा भी प्रदान किया जा सकता है; ऐसा नहीं है, इनमें से दोनों बातें भी सत्य हैं, और इनमें से कोई भी सत्य नहीं। यह एक लंबी सूची है, जो हर मानवीय विशेषताओं को शामिल करती है।

दरअसल, गुरु भगवान की तरह अवर्णनीय है। गुरु के मामले में बाहरी प्रचार के ड्रम / ढोल को बजाने वाले अधिकांश लोग वास्तव में गुरु के एबीसी / कखग को भी नहीं जानते हैं। गुरु दिल में बना होता है। गुरु को दिमाग में बनाया गया होता है। वास्तव में गुरु को जानबूझकर नहीं बनाया गया होता है, लेकिन वे एक पूर्ण सामाजिक व प्रेमभरे

वातावरण में सहजता से स्वयं ही मस्तिष्क में प्रतिष्ठित हुए होते हैं। जो लोग नहीं जानते कि प्यार क्या है, वे गुरु को नहीं समझ सकते हैं। कोई भी उस व्यक्ति को उजागर नहीं कर सकता, जो दिल से मजबूती के साथ जुड़ा हुआ होता है। कोई भी उस व्यक्ति को एक्सपोज़ नहीं कर सकता है, जो दिमाग / मन से मजबूती के साथ जुड़ा हुआ होता है।

अद्वैत तंत्र से मानसिक कुंडलिनी छवि को पहचानने और फिर उसे समृद्ध करने में मदद मिलती है।

अधिकांश लोग और यहाँ तक कि कई योगी भी नहीं जानते हैं कि एक उपयुक्त मानसिक छवि को कुंडलिनी / जीवनरक्षक नाव के रूप में कैसे परिवर्धित किया जाए, जिससे चित्र-विचित्र मानसिक संरचनाओं के विशाल महासागर को पार किया जाए, और फिर बैठकपूर्ण योगसाधना से पहले उसे किस तरह से प्रारंभिक बढ़ावा दिया जाए।

दरअसल, हर किसी के मन में सबसे पसंदीदा छवि अवश्य होती है लेकिन वह उनकी द्वैतपूर्ण / अनासक्तिपूर्ण जीवनशैली के कारण अस्पष्ट रहती है। उस छवि को प्रमुख रूप से स्पष्ट बनाने के लिए व्यक्ति को कुछ समय के लिए अद्वैत का समर्थन करना पड़ता है। अद्वैत को पूर्णरूप के कार्यात्मक सांसारिक जीवन के साथ अपनाया जाना चाहिए, न कि एक निष्कर्मक / निठल्ले जीवन के साथ, तभी अद्वैत का पूर्ण लाभ मिलता है। ऐसा करने पर हम देखेंगे कि हमारी सबसे पसंदीदा मानसिक छवि सतह पर आ जाएगी और नियमित रूप से हमारे दिमाग में घूमने लगेगी। उस छवि की स्पष्टता / अभिव्यक्ति / तीव्रता हमारे द्वारा अपनाए गए अद्वैत की तीव्रता के समानान्तर / अनुरूप होगी। इस तरह, एक व्यक्ति अपनी कुंडलिनी छवि को पहचान कर उसे चिन्हित कर पाएगा। फिर वह नियमित रूप से दिन में दो बार बैठकमय साधना / सिटिंग मेडिटेशन का अभ्यास शुरू करेगा, जिसमें वह अपने विभिन्न शरीर-चक्रों पर विराजमान उस चयनित कुंडलिनीछवि पर ध्यान केंद्रित करेगा। वह जल्द ही सफल हो जाएगा। कुंडलिनी छवि अधिमानतः एक प्रिय व्यक्तित्व की छवि होनी चाहिए। वह एक गुरु / शिक्षक / दोस्त / दादा / प्रेमी / देवता आदि, किसी की भी मानसिक छवि हो सकती है। सबसे पसंदीदा मानसिक छवि उस व्यक्ति की बनी होती है, जो एक प्रेमपूर्ण तरीके से मित्रवत व्यवहार करता है। ध्यान केंद्रित करने के लिए ईश्वर की छवि या स्वर्गारोहित व्यक्ति / अधिमानतः पूर्वज की छवि को प्राथमिकता दी जाती है, क्योंकि सैद्धांतिक रूप से जीवित व्यक्ति की छवि पर ध्यान लगाने से उसके जीवन में ध्यानानुसार परिवर्तन उत्पन्न हो सकता है, हालांकि यह शायद ही कभी होता हो, क्योंकि किसी का बाहरी स्वरूप हमेशा ही उसके भीतर के या वास्तविक स्वरूप से अलग होता है। वास्तव में, किसी भी व्यक्ति को अपने दिमाग का सुनना चाहिए, और उसके अनुसार ही शुभ फैसला लेना चाहिए। बोद्धों में से कई लोग महान ध्यानयोगी होते हैं। वे अपने बचपन में ही अपनी कुंडलिनी छवि का चयन कर लेते हैं, और अपने पूरे जीवनभर उसके ऊपर ध्यान केंद्रित करते रहते हैं। इससे सम्बंधित व्यावहारिक और वास्तविक समय के पूर्ण ज्ञान के लिए, इस वेबसाईट पर प्रस्तुत सत्यकथा " एक योगी की प्रेमकथा" / Love story of a yogi का अनुपालन किया जा सकता है।

एक सही कुंडलिनी छवि का चयन नहीं करना या बिल्कुल चयन नहीं करना एक मुख्य कारण है, जिससे कुंडलिनी योगी सफल नहीं हो पाते हैं।

एक पुस्तक-पाठक की कलम से

भाइयो, बहुत से लोग अपने अहंकारपूर्ण जीवन में व्यस्त हैं, जो नरक के लिए एक साक्षात द्वार है। इसी तरह, कुछ लोग त्याग-भावना के बहकावे में आ जाते हैं। उपरोक्त दोनों ही प्रकार के लोग आंशिक सत्य पर चलने वाले प्रतीत होते हैं। वास्तव में एक आदमी इस संसार में इतना अधिक विकसित हो जाना चाहिए कि उसे त्याग की आवश्यकता ही महसूस न हो, अपितु संसार उसके त्याग के लिए स्वयं ही बाध्य हो जाए। मित्रो, तब त्याग अपने आप ही होता है, जब एक आदमी इस संसार में अपनी आध्यात्मिक विकास की एक निश्चित सीमा को लांघ देता है। अद्वैत दृष्टिकोण से ही आध्यात्मिक विकास का यह निर्दिष्ट सीमाबिंदु सर्वाधिक सरलता, आनंद व व्यावहारिकता के साथ प्राप्त होता है। यद्यपि "अद्वैत दृष्टिकोण", केवल यह कहना आसान है, परन्तु इसे विकसित करके निरंतर बना कर रखना बहुत कठिन है। यदि केवल अद्वैत दृष्टिकोण के बारे में पढ़ना, लिखना व बोलना ही पर्याप्त होता, तब व्यावहारिक रूप वाली विस्तृत आध्यात्मिक व तांत्रिक प्रक्रियाओं का विकास न हुआ होता। उदाहरण के लिए, तंत्र या बौद्ध मार्ग के मन्त्रों, यंत्रों (बाह्य वेबसाईट- literature.awgp.org) व मंडलों को ही देख लें। वे अच्छी तरह से बनाए जाकर, नियमित रूप से पूजे जाने चाहिए, सांसारिक व व्यावहारिक रूप में, उन्हें सूक्ष्म-संसार अर्थात अंतहीन संसार के सूक्ष्म नमूने/अनुकृतियाँ समझते हुए। उस सूक्ष्म संसार में देवताओं के भावना-दर्शन करने चाहिए। उन देवताओं में अद्वैत दृष्टिकोण होता है, यद्यपि वे पूर्णतः हमारे जैसे आम लोगों की तरह ही काम करते हैं। इस तरह से, उन देवताओं का अद्वैतमयी व अहंकाररहित दृष्टिकोण अपने आप ही हमारे अन्दर सर्वाधिक निपुणता के साथ उतर आता है, और निरंतर जारी भी रहता है। मित्रो, इस भौतिक संसार से समानता रखने वालों में, हमारे अपने भौतिक शरीर से बढ़िया भला क्या वस्तु हो सकती है? वास्तव में हमारा अपना मानव शरीर, अनंत विस्तार वाले इस बाहरी व भौतिक संसार का सर्वाधिक सूक्ष्म व सर्वश्रेष्ठ नमूना है। शास्त्रों में भी यह इस सत्योक्ति से सिद्ध किया गया है, "यत्पिण्डे तत्ब्रम्हाण्डे" (बाह्य वेबसाईट- aniruddhafriend-samirsinh.com)। इस उक्ति का अर्थ है कि जो कुछ भी छोटी संरचना (शरीर आदि) में विद्यमान है, वही पूर्णतः समान रूप से, सभी कुछ पूरे ब्रम्हांड में है, अन्य कुछ नहीं। हमारे शरीर में अत्यंत सूक्ष्म देहपुरुष विद्यमान होते हैं। वे मनुष्य के सूक्ष्मरूप होते हैं, और पूरी तरह से मनुष्य की तरह ही होते हैं, यद्यपि अतिरिक्त रूप से वे अद्वैतभाव को भी धारण करते हैं। वे यंत्र-मंडल के देवताओं की तरह होते हैं, यद्यपि तुलनात्मक रूप से अधिक चुस्त व क्रियाशील होते हैं। शास्त्र भी इस बात को सिद्ध करते हैं कि हमारे शरीर में सभी देवता विद्यमान हैं। मित्रो, फिर इस शरीर-मंडल (बाह्य वेबसाईट- pinterest) साथ प्रत्येक परिस्थिति में खड़ा रहता है, और प्रतिक्षण हमें अद्वैत दृष्टिकोण की सर्वोत्तमता की याद दिलाता रहता है। यह अन्य मंडलों की तरह अस्थायी व नश्वर भी नहीं है, यहाँ तक कि यह अनादिकाल से हमारे साथ है, और तब तक साथ रहेगा, जब तक हम मुक्त नहीं हो जाते। क्योंकि मुक्त होने तक कोई न कोई शरीर तो मिलता ही रहता है। इससे, शरीरविज्ञान दार्शनिक अपने होने वाले प्रत्येक जन्म में इसके अद्वैत से लाभ प्राप्त करते रहते हैं।

मित्रो, अधिकाँश लोग देहक्षायी यौनसम्बन्ध में संलिप्त रहते हैं। यौनसम्बन्ध एक आश्चर्यजनक क्रिया है, जिसके बारे में न्यूनतम अध्ययन किया गया प्रतीत होता है। यदि यह अनुचित विधि से किए जाने के कारण नरक/दुःख/बंधन की प्राप्ति करवा सकता है, तो यही स्वर्ग/सुख/मुक्ति की प्राप्ति भी करवा सकता है, यदि इसे उचित विधि व कुण्डलिनीयोग के साथ किया जाए। यह पुस्तक यौनाचार की अनुभूत व प्रमाणित तांत्रिक पद्धति का वर्णन करती है, जिससे उस कुण्डलिनीजागरण की प्राप्ति होती है, जो कि अंतिम मोक्ष के लिए द्वाररूप है। मित्रो, ये देहपुरुष हमारे शरीर में हर स्थान पर विद्यमान होते हुए, अपने देहदेश के प्रति महान देशभक्त व राष्ट्रवादी होते हैं। ये हमें भी इस तरह के गुण धारण करना सिखाते हैं, यदि आधुनिक दर्शन, शविद के माध्यम से इनका चिंतन किया जाए। हमारे अपने शरीर में प्रकृति अपने सम्पूर्ण विस्तार के साथ विद्यमान है। वह प्रकृति देहपुरुषों के द्वारा पूरी तरह से संरक्षित व विवर्धित की जाती रहती है। इसके विपरीत, आधुनिक स्थूलपुरुषों के द्वारा अपनी स्थूलप्रकृति नष्ट की जा रही है। यदि आप प्रकृति-प्रेमी और प्रकृति-संरक्षक हैं, तब तो यह पुस्तक आपके लिए ही है।

मित्रो, हमारा आश्चर्यजनक भौतिक शरीर (बाह्य वेबसाईट- bharatsvasthya.net) अनगिनत कोशिकाओं से बना हुआ है। वे सभी कोशिकाएं बेहतरीन तालमेल व सहयोग के साथ काम करती रहती हैं, जिससे हमारा शरीर एक सर्वोत्तम समाज बन कर उभरता है। हम ये कलाएं और अन्य भी बहुत कुछ उनसे सीख सकते हैं। इसके साथ ही, वे कोशिकाएं अद्वैतवादी व जीवन्मुक्त भी हैं। वे मनस्कता से पूर्ण हैं। यदि उन्हें मन से रहित माना जाए, तब तो उचित

ढंग से क्रियाशील मन के बिना इस तरह के आश्चर्यमयी कारनामों की उनसे कल्पना नहीं की जा सकती। इससे यह सिद्ध होता है कि उनके अन्दर एक मन विद्यमान होता है, परन्तु इसी के साथ वे मन से रहित भी होते हैं, क्योंकि वे अपने अद्वैतभाव के कारण अपने मन में आसक्त नहीं होते। मनुष्य भी उस तरह के समाज को बनाने का प्रयास करता है, परन्तु हर बार बुरी तरह से असफल हो जाता है। इसका कारण है, हम उनके बारे में आध्यात्मिक/दार्शनिक विधि से पूर्ण विस्तार के साथ नहीं जानते। यह ई-पुस्तक इसी समस्या का हल करती है।

मित्रो, हम पूरी तरह से देहपुरुषों (वे कोशिकाएं) की तरह ही व्यवहार व कर्म करते रहते हैं, परन्तु केवल हम ही आसक्ति, अहंकार व अद्वैत को प्राप्त करते हैं, वे देहपुरुष नहीं। यह पुस्तक दिखाती है कि इस कारीगरी को उनसे कैसे सीखा जाए? देहपुरुष कई स्थानों पर एकवचन में ही लिखा गया है, यद्यपि वे असंख्य हैं। यह इसलिए, क्योंकि वे सभी, आध्यात्मिक रूप से अर्थात अपने वास्तविक आत्मरूप (असली आत्मा) से एक दूसरे से अभिन्न हैं। यह पुस्तक यह भी दिखाती है कि देहपुरुष को अपनी कुण्डलिनी कैसे बनाया जाए, और उसे उसके ध्यान से कैसे विवृद्ध किया जाए? इस संसार में अद्वैत के बारे में बहुत सी मिथ्या समझ व बहुत सी मिथ्या धारणाएं विद्यमान हैं, पढ़ें ईपुस्तक, कुण्डलिनी रहस्योद्घाटित- प्रेमयोगी वज्र क्या कहता है)। वे भी सभी इस पुस्तक में बहुत अच्छी तरह से व व्यावहारिक रूप से स्पष्टीकृत की गई हैं।

शरीरविज्ञान दार्शनिकों के द्वारा अनोखी अराधना

शरीरविज्ञान दार्शनिक प्रतिक्षण ही अनंत उपचारों से, अनायास ही, अर्थात अनजाने में ही, अर्थात बिना किसी औपचारिकताओं के ही देहपुरुषों की पूजा करते रहते हैं, क्योंकि देहपुरुष कहीं दूर नहीं, अपितु उनके अपने शरीर में ही विद्यमान होते हैं। वे उन्हें नद, नदी, तालाब, समुद्र आदि अनेक जल-स्रोतों के जल से स्नान करवाते हैं, तथा उन्हें पाद्य, अर्घ्य, आचमनीय, अभिषेक व शुद्धोदक आदि के रूप में जल अर्पित करवाते हैं। विविध व सुगन्धित हवाओं के रूप में नाना किस्म के धूप लगाते हैं। औषधियों से उनकी चिकित्सा करते हैं। अनेक प्रकार के वाहनों में बैठाकर उन्हें एक प्रकार से पालकियों में घुमाते भी हैं। उनके द्वारा बोली गई शुभ वाणी से उनके उपदेश ग्रहण करते हैं। सुनाई देती हुई, अनेक प्रकार की शुभ वाणियों को उनके प्रति अर्पित स्तोत्र, घंटानाद व शंखनाद समझकर, उनसे उनकी स्तुति करते हैं। अनेक प्रकार के व्यंजनों से उन्हें भोग लगाते हैं। नेत्ररूपी दीप-ज्योति से उनकी आरती उतरवाते हैं। अनेक प्रकार के मानवीय मनोरंजनों, संकल्प-कर्मरूपी व्यायामों से व योग-भोगादि अन्यानेक विधियों से उनका मनोरंजन करते हैं। इस प्रकार से शरीरविज्ञान दार्शनिकों के द्वारा किए गए सभी मानवीय काम व व्यवहार ईश्वरपूजारूप ही हैं। पुरुष की सारी अनुभूतियाँ, उसके काम-काज को काबू में रखने वाली, उसकी चित्तवृत्तियाँ ही हैं, जिन्हें देहपुरुष ही अपने अन्दर पैदा करते हैं, देहदेश को नियंत्रित करने के लिए। ऐसा समझने वाला पुरुष देहपुरुषों को ही कर्ता-भोक्ता समझता है, और कर्मबंधन से मुक्त हो जाता है। साथ में, कुण्डलिनीयोग व शविद-अद्वैत के एकसाथ लम्बे आचरण से मानसिक कुण्डलिनीचित्र देहपुरुषों के ऊपर आरोपित हो जाता है, जिससे कुण्डलिनी बहुत पुष्ट हो जाती है। वास्तव में हम अनादिकाल से ही पूजा व सेवा करते आ रहे हैं, इस देहमंडल की। परन्तु हमें इसका पर्याप्त लाभ नहीं मिलता, क्योंकि हमें इस बात का ज्ञान नहीं है, और यदि ज्ञान है तो दृढ़ता से विश्वास करते हुए, इस बात को मन में धारण नहीं करते। शविद के अध्ययन से यह विश्वास दृढ़ हो जाता है, जिससे धारणा भी निरंतर पुष्ट होती रहती है। इससे हमें पुराने समय के किए हुए, अपने प्रयासों का फल एकदम से व इकट्ठा, कुण्डलिनीजागरण के रूप में मिल जाता है। इस तरह से हम देख सकते हैं कि शरीरविज्ञानदार्शनिक पूरी तरह से वैदिक-पौराणिक पुरुषों की तरह ही होते हैं। बाहर से वे कुछ अधिक व्यवहारवादी व तर्कवादी लग सकते हैं, परन्तु अन्दर से वे उनसे भी अधिक शांत, समरूप व मुक्त होते हैं। वे उस तूफान से भड़के हुए महासागर की तरह होते हैं, जो बाहर से उसी की तरह, तन-मन से भरपूर चंचल-चलायमान होते हैं, परन्तु अन्दर से उसी की तरह शांत और स्थिर होते हैं, शांत व स्थिर भी होते हैं।

जन्माष्टमी पर्व की बधाइयाँ

श्रीकृष्ण के द्वारा उच्चारित गीता दुनियाभर में आध्यात्मिकता का एक अद्वितीय खजाना है। प्रत्येक प्रकार का धर्म, दर्शन, आध्यात्मिक जीवन इससे निकलता हुआ प्रतीत होता है। इसका कर्मयोग दुनिया के लिए एक अद्भुत तोहफा है। आजकल यह सर्वाधिक प्रासंगिक है, क्योंकि आजकल के मशीनी युग में लोग सुस्त, कर्महीन, आलसी व अवसादग्रस्त से हो रहे हैं, जिसकी वजह से मधुमेह, उच्च रक्तचाप, उच्च कोलेस्ट्रॉल आदि विचित्र बीमारियां बढ़ रही हैं।

वास्तव में, कर्मयोग हमें सिखाता है कि कैसे हमने शारीरिक व मानसिक रूप, दोनों से दिन-रात व्यस्त रहना है, और साथ में अवसाद खत्म करके आध्यात्मिक विकास भी तीव्रतम गति से करना है। कर्मयोग से सर्वाधिक शीघ्रता से भौतिक व आध्यात्मिक विकास, दोनों हो जाते हैं। कर्मयोग व तन्त्र एक ही चीज है, यद्यपि तंत्र में अतिरिक्त भाग के रूप में यौनसंबंध भी जुड़ा होता है, ताकि आध्यात्मिक विकास तीव्रतम वेग से हो जाए।

अद्वैत, कुंडलिनी व आनंद , तीनों एकसाथ रहते हैं, और एक -दूसरे को बढ़ाते रहते हैं। इसलिए आध्यात्मिक विकास की चार विधियाँ मुख्य है। कुंडलिनी योग से कुंडलिनी को बढ़ाओ या वेद-पुराणों, शरीरविज्ञान दर्शन आदि उचित अद्वैतकारी दर्शनों के अभ्यास से निरंतर अद्वैत को धारण किया जाए या मानवीय व्यवहारों से आनंद बढ़ाया जाए या तीनों प्रयासों को एकसाथ किया जाए। अन्तिम विधि सर्वाधिक बलवान है, क्योंकि इसके अंदर अध्यात्म के सभी मूलभूत सिद्धांत हैं।

वास्तव में भगवान श्रीकृष्ण एक तांत्रिक भी थे। इतनी सारी गोप कन्याओं को खुश रखना, व उनमें से अनेकों के साथ रात्रि के एकांत में रास रचाना तंत्र ज्ञान के बिना संभव नहीं है।

कुंडलिनी एक सम्मोहक

कुंडलिनी/कुंडलिनी योग सम्मोहन से बचाने वाली सबसे अच्छी युक्ति है। हम सोचते हैं कि सम्मोहन एक विशेष चीज है, पर ऐसा नहीं है। वास्तव में हम सभी एक-दूसरे को कम-अधिक मात्रा में सम्मोहित करते रहते हैं। जब कोई व्यक्ति दूसरों के बीच में अधिक ही प्रभावशाली बनने का प्रयत्न करता है, तब वह वास्तव में अनजाने में ही दूसरों को सम्मोहित कर रहा होता है। इस तरह से सभी महान नेता, शासक, कलाकार, धर्म गुरु आदि सम्मोहनकर्ता ही हैं। सकारात्मक सम्मोहन उन्नति की ओर ले जाता है, परंतु नकारात्मक सम्मोहन पतन की ओर। सकारात्मक सम्मोहन का अर्थ है कि सम्मोहनकर्ता सकारात्मक मानसिकता वाला है, जिससे वह अपने द्वारा सम्मोहित लोगों में भी सकारात्मकता भर देता है। नकारात्मक सम्मोहन इसके ठीक विपरीत होता है। वास्तव में कुण्डलिनी भी एक सकारात्मक सम्मोहक है, और कुण्डलिनी योग उसकी सम्मोहकता को बढ़ाने वाला एक अर्धकृत्रिम उपाय। कुण्डलिनी एक सकारात्मक सम्मोहनकर्ता/योग्य गुरु/देवता/प्रेमी/यौनप्रेमी का मन/मस्तिष्क में बना हुआ एक प्रगाढ़ चित्र ही है। इसलिए वह कुण्डलिनी चित्र इधर-उधर के सम्मोहनकर्ताओं के चित्रों को मन में घुसने नहीं देता, क्योंकि उस कुण्डलिनी ने पहले ही मन-मस्तिष्क की अधिकांश खाली जगह को भरा होता है, अतः नए चित्र के लिए स्थान ही नहीं बचता। अद्वैतमयी सम्मोहनकर्ता, जैसे कि गुणवान गुरु या इष्ट या देवता , आध्यात्मिक व भौतिक, दोनों प्रकार की उन्नति करवाते हैं। परंतु जिन सम्मोहनकर्ताओं का मन अनियंत्रित, अमानवीय व द्वैतपूर्ण है, वे ज्यादातर पतन ही करवाते हैं। तन्त्र के पंचमकार किसी व्यक्ति की सम्मोहकता में अत्यधिक वृद्धि करते हैं। इसलिए यदि ये ढंग से व उचित दिशा निर्देशन में प्रयोग किए जाएं, तब ये बहुत बलवान व सकारात्मक सम्मोहकता को उत्पन्न करते हैं, अन्यथा केवल नकारात्मक। इन पंचमकारों के दुरुपयोग से ही वह तंत्र दुनिया में बदनाम हुआ है, वास्तव में जो मन/आध्यात्मिकता का वास्तविक विज्ञान है। धार्मिक अतिकट्टरता/आतंकवाद इस दुरुपयोग का एक अच्छा उदाहरण है। यदि इसे सकारात्मक रूप में लें, तो इधर-उधर के सम्मोहन कुण्डलिनी को कड़ा मुकाबला देते हैं, जिससे कुण्डलिनी मजबूत होती रहती है।

हमारे अपने शरीर के अन्दर प्रेम-प्रकरण

हर पल हमारे शरीर के भीतर अनगिनत प्रेम-सम्बंधित मामले और विवाह उदीयमान होते रहते हैं। इसी तरह, स्थूल दुनिया की तरह ही, प्रिय व सुकोमल बच्चों का भी हमारे देहदेश के अंदर अच्छी तरह से पालन किया जाता रहता है। हमारे शरीर के अंदर होने वाले विवाह (क्लासिक स्वयंमवर प्रथा) के लिए कई प्रतियोगिताओं का आयोजन होता रहता है, जहां पर विभिन्न प्रतियोगी सफलता प्राप्त करने के लिए संघर्ष कर रहे होते हैं। प्रतिस्पर्धियों को चट्टानी इलाकों और पहाड़ों के साथ-२, एक बहुत लंबे और कष्टप्रद मार्ग/ट्रैक पर दौड़ना पड़ता है। इस दौड़ के दौरान, भूख और प्यास के कारण कई लोग मर जाते हैं। कई स्पर्धी जंगली जानवरों के द्वारा मार दिए जाते हैं। आतंकवादियों के संदेह से सुरक्षा बलों के द्वारा कई लोगों की हत्या कर दी गई होती है। उनमें से कई, पहाड़ की किसी न किसी जोखिम-भरी सतह से गिर जाते हैं, और कई प्रकार की जहरीली जड़ी-बूटियों और जहरीले फलों को खाने के बाद कई लोग मर जाते हैं। उनमें से केवल एक कुमार ही उस सुंदर राजकुमारी से शादी करने में सफल हो पाता है।

हमारे अपने शरीर के अंदर हड़ताल, गुस्सा और युद्ध

अनगिनत संख्या में युद्ध, इस शरीर-देश के अंदर और बाहर चल रहे हैं, हर पल। घृणा से भरे कई दुश्मन, लंबे समय तक सीमा दीवारों के बाहर जमे रहते हैं, और शरीर-मंडल/देश पर आक्रमण करने के सही अवसर की प्रतीक्षा कर रहे होते हैं। जब किसी भी कारण से इस जीवित मंडल की सीमा-बाड़ क्षतिग्रस्त हो जाती है, तो वे दुश्मन सीमा पार कर जाते हैं। वहां पर वे रक्षा विभाग की पहली पंक्ति के द्वारा हतोत्साहित कर दिए जाते हैं, जब तक कि रक्षा-विभाग की दूसरी पंक्ति के सैनिक उन दुश्मनों के खिलाफ कड़ी नफरत और क्रोध दिखाते हुए, वहां पहुँच नहीं जाते। फिर महान युद्ध शुरू होता है। अधिकांश मामलों में, शरीर-देश जीत जाता है। लेकिन कुछ असाधारण मामलों में, उन गंदे दुश्मनों ने युद्ध जीत लिया, और शरीर-देश के आंशिक या देहदेश के पूरे हिस्से को नियंत्रण में ले लिया। फिर उस देहदेश ने उन आक्रमणकारी व कचरा दुश्मनों को, विदेशी सहायता से नष्ट कर दिया। कई बार, वे शत्रु आक्रमित राष्ट्र को नष्ट कर देते हैं, ताकि वे अपनी स्वतंत्र और गंदी इच्छा के वश में होकर, पूरे राष्ट्र को नष्ट करके, एकसाथ ही उसका उपभोग कर सकें।

हमारे अपने स्वयं के शरीर के भीतर सार्वजनिक प्रताड़नाएँ और क्रांतियाँ

कई बार, शरीर-देश के अंदर देशनिवासियों के कुछ समूह इतने परेशान हो जाते हैं कि वे अपने देश के खिलाफ विद्रोह कर देते हैं। वे कई साधारण नागरिकों को भी राष्ट्र-विरोधी लोगों में बदल देते हैं। कभी-कभी, वे बाहरी दुश्मनों के साथ सांठगांठ करके, उनके साथ एक हो जाते हैं। बदले में, देहदेश-सरकार उन्हें प्यार से व अन्य साधनों से शांत करने की कोशिश करती है, लेकिन जब वे क्रांति को नहीं छोड़ते हैं, तो सुरक्षा बलों के पास सशस्त्र संघर्ष में उन्हें मारने के अलावा कोई विकल्प नहीं होता है। शरीर-देश जीतता है, कभी-कभी क्रांतिकारी शरीर का नियंत्रण हासिल कर लेते हैं, और अपने बदसूरत व क्षणिक लाभ के लिए उसे नष्ट कर देते हैं।

हमारे अपने शरीर के अंदर ईर्ष्या

जब कुछ गरीब और पीड़ित नागरिक, जो हमारे उस देहदेश के भीतर हैं, जिसके हम स्वयं राजा हैं, वे अमीर नागरिकों के प्रति ईर्ष्यापूर्ण हो जाते हैं, तो वे एक सशस्त्र संघर्ष शुरू कर देते हैं, और उस देश के सभी संसाधनों का उपभोग मनमानी व बर्बादी के साथ करने लग जाते हैं; जबकि वे समाज के लिए बिना किसी उपयोगी काम के निष्क्रिय अतः हानिपूर्ण बने रहते हैं।

हमारी अपनी खुद की निकाय के अंदर इच्छाएं और चुनाव

हमारे देहदेश (शरीर-देश) के देहपुरुष (हमारे शरीर-देश के नागरिक/शरीर-कोशिकाएं/ऐन्जाईम/होरमोन) भी हमारे जैसे खाद्य पदार्थ, पेय पदार्थ और अन्य पर्यावरणीय आराम चाहते हैं। ये इच्छाएं अच्छी तरह से पूरी होती हैं। विकल्प/चुनाव के भाव भी उनके द्वारा दिखाए जाते हैं। एक विशेष जाति, नस्ल या धर्म के देहशत्रु (देहदेश के दुश्मन), हमला करने के लिए विशेष देहपुरुषों को ही पसंद करते हैं, दूसरे उनसे भी कमजोर देहपुरुषों को छोड़ते हुए। इसी तरह, एक विशेष देहपुरुष केवल एक विशेष देहपुरुष-श्रेणी के साथ ही शादी का सम्बन्ध बनाता है, तथा अन्य समाजों के खूबसूरत लोगों को भी इनकार कर देता है।

हमारे अपने स्वयं के शरीर के अंदर लालच

देहराक्षस बहुत लालची हैं। वे एक भी दूसरे विचार के बिना, सभी संसाधनों का एकसाथ व मनमर्जी से उपभोग करने के लिए, लालच के वशीभूत होकर, आक्रमित किए गए देहदेश को नष्ट कर देते हैं।

हमारे अपने शरीर के अंदर भ्रम

भ्रम के कारण, राजकुमार देहपुरुष देहदेश-स्वयंवर (देहदेश में विवाह करने के लिए एक लड़की/रानी द्वारा जीवन साथी के स्वतंत्र-चयन की प्रक्रिया) में देहदेशराजकुमारी के लिए मर जाते हैं।

हमारे अपने स्वयं के शरीर के अंदर मद

कभी-कभी, देहसेनिक मद व अहंकार के पागलपन से भर जाते हैं, और अपने स्वयं के देहेदेश के नैष्ठिक देहपुरुषों को ही नुकसान पहुंचाने लग जाते हैं, और उन्हें मारने लग जाते हैं।

हमारे अपने शरीर के अंदर मित्रता

देहपुरुष अपने स्वयं के लाभ के लिए, अपने दोस्तों को अच्छी तरह से खिलाते-पिलाते हैं, और उनकी देखभाल करते हैं। बदले में, उनके दोस्त उनके लिए एक चमत्कारी तरीके से काम करते हैं, और उनके लिए आवश्यक वस्तुओं का निर्माण करते हैं।

हमारे अपने शरीर के अंदर परिवार नियोजन

इसके कारण, देहेदेश के अंदर जनसंख्या घनत्व को सबसे अधिक लाभदायक स्तर पर स्थिर व एकसमान रखा जाता है।

हमारे अपने स्वयं के शरीर में सफाई

देहेदेश के अंदर एक परिपूर्ण स्वच्छता रखी गई है।

सामाजिक कार्यशाला हमारे अपने स्वयं के शरीर में

हमारे अपने शरीर के अंदर एक महान सामाजिक कानून और व्यवस्था मौजूद है। अधिकारियों के कई चरण हैं, अर्थात अधिकारियों के ऊपर अधिकारियों की लम्बी सूचि विद्यमान होती है। वे सभी परिस्थिति के अनुसार अपने उच्च अधिकारियों के आदेशों का पालन करते रहते हैं।

हमारे अपने शरीर के अंदर श्रम-विभाजन

देहपुरुषों के कुछ समूह किसान हैं, कुछ ड्राइवर हैं, कुछ इंजीनियर आदि हैं। ऐसा शरीर-समाज को शीर्ष दक्षता के साथ चलाने के लिए होता है।

हमारे अपने स्वयं के शरीर के अंदर समूहीकरण

देहपुरुष हमेशा अलगाव में नहीं, समूहों में काम करते हैं। समूह के कारण, वे प्रभावी ढंग से सहयोग करते हैं, जिसके कारण उनके काम की गुणवत्ता और ताकत नाटकीय रूप से सुधर जाती है।

हमारे अपने स्वयं के शरीर में विशेषज्ञता

हमारे अपने शरीर के अंदर विशेषज्ञता और अति-विशेषज्ञता (सुपर-स्पेशलाइजेशन) का काफी प्रभावी ढंग से व एक विकसित रुझान है। जो देहपुरुष उपचार कार्य कर रहे हैं, वे स्वास्थ्य के क्षेत्र में विशिष्ट हैं। इसी तरह, ड्राइवर ड्राइविंग आदि में विशिष्ट होते हैं। सभी देहपुरुष सभी कलाओं को जानते हैं, और एक साथ काम करते हैं, लेकिन केवल उस काम में ही विशिष्ट होते हैं, जिसे वे नियमित रूप से करते हैं।

राजा, मंत्री और उच्च अधिकारी हमारे अपने स्वयं के शरीर के अंदर

वेसूक्ष्म देश में भी उसी तरह मौजूद हैं, जैसे वे स्थूल-देश में मौजूद हैं।

हमारे अपने स्वयं के शरीर के अंदर सभी अन्य लोगों का व प्रक्रियाओं का अस्तित्व

खेल, प्रशिक्षण, सम्मलेन, योजनाएं, दुःख-निवारण समितियां, चुटकुले, सार्वजनिक शिकायतें, खतरे, जन्म, विकास, परिपक्कता, मौत आदि-२; अन्य सभी जीवन-गतिविधियाँ; और भावनाएं हमारे अपने शरीर के भीतर होती रहती हैं, जैसे कि एक बड़े राष्ट्र के बड़े समाज में होती हैं। ये सब कुछ सूक्ष्म-देश/हमारे शरीर के अंदर उसी तरह से मौजूद हैं, जैसे कि ये स्थूल-देश या दुनिया या यहां तक कि ब्रम्हांड/सृष्टि/अंतरिक्ष में मौजूद हैं।

मानसिक रूप से और शारीरिक रूप से लगातार बदलते होने के बावजूद, देहपुरुष हमेशा अपरिवर्तनीय-ताओ की तरह अपरिवर्तनीय हैं। शरीर-विज्ञान-दर्शन (शविद) ताओवाद की तरह है, हालांकि उससे अधिक ईश्वरवादी, यथार्थवादी और व्यावहारिक रूप में। यद्यपि शविद ईश्वर को मानवता, देहपुरुषरूप/अद्वैतरूप/द्वैताद्वैतरूप व अनायास/मानवतापूर्ण प्रकृति से अलग नहीं मानता, जो कि अन्य धर्मों/दर्शनों से कुछ हट कर है।

वास्तव में जो कुछ भी संभव/कल्पनागम्य है, वह सभी कुछ हमारे अपने देहदेश में विद्यमान है, यद्यपि इस देश के निवासी पूर्णरूप से अनासक्ति व अद्वैत से भरे हुए हैं।

कुण्डलिनीयोग, यौनयोग व आत्मज्ञान का अनुभूत विवरण

यह प्रमाणित किया जाता है कि इस वेबसाईट के अंतर्गत हम सभी किसी भी धर्म का समर्थन या विरोध नहीं करते हैं। हम केवल धर्म के वैज्ञानिक और मानवीय अध्ययन को बढ़ावा देते हैं। यह वैबसाइट तांत्रिक प्रकार की है, इसलिए इसके प्रति गलतफहमी नहीं पैदा होनी चाहिए। पूरी जानकारी व गुणवत्ता के अभाव में इस वेबसाईट में दर्शाई गई तांत्रिक साधनाएं हानिकारक भी हो सकती हैं, जिनके लिए वैबसाइट जिम्मेदार नहीं है।

एकश्लोकी शविद

मानवता से बड़ा धर्म नहीं; (आतंरिक वेबपृष्ठ) काम से बढ़ कर पूजा नहीं;

समस्या से बड़ा गुरु नहीं; (ईपुस्तक, कुण्डलिनी रहस्योद्घाटित) गृहस्थ से बड़ा मठ नहीं। (आध्यात्मिक एकांतवास- पढ़ें उपरोक्त ईपुस्तक)

उपरोक्त तांत्रिक छंद उस समय प्रेमयोगी वज्र के होंठों से एक सहज उत्सर्जन है, जिस समय वह अपने ज्ञान की चोटी पर था। हालांकि यह उपलेखक के द्वारा दुनिया में प्रदर्शित किया गया था। यह वाक्यांश प्रकृति में तांत्रिक जैसा प्रतीत होता है। शायद यहां 'मास्टर / गुरु' शब्द मुख्य रूप से धार्मिक चरमपंथियों के अहंकार-पूर्ण प्रमुखों को इंगित करता है, और साथ में अपने विभिन्न अनुयायियों को गुमराह करके उनसे अमानवीय कार्य करवाने वाले नेताओं को भी इंगित करता है। यह वाक्यांश अन्यथा प्रतीत नहीं होता है, क्योंकि उसने गुरु के माध्यम से ही अपनी आध्यात्मिक सफलता प्राप्त की है, और वह साथ में मानवता को भी उजागर कर रहा है, गुरु जिसका एक महत्वपूर्ण हिस्सा है। इसका एक अर्थ यह भी है कि जो गुरु अपने शिष्य के लिए मानवतापूर्ण ढंग से जितनी अधिक समस्याएँ उत्पन्न करते हैं, वे उतने ही अधिक सफल सिद्ध होते हैं। प्राचीनकाल में गुरु द्वारा ली जाने वाली गुरुपरीक्षा इसी सिद्धांत पर ही तो आधारित होती थी। वह पूजा से इंकार नहीं कर रहा है, क्योंकि वह हमेशा वैदिक पुरोहित/पुजारी की कंपनी में रहा, और उसने थोड़ी अवधि के लिए एक वैदिक-पूजा प्रकार के पुजारीपन को भी अपनाया था; लेकिन उसका तात्पर्य है कि पूजा से किसी के द्वारा अपने काम को नकारात्मक रूप से प्रभावित नहीं करना चाहिए, और अपने स्वयं के काम को ही पूजा बनाना सर्वोत्तम है, जिसके लिए लौकिक/कस्टम पूजाओं की सहायता ली जा सकती है। उसका यह भी मतलब प्रतीत होता है कि मूल समस्या को समझे बिना, मास्टर भी बहुत अच्छा नहीं कर सकता है। उसका तात्पर्य यह भी प्रतीत होता है कि बुरे कर्मों को कभी भी क्षमा नहीं किया जा सकता है, उनके खराब प्रभावों को सहन किए बिना (बाह्य वेबसाईट- गायत्री परिवार)। इसी प्रकार, वह धर्म को नकारने वालों में भी प्रतीत नहीं होता है, लेकिन वह इस तथ्य को इंगित करता है कि सबसे अच्छा धर्म केवल मानवता है, और अमानवीय गतिविधियों को धर्म के नाम पर उचित नहीं ठहराया जा सकता है। वह धार्मिक सभाओं को नकारने वालों में नहीं दिखता है, लेकिन इस तथ्य को इंगित करता है कि धार्मिक सम्मलेन/समूहीकरण अहिंसक होना चाहिए, और एक परिवार की तरह प्यार/मानवता से भरा होना चाहिए, या एक पूर्ण परिवार को एक अहिंसक धार्मिक-सभा की तरह जीना चाहिए, और आपस में पूर्णरूप से प्यार करना चाहिए। पूरा शविद / शरीरविज्ञान दर्शन (वह हिंदी ई-बुक) २० वर्षों के एक लंबे समय में, इसी एकल वाक्यांश शविद की एक ही आधार-नींव पर विकसित किया गया था, जिसके २० वर्षों के व्यावहारिक अनुशीलन से प्रेमयोगी वज्र को कुण्डलिनी-जागरण की एक झलक मिली थी, जिसका वर्णन गृह-8 पृष्ठ पर किया गया है।

कुंडलिनी-योगा कितना असली है

यह उतना ही वास्तविक है, जितना कि हमारा अस्तित्व है। रहस्यवादी प्रेमयोगी वज्र ने अपने कुंडलिनीजागरण (पढ़ें उपरोक्त ईपुस्तक) के बारे में अपने स्वयं के जीवंत अनुभवों का वर्णन किया है। उन्होंने उन सभी आवश्यक परिस्थितियों का विस्तृत विवरण दिया है, जिनका उन्हें अपनी कुंडलिनी-जागृति से पहले सामना करना पड़ा। उन्होंने इस ई-पुस्तक में अपने कुंडलिनी-जागृति और इसके प्रभावों के वास्तविक समय के अनुभव को अच्छी तरह से समझाया है।

कुंडलिनी-योगा में कोई कठोर और तेज़ नियम नहीं, भौतिक रूप से

थोड़ी देर के लिए शरीर के अलग-अलग भागों का झुकाव, उन झुकावों की जोड़ों आदि पर संवेदनाओं में अनुभूत कुंडलिनी-छवि (पढ़ें उपरोक्त ईपुस्तक) को भड़काने वाली श्वास पहुँच जाती है। वो जोड़ों के विशेष भाग/चक्र आदि

सांस के साथ हिलते हैं/कंपन करते हैं। अभ्यास से उन चक्रों की विशेष पहचान हो जाती है, क्योंकि कुण्डलिनी अपनी अभिव्यक्ति के लिए खुद ही साधक को निर्देशित करती रहती है। श्वास उस कुण्डलिनी को उसी तरह से आग लगाती है, जैसे हवा सुलगते हुए कोयले को आग लगाती है। इसी प्रकार, सीधी पीठ के साथ बैठने की सिद्धासन आदि की मुद्रा में, और किसी उपयुक्त मुद्रा के साथ बैठने पर, मूलाधार (रूट) चक्र-रूपी अपने मूल घर में कुंडलिनी-छवि पर पैर एड़ी का दबाव लगता है। उसे विभिन्न चक्रों में यौगिक बंधों की सहायता से सीमित कर दिया जाता है, जहां पर उन बंधों से ही पूरे शरीर का प्राण इकट्ठा हो जाता है, जो कुण्डलिनी को भड़का देता है। आसानी से एक सामान्य सा नियम है कि शरीर के अंगों के झुकाव के दौरान जब योगी अपने पेट को दबाता है (उदाहरण के लिए, खड़े होने पर आगे झुकना), तब सांस छोड़ दी जाती है, और शरीर/शरीर के अंगों के विपरीत दिशा में झुकाव के दौरान, सांस खींची जाती है। विशिष्ट तकनीक को तो केवल प्रगति को और तेज बनाने के लिए बनाया गया है। किसी भी योग प्रक्रिया का अभ्यास करते हुए अपनी सहन करने की ऊपरी व सुरक्षित सीमा का उल्लंघन नहीं करना चाहिए।भोजन हल्का होना चाहिए, और लगातार अंतराल पर लिया जाना चाहिए, कभी भी थोड़ा सा भारी नहीं होना चाहिए, नहीं तो वह सुस्ती पैदा करता है। प्रेमयोगी वज्र के अनुसार, कुंडलिनी योग (पढ़ें उपरोक्त ईपुस्तक) यौनयोग के मौलिक आधार पर कृत्रिम रूप से तैयार/डिजाइन किया गया प्रतीत होता है। व्यावहारिक/प्रैक्टिकल और वास्तविक समय का तांत्रिक विवरण तो "एक योगी की प्रेम कहानी" में है, और इस ई-बुक (हिंदी) में और अधिक गहरी जानकारी पढ़ी जा सकती है।

कुंडलिनी के ऊपर आधारित धर्म

प्रेमयोगी वज्र के अनुसार, सभी धर्म विशेष रूप से हिंदु / सनातन धर्म पूरी तरह से कुंडलिनी-उन्मुख हैं।भारतीय संस्कृति में सब कुछ केवल कुंडलिनी जगाने के लिए था। आज यह गलत समझा जा सकता है। आप उन चीजों को मूर्ति-पूजा, मंत्र-उच्चारण, यज्ञ, देवदर्शन (भगवान के दर्शन), तीर्थयात्रा, ज्योतिष आदि के रूप में बुला सकते हैं। और भी बहुत से धार्मिक क्रियाकलाप, उनके अपने असली या आंतरिक रूपों में, वे सभी एक विशाल कुंडलिनी मशीन के विभिन्न स्पेयर पार्ट्स के रूप में काम करते थे।

ऐसा लगता है, जैसे धार्मिक चरमपंथियों की उन धार्मिक गतिविधियों के हानिकारक प्रभावों के लिए यह सर्वाधिक सही स्पष्टीकरण है, जो हमारे इतिहास की बहुत लंबी श्रृंखला में आज भी स्पष्ट है। धार्मिक गतिविधियों के माध्यम से प्राप्त की गई मानसिक ऊर्जा को यदि एकल कुंडलिनी-छवि पर केंद्रित (ध्यान-योग आदि के माध्यम से) किया जाता है, तो यह हमारे जीवन के हर पहलू में चमत्कार पैदा करती है, जबकि यदि मास्टर / ईश्वर / प्रिय आदि (कुंडलिनी) की अकेली मानसिक छवि पर इसे केंद्रित नहीं किया जाता है, तो यह इसी प्रकार से परेशानियाँ भी पैदा कर सकती है।

आत्मज्ञान (पढ़ें उपरोक्त ईपुस्तक), क्या यह स्वयं में एक मुक्ति है, या मुक्ति की ओर ले जाता है

आश्चर्यजनक रूप से, आत्मज्ञान स्वयं में मुक्ति के रूप में नहीं (पढ़ें उपरोक्त ईपुस्तक) है। इसके बजाय यह उस जीवनशैली को अपनाने में मदद करता है, जो मुक्ति की ओर ले जाती है। प्रेमयोगी वज्र ने इस वास्तविकता को अपने तार्किक, वैज्ञानिक और अनुभवी तथ्यों की मदद से साबित कर दिया है, क्योंकि उन्हें बहुत पहले एक झलक रूप में आत्मज्ञान का अनुभव हुआ था। उन्होंने ज्ञान के बारे में प्रचलित विभिन्न मिथकों को भी भंग कर दिया है। यदि अद्वैत का सही ढंग से और कठोर रूप से अभ्यास किया जाता है, तो आत्मज्ञान या कुंडलिनी-जागृति के बिना भी मुक्ति संभव दिखाई देती है। जब अद्वैतभावना अपने शीर्ष स्तर तक पहुंच जाती है, तो इसे ही आत्मज्ञान कहा जाता है (पढ़ें उपरोक्त ईपुस्तक)। यह अचानक से असाधारण चमक के साथ हो सकता है, जैसे प्रेमयोगी वज्र ने वेबपृष्ठ 'गृह-1' पर वर्णित किया है, या ऐसी चमक वहां नहीं भी हो सकती है। अगर केवल आत्मज्ञान ही मुक्ति के लिए ज़िम्मेदार होता, तो हर प्राचीन भारतीय आध्यात्मिक व्यवस्था ने नियमित रूप से एक मंत्र का जप करने पर भी हर जगह मुक्ति का दावा नहीं किया होता। दूसरी तरफ, अगर आत्मज्ञान या कुंडलिनी-जागृति के बाद भी अद्वैतयुक्त जीवनशैली को बलपूर्वक इनकार किया जाता है (पढ़ें उपरोक्त ईपुस्तक), तो उससे किसी की मुक्ति संदिग्ध दिखाई देती है। वास्तविक अद्वैत-प्रेमियों को कोई भी आध्यात्मिक उपलब्धि नहीं चाहिए होती है, क्योंकि वे बहुत खुश होते हैं, और अद्वैत-दृष्टिकोण के साथ अपने व्यवसाय से पूरी तरह से संतुष्ट होते हैं। यह हमारे दैनिक जीवन में शविद (शरीरविज्ञान दर्शन) और शरीरमंडल (शरीर-ब्रह्मांड / सूक्ष्म ब्रह्मांड) के महत्त्व को दर्शाता है, जिनसे समय के हर पल में अद्वैतभाव को मजबूत किया जा सके।

यौनयोग (पढ़ें उपरोक्त ईपुस्तक), यह कितना असली है

प्रेमयोगी वज्र का कहना है कि यौन योग / तंत्र योग (पढ़ें उपरोक्त ईपुस्तक) उतना ही वास्तविक है, जितना कि यौन प्रजनन स्वयं ही है, और यह सबसे प्रभावी योग है। प्रेमयोगी वज्र ने अप्रत्यक्ष / दक्षिणपंथी तांत्रिक, और समवाही यौनयोग के माध्यम से आत्मज्ञान की झलक प्राप्त की है, जबकि उन्हें प्रत्यक्ष / वामपंथी तांत्रिक, और विषमवाही यौनयोग के माध्यम से कुंडलिनी-जागरण हो गया है। यह प्रत्यक्ष / पूर्ण, या अप्रत्यक्ष / सांकेतिक हो सकता है। यह समवाही (कुंडलिनी-छवि और कुंडलिनी-उत्थापक, दोनों रूपों में एक ही तंत्र-प्रेमिका है), या विषमवाही (कुंडलिनी छवि के रूप में गुरु / देवता / अन्य प्रेमी आदि, और कुंडलिनी उत्थापक के रूप में तंत्र-प्रेमिका, दोनों अलग-2 हैं)। वह आगे कहता है कि यौन योग की मदद लिए बिना सांसारिक व्यक्ति द्वारा आध्यात्मिक सफलता प्राप्त करना सिर्फ एक दुःस्वप्न की तरह है, या कहता है कि यह लगभग असंभव है। वह यह भी कहते हैं कि यौनयोग की सफलता के लिए, एक तांत्रिक जोड़े को पूरी तरह से एक-दूसरे के प्रति अनासक्त व अद्वैतभाव-युक्त रहना चाहिए, और प्रत्येक ध्यान कुंडलिनी पर केंद्रित होना चाहिए। वह अनुभव-रूप से स्पष्ट करता है कि यौनयोग कुंडलिनी-विकास के अंतिम चरण में विशेष रूप से सहायक है, जो कि जागृति के लिए चमकती कुंडलिनी को अंतिम दौड़ में भागने के लिए विशाल व आवश्यक गति (escape velocity) प्रदान करता है। उन्होंने इस ई-बुक में यौनयोग तकनीक को काफी सरल, सभ्य व विस्तृत तरीके से समझाया है, जिसमें इसके लिए सहायक कारक और इससे संभावित जोखिम भी शामिल हैं। इससे सम्बंधित कुछ वास्तविक-समय के अनुभवी विवरण 'एक योगी की प्रेम-कहानी' (Love story of a Yogi) पर भी मिल सकते हैं। वह कहता है कि लैंगिक-सम्बन्ध सबसे अजीब है। वह ओशो की इस उक्ति का भी समर्थन करता है कि इसका अध्ययन बहुत कम किया गया है। अगर यह तुरंत कुंडलिनी को सक्रिय कर सकता है, तो यह इसे एकदम से धो भी सकता है। यौनसम्बन्ध एक रूपांतरक-रसायन (alchemy) की तरह काम करता है, जो एक व्यक्तित्व को विभिन्न रूपों / व्यक्तित्वों / अहंकार-रूपों में प्रभावी रूप से बदल देता है, खासकर यदि इसका एक सिद्ध तांत्रिक तरीके से अभ्यास किया जाता है। वह लक्षित / केंद्रित यौन-रूपांतरण नियमित रूप से होने दिया जाने पर, धीरे-धीरे, समय के साथ जागृति के पूर्ण परिवर्तन में समाप्त हो जाता है। इस ई-बुक में, आचार्य रजनीश / ओशो के उस तांत्रिक बयान(पढ़ें उपरोक्त ईपुस्तक) का समर्थन किया जाता है कि यौन-आकर्षण मुख्य रूप से समाधि-स्थिति (कुंडलिनी-जागृति) को प्राप्त करने के लिए ही उत्पन्न होता है। उनकी तथाकथित विवादास्पद पुस्तक, "सम्भोग से समाधि तक" (बाह्य वेबसाईट- मुफ्त पुस्तक डाऊनलोड) में उनके तांत्रिक बयान कि समाधि / कुंडलिनी-जागृति की झलक यौन योग के माध्यम से आसानी से अनुभव की जा सकती है, जिसे फिर नियमित रूप से किए जाने वाले पूर्ण-कुण्डलिनीयोग के रूप में जारी रखा जा सकता है, उसे भी प्रेमयोगी वज्र के द्वारा अनुभव-रूप से सत्यापित किया जाता है। तांत्रिक यौन-आकर्षण चाहे प्रत्यक्ष हो या परोक्ष, दोनों ही यौगिक-रूपांतरक की तरह काम करते हैं। इसे इस वेबसाइट के "एक योगी की प्रेम कहानी" से संबंधित विशिष्ट / समापन वेब पेज पर वास्तविक-समय, मूल, व्यावहारिक, तांत्रिक और अनुभवपूर्ण रूप में भी पढ़ा जा सकता है।

वैज्ञानिक रूप से पतंजलि-योग एक अति घनीभूत प्रेम-प्रकरण ही है

प्रेमयोगी वज्र कहते हैं कि हाँ, यह सच है। पतंजलि योग कुछ भी खास नहीं है, बल्कि एक गहन प्रेम-संबंध का व्यावहारीकृत रूप ही है।

एक गहरे प्रेम संबंध अर्थात एक मजबूत यिन-यांग आकर्षण में, विपरीतलैंगिक साथी पर ध्यान स्वतः ही केंद्रित हो जाता है, और मानसिक एकाग्रता तेजी से विकसित होती हुई सम्प्रज्ञात समाधि विकसित हो जाती है (बाह्य वेबसाईट- भारतकोष)। जानबूझकर या सहज ही भौतिकसम्बन्ध के टूटने के साथ, मानसिक समाधि अपने चरम पर पहुंच जाती है, और जल्द ही असम्प्रज्ञात समाधि में परिवर्तित हो जाती है, जो किसी भी समय सहज कुण्डलिनीजागरण या आत्मज्ञान का कारण बन सकती है। इस तरह, वह विकसित व मजबूत यिन-यांग आकर्षण, जब वर्षों तक बना कर रखा जाता है, तो अपनी पारंपरिक जागृति की आवश्यकता के बिना ही, वर्षों तक वह कुंडलिनी स्वयं ही प्रचंड रूप से सक्रिय (अर्थात प्रेमी या प्रेमिका/कंसोर्ट की मानसिक छवि हमेशा मस्तिष्क के अंदर बनी रहती है) बनी रहती है। यह कृत्रिम ध्यान की तुलना में प्राकृतिक / सहज यिन-यांग आकर्षण से उत्पन्न सहज ध्यान की विशिष्टता है। हालांकि, इस तरह के प्राकृतिक / यौनयोग मार्ग के साथ एक अच्छी तरह से सक्षम तांत्रिक गुरु की आवश्यकता होती है, जो यौनयोग / तंत्र-मार्ग से उत्पन्न होने वाली मानसिक ऊर्जा की विशाल मात्रा को संभावित बर्बादी से रोकने के लिए, और अनुचित कार्यों / विचारों के माध्यम से उसके दुरुपयोग को रोकने के लिए प्रत्यक्ष-अप्रत्यक्ष रूप में कदम उठाते हैं; जैसा अवसर प्रेमयोगी वज्र के लिए उपलब्ध हुआ था।

इस ई-पुस्तक में प्रेमयोगी वज्र द्वारा प्रदान किए गए अनुभवी विवरण को पढ़ने पर आप स्वयं विश्वास करेंगे। यह सभी कुछ लगातार बन रही मानसिक छवि / चित्र का ही चमत्कार है। इसी तरह, यदि कोई भी, प्राथमिक रूप से

व्यक्तित्वमयी छवि लंबे समय से बार-बार किसी के दिमाग में घूमती है, तो यह एक संकेत है कि उसके पास मानसिक कुंडलिनीछवि सक्रिय है, या उसके पिछले जन्म में वह जागृत हुई है, और वह आसानी से उसे फिर से जगा सकता है, जिसके लिए उसे कुंडलिनीयोग अभ्यास के साथ-२ अद्वैतमयी जीवनशैली अपनानी होगी। यह सब इस तांत्रिक वेबसाइट के "एक योगी की प्रेम कहानी" के निम्नलिखित वेब पृष्ठों पर एक बहुत ही अनुभवी तरीके से समझाया गया है।

कुंडलिनी-जागरण के लिए केवलमात्र द्वार के रूप में यौनयोग

प्रेमयोगी वज्र कहते हैं कि हां, यह बात सांसारिक जीवन के मामले में बिल्कुल सही है। कोई भी, सामान्य सांसारिक जीवन में, यौनयोग की कम या अधिक सहायता के बिना कुंडलिनी-जागृति को प्राप्त नहीं कर सकता है। हालांकि इसमें सफल होने के लिए अत्यधिक अभ्यास; धैर्य विशेषतः इस मामले में कि सामाजिकता के साथ यौनसम्बन्ध एक ही साथी तक लम्बे समय तक / जीवनभर / जब तक कि विशेष आध्यात्मिक सफलता प्राप्त नहीं हो जाती, तब तक जारी रखने; लम्बे समय तक निरंतर जारी अद्वैतमयी तांत्रिक दृष्टिकोण के अभ्यास (यद्यपि यह सभी कुछ रुचिकर/रोमांचक/क्रीड़ाप्रद/आनंददायक होता है), अतिरिक्त समय, तनाव-रहित मन/शरीर, दृढ़ निश्चय, एकांत, खुले-डुले परिवेश, व्यवधान-रहित स्थान/कक्ष, भद्र व स्वच्छ/स्वास्थ्यप्रद जीवनशैली, प्रेमपूर्ण दृष्टिकोण (मुख्यतया दोनों तांत्रिक साथियों के बीच में), परस्पर सहयोग, आत्मनियंत्रण, अनासक्तिमय दृष्टिकोण (मुख्यतया दोनों के बीच में परस्पर), कुण्डलिनी पर केन्द्रित ध्यान रखने, सामाजिक रूप से अच्छे व्यवहार/उत्तरदायित्व, प्रकृति-प्रेम, शान्ति; जोड़े के द्वारा मनोरंजक भ्रमण (विशेषतया सुन्दर स्थानों पर), अद्वैतमयी दृष्टिकोण, कुण्डलिनीयोग अभ्यास (न्यूनतम एक घंटे की अकेली योगाभ्यास बैठक व दिन में दो बैठकें), समर्पण, विशवास, चौकसी, सावधानी/बचाव के तरीकों, हिम्मत, निरंतरता और दृढ़ इच्छाशक्ति की आवश्यकता होती है। दोनों भागीदारों के पास अलग-अलग प्रकार की हल्की या अधिकतम रूप से मध्यम रणनीतियों के माध्यम से एक दूसरे को सही योगिक जीवन शैली में लाने का बराबर अधिकार है, यदि कोई भी किसी भी प्रकार से गड़बड़ कर रहा हो। यद्यपि व्यावहारिक रूप से महिला साथी इस संबंध में थोड़ी बड़ी भूमिका निभाती है। अगर कोई प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष यौनयोग की सहायता के बिना ही अपनी कुंडलिनी को जागृत करना चाहता है, तो उसे निश्चित रूप से सांसारिक जीवन, कम या ज्यादा मात्रा में छोड़ना ही पड़ता है। प्रेमयोगी वज्र ने इसे इसी वेबसाइट और उपरोक्त ई-पुस्तक में अनुभवी रूप से समझाया है।

पसंद-नापसंद एक अलग बात है, सत्य एक अलग बात है

प्रेमयोगी वज्र का कहना है कि पसंद और सच्चाई को हमेशा बराबर और समानांतर नहीं बनाया जा सकता है। किसी भी योग तकनीक (यौनयोग सहित) को किसी के द्वारा नापसंद किया जा सकता है, लेकिन वह उस तकनीक के पीछे छुपे हुए वैज्ञानिक, अनुभवी और तार्किक सत्य से इंकार नहीं कर सकता है। यदि कोई व्यक्ति पूरी निष्ठा से, पूर्णता से और पूर्ण विश्वास के साथ वास्तविकता को स्वीकार करता है, तो वह निश्चित रूप से उसके लाभ को स्वचालित रूप से प्राप्त कर लेता है, भले ही वह उस पर नहीं चल सके, बशर्ते कि वह मानवता-सीमा के भीतर पूरी तरह से बना रहे। प्रेमयोगी वज्र के साथ भी यही हुआ था। वह विभिन्न कारणों से कई सालों तक पूरी तरह से तंत्रानुसार कार्य नहीं कर सका, लेकिन उसे तांत्रिक सिद्धांत पर पूर्ण विश्वास था। नतीजतन, अपने विस्फोटक कुण्डलिनीजागरण के रूप में उसे तब तांत्रिक उपलब्धि प्राप्त हुई, जब उसे अपने जीवन में, विशेषतः यौनजीवन में तांत्रिक सिद्धांतों को लागू करने का, बहुत कम समय के लिए एक बहुत अच्छा अवसर प्राप्त हुआ।

अद्वैत-तंत्र एक सबसे अन्यथा समझा गया और सबसे अन्यथा प्रयोग में लाया गया दर्शन है।

धार्मिक चरमपंथी इसके सबसे अच्छे उदाहरण हैं। आम सोच के खिलाफ, वास्तविक तांत्रिक पारंपरिक ऋषियों से अलग नहीं हैं, परन्तु अपेक्षाकृत रूप से तंत्रयोगी अन्दर से अधिक परिष्कृत हैं, हालांकि बाहरी रूप से वे अधिक व्यावहारिक दिखाई दे सकते हैं। बहुत से लोग खुद को तांत्रिक के रूप में मानने की कोशिश करते हैं, हालांकि वे वास्तव में तांत्रिक नहीं होते हैं, क्योंकि केवलमात्र तांत्रिक ही सर्वोच्च कोटि के वास्तविक ब्रम्हचारी होते हैं (पढ़ें उपरोक्त ईपुस्तक)। अधिकांश लोग तांत्रिक शैली को नकारात्मकता, घृणा, विरूपण, भय और संदेह के साथ देखते हैं; और इस प्रकार से खुद को ही धोखा दे रहे होते हैं। इस तरह, धार्मिक और अमानवीय चरमपंथियों को देख कर लगता है कि विभिन्न अमानवीय प्रथाओं में तांत्रिक शक्ति का दुरुपयोग करने के लिए, उनके रूप में तांत्रिकों को पथभ्रष्ट किया गया है। यद्यपि तंत्र कुंडलिनी जगाने के लिए एक उत्पथ/अनियंत्रित पथ/असामाजिक पथ/विचित्र पथ प्रतीत होता है, लेकिन साथ ही यह समाजवाद और मानवता पर भी बहुत बल देता है। केवल तंत्र के साथ ही प्राचीन भारत में प्रचलित महिला के सम्मान को पूरी तरह से वापस लाया जा सकता है।

प्रेमयोगी वज्र आगे कहते हैं

त्रायते यत् तनात् तत् तंत्रम्। जो हमें अपने शरीर से मुक्त करने में मदद करता है, वह तंत्र है (बाह्य वेबसाईट-shabarmantraonline.blogspot)। तंत्र का दूसरा अर्थ है, "त्रायते यस्मात् तनं तत् तन्त्रं"। इसका मतलब है कि स्वस्थ जीवनशैली के साथ स्वस्थ शरीर का निर्माण आत्मजागृति के लिए अत्यावश्यक है। तंत्र अध्यात्मविदों का विज्ञान है। तंत्र राजाओं का आध्यात्मिक अभ्यास है। तंत्र एक सबसे शक्तिशाली मुक्तिकारी यंत्र/मशीन है। तंत्र में हर मानवीय कार्य और भावना अनुमत है, हालांकि एक अनासक्त / अद्वैत रवैये के साथ। मानवीय सामाजिक कार्य और प्रथाएं, जो बंधन उत्पन्न करती हैं, वे ही मुक्ति उत्पन्न करने के लिए तंत्र में कार्यरत की जाती हैं; जैसे कि अग्नि का दुरुपयोग भी किया जा रहा है, और साथ ही साथ हमारी सभ्यता की शुरुआत के बाद से ही इसका सदुपयोग भी किया जा रहा है। मैं कई लोगों के मत से आगे जा रहा हूं। वे कहते हैं कि केवल शुद्ध सनसनी/मानसिकता महसूस करनी चाहिए, भावना नहीं; लेकिन मैं कहता हूं कि साथ ही भावनात्मक सनसनी भी महसूस करनी चाहिए, हालांकि अद्वैत के साथ ही; जैसे कि देहपुरुष भी महसूस करते हैं। इस तरह से भावनाएँ शुद्ध हो जाती है, जो हमें अचानक ही एक अद्भुत आध्यात्मिक विकास की ओर ले जाती हैं। तंत्र के शब्दों में, कोई भी मानवीय गतिविधियां खराब नहीं होती हैं, बल्कि यह रवैया/दृष्टिकोण है, जो खराब या अच्छा हो सकता है। द्वैतपूर्ण रवैये को बुरा माना जाता है, जबकि अद्वैतपूर्ण रवैये को अच्छा माना जाता है। तंत्र हमें सिखाता है कि कैसे जीवित रहते हुए ही जीवनमुक्त बन कर रहा जाए।

प्राचीन भारतीय समाज के पारिवारिक जीवन में महिला की भूमिका

प्राचीन भारतीय समाज में, पुरुष एक भौतिक देखभाल करने वाला और महिला एक आध्यात्मिक देखभाल करने वाली होती थी। महिला परिवार की कक्षा का केंद्र होता था। वह कुंडलिनी प्रक्रिया और यौन-नैतिकीकृत तांत्रिक जीवनशैली में आध्यात्मिक रूप से उत्थान प्रदान करने के मामले में अपनी भूमिका के बारे में अच्छी तरह से जागरूक होती थी। उसे तांत्रिक मास्टर के रूप में माना जाता था, जैसे कि वह इस संबंध में अधिकांश जिम्मेदारियाँ संभाल रही होती थी।

यह एक आम अविश्वास है कि महिलाओं का तंत्र में शोषण होता है। शायद यह तंत्र या धर्म के नाम पर धार्मिक चरमपंथियों की दुर्भावनापूर्ण गतिविधियों के माध्यम से उभरा (पढ़ें ईपुस्तक, कुण्डलिनी रहस्योद्घाटित- प्रेमयोगी वज्र क्या कहता है)। वास्तव में, तांत्रिकयोगी योगियों की शीर्ष श्रेणी में आते हैं। किसी भी असली योगी ने किसी का भी शोषण किया हो, ऐसा हम कहीं भी एक उदाहरण भी नहीं देखते हैं। असल में तांत्रिक अपनी पत्नी के प्रति बहुत आभारी हो जाता है, क्योंकि वह उसकी कुंडलिनी को जगाने में बहुत मदद करती है। तो बदले में, वह उसके सांसारिक और आध्यात्मिक विकास के लिए भी अपना सर्वश्रेष्ठ प्रयास करता है।

अद्वैत और गुरु को समझना

प्रेमयोगी वज्र के अनुसार, वास्तविक अद्वैत केवल द्वैताद्वैत के साथ ही मौजूद (बाह्य वेबसाईट- गायत्रीपरिवार-literature.awgp.org) है। “अद्वैत” शब्द के साथ “अ” उपसर्ग कैसे लगाया जा सकता है यदि यह शब्द ही उपस्थित न हो। इसका मतलब है कि द्वैताद्वैत / विशिष्टाद्वैत (बाह्य वेबसाईट- भारतकोष) ही एकमात्र सच्चा और वास्तविक अद्वैत है। जो लोग द्वैतमुक्त जीवन जीते हैं, वे वास्तविक में अद्वैत का अनुभव नहीं कर सकते हैं। जब द्वैत का पक्ष लेने की स्थितियां विद्यमान होती हैं; केवल तभी शविद, पुराण आदि के माध्यम से, या किसी अन्य दार्शनिक माध्यमों से अद्वैत को लागू करने के पर्याप्त अवसर उपलब्ध होते हैं। यह उसी तांत्रिक सिद्धांत को सत्यापित करता है जिसके अनुसार बुरी चीजें हमेशा खराब नहीं होती हैं (पढ़ें उपरोक्त ईपुस्तक)। तांत्रिक, तांत्रिक पंचमकारों में शराब (पढ़ें उपरोक्त ईपुस्तक), मांस (पढ़ें उपरोक्त ईपुस्तक), मैथुन (पढ़ें उपरोक्त ईपुस्तक) आदि का उपयोग करते हैं, अपनी कुंडलिनी को जागृत करने के लिए। दरअसल, द्वैत पर आरोपित अद्वैत, जो कि अद्वैतपूर्ण रवैये के साथ लगातार काम करने से बना होता है, वह किसी की आत्म-जागृति के लिए तेजी से बढ़ता है। इस जीवनशैली को कर्मयोग भी कहा जाता है (बाह्य वेबसाईट- विकिपीडिया)। निरंतर की कामकाजी जीवनशैली और निरंतर का अद्वैतपूर्ण रवैया, दोनों एक साथ चलने के लिए ऊर्जा की निरंतर आपूर्ति की मांग करते हैं। पंचमकारों का न्यायिक और समझदार उपयोग उस मानसिक ऊर्जा का सबसे अच्छा स्रोत (बाह्य वेबसाईट- adhyashakti.com) है। पञ्चमकारों का उपयोग करके, एक प्रकार से कर्मयोग को तंत्र में बदल दिया जाता है। पञ्चमकारों का उपयोग करने वाले व्यक्तियों की संगति भी वैसे ही प्रभावी होती है, जैसे कि अप्रत्यक्ष तरीके से पंचमकारों का उपयोग करना। इस प्रकार से तांत्रिक लाभों को उनके प्रत्यक्ष उपयोग से भी अधिक मजबूती से प्राप्त किया जा सकता है, क्योंकि उस मामले में अपने आप के द्वारा पंचमकार को उपयोग करने का भी कोई अहंकार नहीं होता है। यह आध्यात्मिक सफलता के लिए पारस्परिक सहकारी समाज के महत्व पर भी प्रकाश डालता है। यद्यपि एक अनुभवी आध्यात्मिक गुरु / गुरु की संगति / मजबूत कुण्डलिनी को इस तरह की तांत्रिक प्रथाओं के साथ अवश्य ही विद्यमान होना चाहिए, क्योंकि यदि इन प्रथाओं से कोई स्वर्ग में ले जाया जा सकता है, तो ये जल्द ही नरक में भी ले जा सकती हैं, मुख्य रूप से अगर इन्हें अनुचित रूप से लागू किया जाता है। केवल औपचारिकता के लिए गुरु बनाना तंत्र में काम नहीं करता है, बल्कि गुरु को स्वाभाविक रूप से या ध्यान के माध्यम से किसी के दिमाग में मजबूती से और स्थायी रूप से तैनात किया जाना चाहिए।

यौन तंत्र “सभी कुछ या कुछ नहीं” के रूप में कार्य करता है। इसका मतलब है कि अगर यह ठीक से किया जाता है, तो आध्यात्मिक रूप से सब कुछ हासिल किया जा सकता है, अन्यथा एक बड़ा शून्य ही हासिल होता है। तांत्रिक इन पंचमकारिक / सांसारिक प्रथाओं के साथ शुरुआत में द्वैताद्वैत की दौड़ में शामिल हो जाते हैं, जिससे वे जल्द ही अद्वैत को बढ़ाते हैं, जो पहले के मुकाबले ज्यादा मजबूत होता है, और आनुपातिक आनंद के साथ, किसी भी अनुकूल / व्यावहारिक अद्वैत-दर्शन (शविद आदि) के माध्यम से पर्याप्त मजबूत बने उनके अद्वैतमयी तांत्रिक दृष्टिकोण की सहायता से। इसका मतलब यह भी है कि वास्तविक आध्यात्मिकता वह है, जो भौतिक संसार को भी साथ-2 ले कर चलती है, हालांकि एक अनासक्तिमय रवैये के साथ। आम सोच के मुकाबले, असली अद्वैत पूरी तरह से सांसारिक और प्रगतिशील होता है। असल में, एक गुरु, लगातार रूप से एक तांत्रिक के दिमाग में बने रहने के लिए इन पांच मकारों से प्राप्त द्वैताद्वैत की शक्तिशाली मानसिक ऊर्जा को अवशोषित करता रहता है, और फिर एक कठिन व तेज़ कुंडलिनी

(उस गुरु की मानसिक छवि) में परिवर्तित हो जाता है, जो बाद में कुण्डलिनी-जागरण के रूप में जागृत हो जाती है। अन्यथा सांसारिक और द्वैतमयी क्षेत्रों में ऊर्जा बर्बाद हो जाती है, जिससे एक गंभीर आध्यात्मिक चोट लगती है।

असल में, गुरु का मतलब है कि एक व्यक्ति जिसका व्यवहार मानवतापूर्ण, अहंकारहीन, मुस्कुराते हुए / व्यावहारिक / स्पष्ट / समावेशी / साधारण-सरल, बिना तनाव वाला / कम तनाव वाला, अद्वैतपूर्ण / अनासक्तिपूर्ण, लोकप्रसिद्ध, मित्रवत, सामाजिक, वास्तविक रूप से आध्यात्मिक (अद्वैतपूर्ण और अनासक्तिपूर्ण), अच्छा लगने वाला और अपने दिमाग में अच्छी तरह से बैठने वाला हो। इस तरह, अपने पितामह से बेहतर किसी का गुरु कौन हो सकता है, अधिमानतः साथ में यदि वह वास्तविक रूप से आध्यात्मिक / अद्वैतपूर्ण / अनासक्त भी हो। ये सभी उपरोक्त गुण प्रेमयोगी वज्र के गुरु में मौजूद थे। ध्यान या समाधि या अन्य शुभ आध्यात्मिक साधना से संपन्न गुरु की संगति के साथ, व्यक्ति के यौन-आत्मनियंत्रण में भी सुधार हो जाता है, क्योंकि रोमांस वास्तव में समाधि (कुंडलिनी-जागृति) स्थिति को प्राप्त करने के लिए ही तो किया जाता है। कुंडलिनी योग के अभ्यास के माध्यम से किसी व्यक्ति के लिए अपने गुरु पर ध्यान देना आसान होता है, क्योंकि भगवान या देवता या किसी और चीज के चित्र पर ध्यान केंद्रित करने के बजाय सक्रिय रूप से साथ रह रहे गुरु पर ध्यान केन्द्रित करना शिष्य के लिए आसान होता है। गुरु शिष्य की तरह ही साक्षात जीवन जी रहे होते हैं, अतः उनका चित्र अनेक प्रकार के सांसारिक आयामों के साथ शिष्य के मन में दृढ़तापूर्वक संलग्न हो जाता है। इसके अलावा, शिष्य के उस समुदाय / परिवार के लोग भी समान समुदाय के लोगों के बीच में चलने वाली मानसिक संलग्नन की अंतःक्रिया के माध्यम से शिष्य के मस्तिष्क के अंदर अपने उन करीबी कार्यक्षेत्र के गुरु की छवि को मजबूत करने में अप्रत्यक्ष रूप से मदद करते हैं, जो उस गुरु की प्रेमपूर्ण संगति में रह रहे होते हैं। यह मामला तब नहीं नहीं बन पाता है, या यह कुछ हद तक ही बनता है, यदि एक देवता / किसी अन्य चीज को कुंडलिनी छवि के रूप में विकसित किया गया हो। उस हालत में ध्यान केंद्रित करने की पूरी जिम्मेदारी योगी पर आ जाती है, जिससे उसे अपेक्षाकृत रूप से अधिक प्रयास करने पड़ते हैं, समान यौगिक सफलता प्राप्त करने के लिए।

आमिष के, मुख्य रूप से मछली के भक्षण के दौरान, उनमें स्थित अद्वैतशील देहपुरुषों के रूप में कुंडलिनी को तांत्रिक द्वारा देखा जाता है। मद्य के प्रभाव में होने के दौरान, कुंडलिनी को आराम करते हुए, हालांकि अद्वैतमयी और आनंददायक देहपुरुषों के रूप में अपने शरीर के अंदर तांत्रिक के द्वारा देखा जाता है। इसी प्रकार, यौन संबंध रखने के दौरान, अद्वैतमई देहपुरुष के रूप में कुंडलिनी को अपने शरीर के विभिन्न चक्रों और मुख्य रूप से कामुक जननांग भागों में तांत्रिक द्वारा देखा जाता है। ये विधियां, परिणामस्वरूप अद्वैतपूर्ण रवैये के साथ मानसिक तरंगों के माध्यम से उत्पन्न होने वाली मानसिक ऊर्जा की विशाल मात्रा को कुंडलिनी के विकास के लिए प्रसारित करती हैं, और शरीर के ऊर्जावान तरल पदार्थों की बर्बादी को भी रोकती हैं, जिनके लिए बहुत सारी मानसिक ऊर्जा की जरूरत होती है।

अद्वैत एक सबसे व्यावहारिक ध्यान-पद्धति है। इसका दिन में 24 घंटे के लिए अभ्यास किया जा सकता है। हालांकि, कुंडलिनीयोग के अभ्यास को कम से कम एक घंटे के लिए और दिन में दो बार, कुंडलिनी को अतिरिक्त बढ़ावा देने के लिए किया जा सकता है।

कुछ लोग वास्तविक समय के अद्वैत-निर्माता हैं (वे वास्तविक समय पर अद्वैत के साथ अपने सभी मानसिक रूपों का अनुभव करते हैं), और कुछ लोग वास्तविक जीवन-प्रक्रिया के बाद, समय-समय पर अद्वैत-निर्माता बनते रहते हैं (वे बाद में अपने आराम के समय के दौरान, अपनी वर्तमान मानसिक संरचनाओं में अद्वैत को तब दृढ़ करते हैं, जब वे स्मृति-भण्डार से बाहर घूम रही होती हैं)। ये दोनों प्रकार की प्रथाएं प्रभावी हैं, हालांकि पूर्व प्रकार की प्रथा से तेजी से आध्यात्मिक-प्रगति होती है, क्योंकि उसमें द्वैत को अपना फन उठाने का कोई मौका ही नहीं मिलता। पूर्व-प्रकार का तरीका कम व्यावहारिक प्रतीत होता है, लेकिन वह बाद के प्रकार के तरीके की तुलना में अधिक आध्यात्मिक होता है।

उपरोक्त पैरा को निम्न तरीके से समझा जा सकता है। मेरे विचार द्वैताद्वैत या विशिष्टाद्वैत वाले हैं। पहले आप को द्वैत में अर्थात प्रेम में पूरी तरह डूबना होगा, तभी आप अद्वैत के हकदार होंगे। द्वैत के बिना प्रेम क्या रोजमर्रा के संबंध या दैनिकचर्या आदि भी नहीं चल सकते। अद्वैत कोई दूसरी बूटी का नाम नहीं। जो द्वैत आपने किया था, उसका निराकरण करना है बस। किसी चीज को हटाना नहीं। द्वैत वाली सारी दुनिया रहेगी। फिर जब अद्वैत का प्रभाव खत्म हो जाएगा तब आपको फिर द्वैत वाले मोड में आना होगा। यह ऐसे है जैसे आप गोल चक्के पे क्लोकवाइस घूमो, तो चक्कर आएगा। यदि आप उतना ही फिर एंटीकलोक वाइस घूमो तो चक्कर हट जाएगा। और ज्यादा एंटीकलोक घूमो तो फिर से चक्कर आएगा, इसलिए उतना ही फिर कलोकवाइस घूमना होगा। द्वैत अद्वैत का झूला भी ऐसे ही चलता है। यह अलग बात है कि कोई फटाफट घूमने की दिशा बदलते रहते हैं, जिससे उन्हें चक्कर आता ही नहीं। ऐसे लोग सबसे एकसपर्ट अद्वैत

वेदांती होते। दुनिया है तो इसके साथ घूमना तो पड़ेगा ही। खड़े तो नहीं रह सकते। यह आप पर है कि कैसे घूमना, जिससे माया-भ्रम न लगे। धन्यवाद।

एक भौतिक संतुलक / बफर के रूप में अद्वैत

अद्वैतभाव एक संतुलकभाव है, जो अपने अन्दर सभी मानसिक चीजों को सबसे उपयुक्त अनुपात में आत्मसात करता है, और किसी की भी अति नहीं होने देता।

सामाजिक समरसता / सोशल-हार्मनी में वास्तविक अद्वैत

हिंदी में हार्मनी (सद्भाव) का अर्थ है, "हार मानी"। प्रेमयोगी वज्र के अनुसार रंग, जाति, जन्म, उत्पत्ति आदि के आधार पर लोगों के बीच में कोई सामाजिक भेदभाव नहीं होना चाहिए, सर्वाधिक व्यावहारिक और प्रभावी तरीके से अद्वैत को लागू करने के लिए। हालांकि, प्राकृतिक मतभेदों को स्वीकार करने में कोई बुराई नहीं है, लेकिन मतभेदों के आधार पर किसी के दिमाग में हीनता पैदा करना एक बुरी बात है। जैसे अद्वैतभाव से सभी को एकसमान समझने का गुण उत्पन्न होता है, उसी प्रकार से सभी को एकसमान समझने से अद्वैतभाव की उत्पत्ति होती है। इसी तरह, किसी भी आध्यात्मिक शैली से नफरत नहीं की जानी चाहिए (पढ़ें उपरोक्त ईपुस्तक)। हर किसी को अलग-अलग चरणों से गुजरना पड़ता है, इसलिए किसी विशेष आध्यात्मिक चरण में स्थित किसी व्यक्ति से नफरत करना अच्छी तरह से काम नहीं करता है। उदाहरण के लिए, अपनी यात्रा की शुरुआत में, पूरी तरह से भौतिकवादी मानसिक-साम्राज्य के चरण में रचा-पचा एक व्यक्ति अद्वैत-चरण में प्रविष्ट होता है। उसके बाद वह कुंडलिनीयोग-चरण में प्रगति करता है। अंत में, वह सीधे ही कुंडलिनीजागृति तक पहुंच सकता है, या तांत्रिकयोग के एक छोटे चरण से भी गुजर सकता है। फिर आत्मज्ञान का अंतिम / सुपर फाइनल चरण है। इसलिए अलग-अलग चरणों में स्थित लोगों को स्वस्थ समाज को बनाए रखने के लिए एक-दूसरे के साथ मिलकर रहना चाहिए, क्योंकि स्वस्थ समाज का प्रत्येक व्यक्ति एक दूसरे के साथ प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से / अदृश्य रूप से सहयोग करता है। जो लोग सीधे शीर्ष चरणों तक पहुंचते देखे जाते हैं, वे वास्तव में अपने पिछले जन्मों में निचले चरणों को प्राप्त होए हुए होते हैं। दूसरे शब्दों में, किसी को भी एक मानव-छिपकली / ह्यूमन सैलामैंडर की तरह, आस-पास की स्थिति के अनुसार अपना रंग बदलना चाहिए, अर्थात मानवीय तरीके से तदनुसार हर जगह समायोजित हो जाना चाहिए।

कुंडलिनी और अद्वैत

ये दोनों एक और एक ही चीज़ हैं। अद्वैत कुंडलिनी को पोषण देता है, और उसे अपने दिमाग में उज्ज्वल रूप से व्यक्त करता है। इसी तरह, कुंडलिनी-योग अद्वैत का उत्पादन करने में मदद करता है। एक अनुभवी तांत्रिक पहले तो लंबे समय तक किसी भी उपयुक्त सांसारिक साधन के साथ अपने अद्वैतमयी दृष्टिकोण को समृद्ध करता है, और फिर कुंडलिनी को ऊपर की ओर विशाल धक्का देने के लिए, श्मशान (अंतिम संस्कार स्थान) आदि किसी भी शांतिपूर्ण और निर्बाध स्थान पर कुंडलिनीयोग अभ्यास का आयोजन करता है। अंत में, वह यौनयोग का सहयोग भी अपनी उग्र कुंडलिनी को अंतिम भागने का वेग / एस्केप विलोसिटी प्रदान करने के लिए लेता है, और इस प्रकार उसे जागृत करता है। यह एक वास्तविक समय के अनुभवपूर्ण विस्तार में भी समझाया गया है, जो इस तांत्रिक वेबसाइट पर उपलब्ध है।

क्या ईश्वर अधिक श्रेष्ठ हैं या प्रकृति

येदोनों एक दूसरे के बराबर हैं। वैसे ही, जैसे शिव (भगवान) और पार्वती (प्रकृति) एक दूसरे के समान हैं। असली कला अर्धनारीश्वर (आधे पुरुषपन और आधे महिलापन वाला देवता) या शिव-शक्ति (उस शांतियुक्त और आनंदमय शिव पर नृत्य करने वाली देवी काली, जो नीचे लेटा है) या उस नटराज (नृत्यलीन अद्वैतमयी शिव) बनने में असली कला है, जो भीतर से शांत और आनंदमय भगवान है, जबकि बाहर से नृत्य करती प्रकृति / सृजनशक्ति / सृष्टि / देवी के रूप में है।

मुक्ति के लिए आत्मज्ञान आवश्यक भी नहीं हो सकता

येशब्द अजीब लगते हैं, लेकिन यह बिल्कुल सही है। प्रेमयोगी वज्र ने अपने स्वयं के प्रत्यक्ष अनुभवों के साथ इसे समझाया है। असल में, यह अद्वैत है, जो अधिक महत्वपूर्ण है (पढ़ें उपरोक्त ईपुस्तक)। प्रेमयोगी वज्र के द्वारा उसके अपने जीवन में द्वैतपूर्ण व बाह्यवादी / भौतिकवादी दृष्टिकोण को अपनाए जाने के बाद, वह पूरी तरह से अपने प्रभाव

के साथ अपने ज्ञान-अनुभव को भूल गए थे, क्योंकि वे जानबूझकर एक सहज व प्राकृतिक प्रवाह के खिलाफ जा रहे थे। हालांकि, वह फिर से अद्वैत और छुटपुट योगसाधना का अभ्यास करने के कई सालों बाद उस ज्ञान के किंचित निशान को पुनः याद करने में सफल हो गया था।

ज्ञान का अनुभव भी किसी भी अन्य, दिमाग से किए गए सांसारिक अनुभव की तरह समय के साथ दूर हो जाता है। प्रेमयोगी वज्र में, उस ज्ञान के अनुभव को लगभग पहले तीन वर्षों के लिए प्रकृति के द्वारा पूरी तरह से भड़का दिया गया था, और फिर वह धीरे-धीरे फीका हुआ था। फिर अचानक और सहजता से उन्होंने दुनिया को कुछ साबित करने के लिए द्वैत से भरी जीवनशैली अपनाई, जिसके परिणामस्वरूप उनका आत्मज्ञान-अनुभव पूरा फीका हो गया, उन्हें केवल यही ज्ञान रहा कि एक बार उनके पास आत्मज्ञान-अनुभव था। फिर उन्होंने फिर से शविद (शरीरविज्ञान दर्शन / बॉडी साइंस फिलोसोफी) के माध्यम से अद्वैतपूर्ण जीवन शैली को अपनाया, जैसे कि वह उनकी एक जीवनधारण-वृत्ति हो, जिसने उनके आध्यात्मिक विकास को दोबारा शुरू किया। उससे उनका प्रगतिशील सांसारिक विकास भी पुनः बहाल हो गया, क्योंकि आध्यात्मिक व भौतिक विकास, दोनों एक दूसरे से जुड़े हुए हैं। यह सब लगभग 15 वर्षों की लंबी अवधि के बाद उनकी कुंडलिनी-जागृति में समाप्त हो गया। इसका मतलब यह भी है कि आम धारणा के विपरीत सांसारिक और आध्यात्मिक लाभ एक साथ आगे बढ़ते हैं। आत्मज्ञान के माध्यम से प्राप्त अद्वैतमयी रवैया स्थायी रूप से मूलरूप में जारी रह सकता है, अगर किसी भी व्यावहारिक / सांसारिक अद्वैतदर्शन के माध्यम से या / और किसी अच्छी / आध्यात्मिक संगति में रहा जाए, साथ में यदि उसे जानबूझकर और बलपूर्वक न त्याग दिया जाए। एक आदमी जो आग के हानिकारक प्रभावों का अनुभवात्मक ज्ञान रखता है, और एक वह जो उस बारे में ज्ञान नहीं रखता है; दोनों को ही आग के द्वारा समान रूप से जला दिया जाता है। इसी तरह, एक व्यक्ति जो आत्म-जागृति के माध्यम से द्वैत के हानिकारक प्रभावों का अनुभवात्मक ज्ञान रखता है, और एक वह जो वैसा ज्ञान नहीं रखता है; दोनों ही द्वैत के द्वारा समान रूप से प्रभावित या बद्ध / गुलाम कर दिए जाते हैं।

कौन आत्मज्ञानी है, और कौन नहीं

यह बयान कि हम किसी के आत्मज्ञान का न्याय नहीं कर सकते हैं, केवल आंशिक रूप से सच है। क्या हम यह न्याय नहीं कर सकते कि कोई अद्वैतावस्था में है या द्वैतावस्था में। प्रत्येक का चेहरा इस बात को स्पष्ट रूप से बताता है, और यहां तक कि एक बच्चा भी इसका न्याय कर सकता है। यदि कोई नियमित रूप से और सही तरीके से अद्वैतभाव के साथ व्यवहार कर रहा है, तो उसे प्रबुद्ध-अनुभव के ज्ञाता के रूप में माना जा सकता है, चाहे भले ही उसके पास आत्मज्ञान का अनुभव हो या नहीं। दूसरी तरफ, अगर आत्मज्ञान का अनुभव करने के बाद भी कोई यदि द्वैतमयी हो जाता है, तो उसे एक आत्मज्ञान से अनजान होने के रूप में माना जाना चाहिए। क्योंकि यह अद्वैत के रूप में आत्मज्ञान का प्रभाव है, जो कि मायने रखता है, न कि एतदकारक आत्मज्ञान (पढ़ें उपरोक्त ईपुस्तक)। इसलिए अद्वैत और आत्मज्ञान, दोनों को किसी की आध्यात्मिक स्थिति का न्याय करने के लिए मानदंड होना चाहिए, न कि केवल आत्मज्ञान को, और किसी के ज्ञान के बारे में संदेह के मामले में केवल अद्वैतदृष्टिकोण ही एकमात्र मानदंड होना चाहिए। इसलिए केवल अद्वैत ही मायने रखता है, फिर चाहे उसके साथ आत्मज्ञान हो या न हो। इस प्रकार से, आत्मज्ञान एक अद्वैतपूर्ण निरंतर जीवन प्रक्रिया या जीवनशैली है, केवल उसकी मानसिक जगमगाहट का एक क्षणिक अनुभवमात्र नहीं है। आत्मज्ञान केवल जीवन के साथ अपनाए जाने योग्य सही दृष्टिकोण के बारे में बताता है, न कि जीवन के वास्तविक अनुभवों को दर्शाता है (बाह्य लिंक- क्वोरा)। जीवन जीने का तरीका तो मानवीय रूप से सामाजिक जीवन को लम्बे समय तक जीने से प्राप्त व्यावहारिक अनुभवों के माध्यम से ही सीखने में आता है।

किसी भी आध्यात्मिक नींव / संस्था के द्वारा उत्पादित आत्मप्रबुद्ध प्राणियों की संख्या के बारे में, यदि किसी भी संस्था के द्वारा एक भी अद्वैतभाव वाला व्यक्ति उत्पादित किया जाता है, तो वह उस संस्था द्वारा उत्पादित सैकड़ों आत्मचमक-प्रबुद्ध प्राणियों से बेहतर होता है, जो उस चमक का सदुपयोग ही नहीं करते हैं। असल में, उस व्यक्ति के द्वारा आत्मज्ञान की मांग नहीं की जाती है, जो अद्वैत-अमृत के आनंद में गहराई से डूबा हुआ है। यह अद्वैत की महानता है। असल में, आत्मज्ञान एक महान गुरु का एक प्रकार है, जो एक व्यक्ति को अद्वैत का महत्व बहुत कुशलता से सिखाता है।

एक सुपर-डुपर रोमांस के रूप में आत्मज्ञान

प्रेमयोगी वज्र के अनुसार, कोई भी बिना रोमांटिक मानसिक जीवन को व्यतीत किए या उसे समझे, ज्ञान को नहीं समझ सकता है। आत्मज्ञान के बारे में गलतफहमी इसी कारण से है कि हम रोमांस और आत्मज्ञान को दो अलग-अलग विषयों में वर्गीकृत करते हैं। वास्तव में ज्ञान सात्विक रोमांस के जैसा ही होता है। एक सुपर रोमांस तब होता है, जब

कोई व्यक्ति सालों के लिए लगातार मस्तिष्क के अंदर अपने प्रेमी की छवि को बंद कर देता है। वह बहुत आनंददायक होता है। वह उस सुपर रोमांस से परे तब कूदता है, जब वह उस प्रेमी के प्रति आसक्ति को नष्ट करने का प्रबंधन करता है। वह आत्मज्ञान है। वह सुपर-डुपर आनंददायक है। वह हर उपलब्धि की चोटी है। वह अवर्णनीय है। सांसारिक जीवन में उसके प्रभाव का केवल सुपर मानसिक रोमांस के माध्यम से अनुमान लगाया जा सकता है। सुपर-डुपर रोमांस / आत्मज्ञान एक पारलौकिक घटना है। प्रबुद्ध होने के भौतिक संकेत एक सुपर रोमांटिक होने के साथ मेल खाते हैं, हालांकि पूर्व मामले में मानसिक रूप से अधिक बलवान होते हैं। उदाहरण के तौर पर, मीरा और भगवान कृष्ण को ही देख लें (बाह्य वेबसाईट- isha.sadhguru.org), बस उनके मानसिक रोमांस का उद्देश्य दुनिया से परे अनंत देश-काल तक चला गया था। इस वेबसाइट के तांत्रिक वेबपृष्ठ "एक योगी की प्रेम कहानी" पर यह सब अच्छी तरह से समझाया गया है।

कुंडलिनी-जागरण किसी को याद करने की तरह

प्रेमयोगी वज्र के अनुसार, कुंडलिनी-जागृति एक जादुई गोली नहीं है। अपनी प्रिय या किसी प्रसिद्ध व्यक्ति की कल्पना / याद में खो गया कोई भी इतनी गहराई से खो सकता है कि परिणामी मानसिक घटना जैसे कुंडलिनी जागृति हो जाती है। किसी की कल्पना में खोने और उसके रूप की कुण्डलिनी के जागृत होने के बीच में कोई अंतर नहीं है। अंतर केवल उस को याद करने की तीव्रता में है। जब वे आनंददायक यादें एक निश्चित सीमा / थ्रेशहोल्ड स्तर को पार करती हैं, तो वही याद किया गया मनुष्याकृत रूप जैसे कुंडलिनी-जागृति बन जाता है। आश्चर्यजनक बात यह है कि यह एक ही समय में एक साधारण मानसिक प्रक्रिया भी है, और एक बहुत ही जटिल व अड़ियल घटना भी, जिसे वश में करना असंभव सा हो जाता है।

कुण्डलिनी-संबंधित मिथ्या अवधारणाएँ

यह प्रमाणित किया जाता है कि इस वेबसाईट के अंतर्गत हम सभी किसी भी धर्म का समर्थन या विरोध नहीं करते हैं। हम केवल धर्म के वैज्ञानिक और मानवीय अध्ययन को बढ़ावा देते हैं। यह वैबसाइट तांत्रिक प्रकार की है, इसलिए इसके प्रति गलतफहमी नहीं पैदा होनी चाहिए। पूरी जानकारी व गुणवत्ता के अभाव में इस वेबसाईट में दर्शाई गई तांत्रिक साधनाएं हानिकारक भी हो सकती हैं, जिनके लिए वैबसाइट जिम्मेदार नहीं है।

कुंडलिनी के संबंध में विवाद

रूट चक्र में कोई भौतिक गड्ढा नहीं है, जहां एक वलायाकृत सांप के आकार में कोई भी शारीरिक कुंडलिनी निष्क्रिय के रूप में लेती हुई हो। इन सभी अलंकृत प्रकारों में साधारण सांसारिक लोगों को खुश / प्रेरित करने के लिए केवल दार्शनिक तुलना और सौंदर्यीकरण किया गया है। इसमें कोई संदेह नहीं है कि कुण्डलिनीप्रकरण के साथ जैव-भौतिक क्रियाएं भी चलती हों, लेकिन कुंडलिनीयोग में वर्णित सबकुछ केवल अनुभवात्मक ही है। दरअसल, प्रत्येक मानसिक छवि सर्वव्यापक चेतना का एक प्रकार का कुंडलित या संकुचित या घटा हुआ रूप ही है। जब सभी चक्र स्पष्ट होते हैं, तो वह छवि एक सांप, एक कीड़ा इत्यादि रूपों में मस्तिष्क की ओर, ऊपर चढ़ते हुए दिखाई दे सकती है, अन्यथा वह पथ के बीच में दिखे बिना ही बंदर की तरह अचानक कूद सकती है, जैसा कि प्रेमयोगी वज्र के साथ हुआ था। एक बार प्रेमयोगी वज्र ने अपनी मानसिक छवि (वह आध्यात्मिक बूढ़ा आदमी) को अपने बेस चक्रों से गर्म हवा के गुब्बारे की तरह उभरकर अपने मस्तिष्क की ओर जाते हुए, अदृश्य रास्ते की यात्रा करते हुए व लगभग 3-4 सेकंड का कुल समय लेते हुए अनुभव किया। संभवतः इन सभी विस्तारों को अभ्यास के साथ अनुभव किया जाता है, हालांकि कुंडलिनी-जागृति के लिए ये आवश्यक प्रतीत नहीं होते। कुंडलिनी भौतिक चीज़ की तरह कुछ भी नहीं है, हालांकि वह जागृत होने पर किसी भी भौतिक इकाई की तुलना में अधिक वास्तविक और स्पष्ट दिखाई देती है। दरअसल, कुंडलिनी की कल्पना की जानी चाहिए। इसी प्रकार, चक्र कोई भौतिक चीजें नहीं हैं, लेकिन ये केवल अनुभवात्मक हैं। वे शरीर बिंदु जहां आसपास के क्षेत्र की तुलना में वह छवि अधिक स्पष्ट है, उन्हें चक्र कहा जाता है। यह अभ्यास के साथ सब स्पष्ट हो जाता है। इसी तरह, नाड़ियाँ भी (कल्पनाओं / संवेदनाओं के मस्तिष्कीय / गैर-मस्तिष्कीय रास्ते) कोई भौतिक वस्तु नहीं हैं। वे केवल सूक्ष्म पथ हैं, जिनका केवल छवि के साथ अनुमान लगाया जा सकता है, जैसे कि आकाश मार्ग का उस पर चल रहे एक विमान के साथ निर्णय लिया जाता है / अनुमान लगाया जाता है, उसे अलग रूप में वैसे अनुभव नहीं किया जाता है, जैसे कि कोई भौतिक इकाई हो। आप उस काल्पनिक / आभासी / अनुमानित पथ को नाड़ी कह सकते हैं, जिस पर कुंडलिनी छवि ऊपर की ओर बढ़ती है। मस्तिष्क तो केवल मस्तिष्क है। यह केवल एक चक्र है। आज्ञा और सहस्रार चक्रों में इसे विभाजित करने की कोई आवश्यकता नहीं है। चक्रों पर लोटस / कमल (तंत्र में भी इसका एक यौन-अर्थ है), रंगों, मन्त्रों इत्यादि को केवल चक्रों पर कुंडलिनी-छवि की पूजा करने के लिए स्थापित किया गया है, ताकि उसे और अधिक संतुष्ट और व्यक्त किया जा सके। आज लोगों के पास इस तरह की विस्तृत और भ्रमित करने वाली औपचारिकताओं को निष्पादित करने के लिए पर्याप्त खाली समय और मस्तिष्क उपलब्ध नहीं है। एक सामान्य तरीके से, कुंडलिनी-जागरण ऐसी गतिविधियों के बिना एक दुःस्वप्न की तरह प्रतीत होता है। केवल तंत्र ही इन औपचारिक गतिविधियों का उल्लंघन कर सकता है, और इस प्रकार कुंडलिनी योग को बहुत सरल बना सकता है। इसलिए बुनियादी और सरल कुंडलिनी योग को तांत्रिक प्रथाओं के साथ आगे बढ़ाया गया है, जो आज के व्यस्त व तकनीकी समय के लायक है। कुंडलिनी योग का अपना अलग आधार नहीं है, लेकिन यह केवल शास्त्रीय पतंजलियोग या राजयोग का तकनीकी संवर्धन ही है। शायद राज योग मस्तिष्क के अंदर सीधे और निरंतर रूप से कल्पित की गई कुंडलिनी-छवि को पोषित करने की सलाह देता है। यह सामान्य सांसारिक लोगों के लिए बहुत अधिक अव्यवहारिक, अप्रभावी और मुश्किल हो जाता है। इन समस्याओं को हल करने के लिए, कुंडलिनी योग तैयार किया गया है, जो कुंडलिनी को बढ़ाने और मूल राजयोग को और अधिक प्रभावी बनाने के लिए यौनसिद्धांत को उसके साथ नियोजित करता है। वह यौन सिद्धांत कहता है कि यौन क्षेत्र में पोषित मानसिक छवि को, उसके सक्रियण के लिए मस्तिष्क तक उठाना और उसे लगातार अभ्यास के साथ जागृत करना बहुत आसान है। यह हमारे दैनिक जीवन में भी स्पष्ट है, जहां यौनाकर्षण या यिन-यांग आकर्षण (यिन- स्त्री शक्ति, यांग- पुरुष शक्ति) सामाजिक जीवन के सबसे शक्तिशाली और निर्णायक कारक के रूप में देखा जाता है। कुंडलिनी योग में मुख्य रूप से वही प्राकृतिक और तांत्रिक सिद्धांत नियोजित किया गया है। यही कारण है कि शक्तिशाली यौनयोग को कुंडलिनीयोग की चोटी के रूप में जाना जाता है, और यह उसकी शुरुआत के एकदम बाद से ही कई सनकी लोगों के द्वारा उसमें नियोजित किया जाता है, हालांकि सैद्धांतिक रूप से और नैतिक रूप से, इसे कुंडलिनीयोग के अंतिम चरण में, कुण्डलिनी को आवश्यक भागने का वेग (एस्केप विलोसिटी) प्रदान करने के लिए शामिल किया जाता है, ताकि कुण्डलिनी जागृत हो सके। ऊपर बताए गए

शरीर के चक्रों व शरीर के अन्य महत्वपूर्ण क्षेत्रों में भी कुण्डलिनी-छवि को पोषित किया जा सकता है, हालांकि यौन चक्रों की तुलना में उनके पास कम प्रभावशीलता है।

चित्र-विचित्र कुंडलिनी-अनुभव

प्रेमयोगी वज्र का कहना है कि उस उपयुक्त, जाने-माने और प्यारे व्यक्ति के व्यक्तित्व की मानसिक छवि की कल्पना (ध्यान) की जानी चाहिए अपनी कुंडलिनी के रूप में, जो कि एक बड़े आध्यात्मिक व्यक्ति / परिवार के सदस्य / मास्टर / गुरु के रूप में प्रभावशाली होता है, और / या हमेशा संपर्क में रहता है। उससे उस कुण्डलिनी पर स्वाभाविक रूप से या ध्यान के माध्यम से मानसिक एकाग्रता अच्छी तरह से बनी रहती है। इस तरह, मानसिक कुंडलिनी छवि को और अधिक दक्षता / दृढ़ता प्राप्त हो जाती है, और साथ ही, भावनात्मक, व्यवहारिक, ध्यान-उन्मुख, सामाजिक, मानवीय और एक अच्छी तरह से योग्य / आध्यात्मिक व्यक्ति के कई अन्य गुण भी प्राप्त होते हैं। वह एकल, अत्यधिक मजबूत और लगातार मन में बनी हुई कुंडलिनी-छवि अधिकांश मामलों में आत्मज्ञान के लिए अत्यावश्यक है। चित्र-विचित्र रोशनियों, ध्वनियों या अन्य अजीबोगरीब वस्तुओं को कुण्डलिनी-छवि के रूप में अनुभव करने से मानसिक ऊर्जा इधर-उधर बिखर जाती है, और उपरोक्त एकल प्रकार की कुंडलिनी छवि पर फोकस / केन्द्रित नहीं हो पाती है, जिससे कुंडलिनी-शक्ति कम हो जाती है। साथ में, उन अजीब व मनुष्याकृति-रहित अनुभवों से मानवीय गुणों का भी कम ही विकास हो पाता है।

एक कुंडलिनी-जागरण के बाद परिवर्तन / आत्मरूपांतरण

सामान्य सांसारिक आयाम (कुंडलिनी की निद्रावस्था) में, एक व्यक्ति का स्वयं का अधिकांश भाग (आत्मा) अनुपस्थित रूप (अभाव रूप) में होता है, जिससे वह अपना आत्मा पूरी तरह से अंधेरे जैसा दिखाई देता है। लेकिन जब कुंडलिनी वास्तविक की जागृति-प्रक्रिया के तहत कुछ सेकंड (क्षणों) तक के लिए होती है, तो उस सीमित समय के दौरान, कुंडलिनी-छवि उस ध्यानकर्ता के अपने स्वयं (अपनी आत्मा) के साथ पूरी तरह से एकजुट हो जाती है। उस समय, ऊपर वर्णित-अनुसार स्वयं की सामान्य रूप से अनुभव की जाने वाली उदासीन और अंधेरी स्थिति के विपरीत, अपने आप में एक महान आनंद और चमक दिखाई देती है। चूंकि उस आनंद / चमक की कभी भी सांसारिक या कामुक आनंद / चमक से तुलना नहीं की जा सकती है, इसलिए सहजता या स्वाभाविक प्रकृति उस ध्यानकर्ता के मस्तिष्क को बाहरी स्रोतों में उस आनंद / चमक की खोज करने को कम करने के लिए निर्देशित करती है, ताकि वह अपने स्वयं के न्यूरोनल सर्किट (मस्तिष्कीय संवेदना-परिपथ) विकसित कर सके, ताकि कुंडलिनी-छवि हमेशा उसके मस्तिष्क में व्यक्त रहे। इस तरह, लगातार अपने स्वयं के मस्तिष्क के अंदर विद्यमान कुंडलिनी छवि, उसे समाधि (कुंडलिनी-जागृति) के उस सुपर (परम) आनंद के स्मरण सहित निरंतर आनंद का अनुभव कराती है। परिवर्तन (आत्मरूपांतरण) प्रक्रिया के दौरान, प्रेमयोगी वज्र का सांस लेने के लिए प्रयास ऊंचा उठा रहता था, वह खुद को पर्याप्त थका हुआ / नींद में महसूस कर रहा था, और उसकी कुंडलिनी छवि उसके मस्तिष्क में अनुभव रूप से बढ़ रही थी, मुख्य रूप से उसकी अपनी सांसारिक गतिविधियों के समय।

कुंडलिनी जागरण या निरंतर समाधि के बाद (पढ़ें ईपुस्तक, कुण्डलिनी रहस्योद्घाटित- प्रेमयोगी वज्र क्या कहता है) आत्मज्ञान तक

कुंडलिनी छवि पर सभी भौतिक और मानसिक दुनिया स्वचालित रूप से आरोपित हो जाती हैं। इस चरण को सम्प्रज्ञात समाधि भी कहा जाता है। सम्प्रज्ञात का अर्थ "समान रूप से और सही ढंग से जाना गया" होता है (संस्कृत शब्द, सम-समान रूप से, और प्रज्ञात-ठीक से जाना गया)। इसका मतलब है कि इस चरण में गहन अद्वैत और आनंद होता है। यह स्तर अलग-अलग समय अवधि के लिए बन सकता है। प्रेमयोगी वज्र में, यह स्तर लगभग 2 वर्षों तक चलाता रहा। उसके बाद कुंडलिनी छवि के एक निश्चित सीमा-स्तर तक पहुंचने / पकने के बाद, अंततः उसका रिग्रेशन / पतन होता है। कुंडलिनी छवि के पतन के साथ, कुण्डलिनी पर आरोपित दुनिया भी आभासिक रूप से पतित हो जाती है। अंततः इसके कारण, आनंददायक शून्य ही अनुभव किया जाता है (नोट- <u>इस अवस्था में अवसाद भी हो सकता है, यदि उससे अच्छी तराह से न निपटा जाए- पढ़ें उपरोक्त ईपुस्तक</u>)। इस चरण को असम्प्रज्ञात समाधि के रूप में भी जाना जाता है, क्योंकि इसमें कुंडलिनी की अनुपस्थिति के कारण कुछ भी समान रूप से और गहराई से ज्ञात नहीं होता है। इसमें अज्ञात स्रोत से समाधि का गहन आनंद होने के कारण, इस चरण को भी समाधि ही कहा जाता है। योगी को समर्थन देने और उसे और ऊपर उठाने के लिए, सहजता / प्रकृति द्वारा प्रदत्त आत्मज्ञान योगी द्वारा अचानक या आश्चर्यजनक रूप से अनुभव किया जाता है (जैसे कि किसी की नींद में आत्मज्ञान की बहुत छोटी सी झलक भी उत्पन्न हो सकती है, खासकर अगर कोई व्यक्ति स्वयं के पर्याप्त अपरिपक्व या गैर-सांसारिक होने के कारण,

उसके पूर्ण रूप को सहने में सक्षम नहीं है, जैसा कि प्रेमयोगी वज्र के मामले में हुआ था)। यही तभी होता है, जब कोई व्यक्ति अपने गुरु की कृपा और / या अनुकूल प्रकृति / पर्यावरण की सहायता से अपने आत्मज्ञान तक इस अंतिम चरण को पूरी तरह से सहन कर लेता है, और योग से स्वतःप्राप्त सभी साधारण शक्तियों / जादुई शक्तियों / सिद्धियों को सिरे से नकार देता है।

साथ में, जो कुंडलिनी नियमित रूप से कुंडलिनी योग-ध्यान के माध्यम से या प्राकृतिक / तांत्रिक प्रेम से निरंतर रूप से मन में रखी जाती है, वह जीवन / चेतना का मुख्य स्रोत बन जाती है। उससे नियमित रूप की सांसारिक गतिविधियों को मन के द्वारा साइड बिजनेस के रूप में माना जाता है, मुख्य व्यवसाय के रूप में नहीं। इस कारण दुनिया की ओर अद्वैत व अनासक्ति स्वयँ ही उत्पादित हो जाती है।

कुंडलिनी-उत्थान के बाद सुपर पावर / दिव्य शक्तियां

प्रकृति कभी भी किसी भी व्यक्ति को कुंडलिनी ऊर्जा के लिए सहायक सिंक / मामूली सिंक / सहायक अवशोषक के रूप में जानी जाने वाली सुपर शक्तियों को प्रदान नहीं करना चाहती है, जैसा करना उस परमज्ञान / आत्मज्ञान को अनुभव करने से रोकता है; जो मानसिक कुंडलिनी ऊर्जा की विशाल मात्रा के लिए एक सबसे बड़े, अंतिम और मुक्तिकारी सिंक / अवशोषक के रूप में कार्य करता है। इस संबंध में, प्रेमयोगी वज्र अपने स्वयं के अनुभवों का वर्णन अपने शब्दों में निम्नलिखित प्रकार से करते हैं-

मैं हमेशा आश्चर्यचकित हूं कि कुछ लोगों को एक बार के लिए भी सुपर शक्तियां कैसे मिलती हैं (पढ़ें उपरोक्त ईपुस्तक), क्योंकि मैंने खुद को अपने झलकमात्र आत्मज्ञान के बाद एक तरह से भगवान की तरह महसूस किया, और ऐसा लगा जैसे कि मैं हर तरह से पूरी तरह से संतुष्ट हो गया था। उस समय, मुझे सुपर शक्तियों की तत्काल आवश्यकता थी, लेकिन भगवान ने मुझे उनको प्रदान नहीं किया। इससे मुझे लगता है जैसे कि भगवान सुपर शक्तियों की पेशकश नहीं करता है, बल्कि अन्य सभी उपलब्ध शक्तियों को छीनने का भी प्रयास करता है, वह इसलिए क्योंकि सभी विशेष उपलब्धियां आत्मज्ञान को पर्याप्त गंभीर रूप से रोकती हैं। आत्मज्ञान एक सबसे बड़े मानसिक ऊर्जा के सिंक के रूप में कार्य करता है। मेरे मनमंदिर में मेरी तांत्रिक देवीरानी की एक सतत छवि के रूप में मेरी मानसिक ऊर्जा, मेरी झलक-प्रबुद्धता /आत्मज्ञान के बाद पर्याप्त क्षीण हो गई थी, हालांकि वह क्षणिक आत्मज्ञान पूरी तरह से उस मानसिक ऊर्जा को अवशोषित करने के लिए पर्याप्त मजबूत नहीं था। उसासे वह ऊर्जा मेरे सांसारिक जीवन के माध्यम से धीरे-धीरे बढ़ती जा रही थी, जैसे कि नदी विभिन्न इलाकों को पार करते हुए बढ़ती जाती है। अंत में मेरे द्वारा बर्दाश्त से बाहर होने पर, मेरे द्वारा वह संचित मानसिक ऊर्जा एकल-वाक्यांश शविद के रूप में, दुनिया को लाभान्वित करने वाले शब्दों के रूप में स्वतः ही वैसे ही उत्सर्जित हो गई, जैसे कि पूरी तरह से लोड / जलभारपूर्ण नदी खुद को महान समुद्र में उत्सर्जित / भारविहीन करती है। वह वाक्यांश बाद में मेरे लिए सच साबित होता हुआ प्रतीत हुआ। असल में, कभी-कभी भगवान / प्रकृति एक प्रबुद्ध व्यक्ति के शब्दों के माध्यम से अपनी सांसारिक इच्छाओं को पूरा करते हैं। हो सकता था कि यदि मैंने उस ऊर्जा को उस तरह से उत्सर्जित नहीं किया होता, तो वो मेरी सुपर पावर के रूप में अभिव्यक्त होने के लिए जमा हो जाती। यह भी हो सकता था कि मेरी मानसिक ऊर्जा मेरे दूसरे और पूर्ण आत्मज्ञान के रूप में रिलीज / उत्सर्जित होने के लिए होती रहती। यह केवल एक ऊर्जा-खेल है। कुछ भी मुफ्त में नहीं आता है। परिस्थिति के अनुसार इन उपर्युक्त परिणामों में से किसी के रूप में भी अभिव्यक्ति प्राप्त करने के लिए ऊर्जा को बूंद-2 करके इकट्ठा करना पड़ता है।

अगली बार, दैव के द्वारा मेरे तांत्रिक मास्टर की एक सतत छवि के रूप में मेरी संचित मानसिक ऊर्जा को कुंडलिनी जागृति के रूप में उत्सर्जित किया गया था। अभी मैं उस ऊर्जा को स्वचालित रूप से और तेजी से जमा कर रहा हूं। अब मेरे पास किसी भी तरह की सुपर पावर के रूप में मेरी संचित ऊर्जा को मुक्त करने के प्रति मेरे झुकाव के कई अवसर सामने आ सकते हैं, लेकिन अंतिम ऊर्जा-अवशोषक रूपी आत्मज्ञान तक पहुंचने के लिए, मेरे द्वारा उन अवसरों का सावधानीपूर्वक प्रतिरोध करना अत्यावश्यक है। असल में, कोई व्यक्ति उस अंतिम ऊर्जा सिंक तक तभी पहुंचता है, जब वह किसी भी सांसारिक लाभ के लिए अपनी ऊर्जा को मुक्त करने के लिए सांसारिक प्रलोभनों का विरोध करता है, परन्तु इसके परिणामस्वरूप, संचित मानसिक ऊर्जा आगे से आगे बढ़ती हुई, सहन करने के लिए बहुत बड़ी हो जाती है। हालांकि, आध्यात्मिक गुरु / गुरु / गाइड (पथप्रदर्शक) / मित्र की अच्छी कंपनी / संगति के बिना उसे हासिल करना बहुत मुश्किल है।

अपने आत्मज्ञान के बारे में दूसरों को बताया जाना चाहिए या नहीं

कुछ लोग कहते हैं कि अपने अहंकार को बढ़ने से रोकने के लिए अपनी कुंडलिनी-जागृति या अपना आत्मज्ञान दूसरों के लिए बहुत जल्दी नहीं बताया जाना चाहिए। लेकिन मुझे लगता है कि बोधिसत्व प्रकार के लोग अपने बारे में कम ख्याल रखते हैं, और दूसरों को आध्यात्मिक रूप से लाभान्वित करते रहते हैं। इसके अलावा, उपहार में दिया गया ज्ञान एक अर्जित ज्ञान ही है। प्रेमयोगी वज्र के साथ भी यही हुआ था। जब उन्होंने अपने आत्मज्ञान के बारे में ऑनलाइन घोषित किया (पढ़ें उपरोक्त ईपुस्तक), तो उन्हें बदले में अपने लिए कुंडलिनी-जागृति मिली, जैसे कि वह एक इनाम हो। कुछ छिपाने से किसी के लिए कुछ खास अच्छा नहीं होता है, बल्कि उससे ऐसा करने वाले की छवि केवल एक ऐसे आतंकवादी या गुंडा प्रकार की बनती है, जो अक्सर कुछ महत्वपूर्ण चीजों / सूचनाओं को छुपाता है, और हमेशा किसी को नुकसान पहुंचाने के या कुछ छीनने के सही अवसर की तलाश में रहता है। निश्चित रूप से इसे सड़कों पर या किसी के अपने जीवन सर्कल / सम्बंधित जीवनक्षेत्र में घोषित नहीं किया जाना चाहिए, ताकि दूसरों की हंसी और ईर्ष्या से संभावित प्रभावों से बचा जा सके; इसके बजाय इसे अच्छी तरह से मान्यता प्राप्त सोशल मीडिया जैसे कि क्वोरा, अन्य प्रसिद्ध / आध्यात्मिक वेबसाइटों / ब्लॉग इत्यादि पर ही घोषित किया जाना चाहिए। साथ में छद्म नाम के पक्ष में अप्रत्यक्ष रूप से आध्यात्मिक उपलब्धि को बताने की कोशिश की जानी चाहिए, ताकि करीबी सर्कल के लोग भी वास्तविकता को समझ सकें, और साथ ही जागृत व्यक्ति का अहंकार भी बहुत विकसित न हो सके। हालांकि, जागृत व्यक्ति को अहंकार जागृत होने से ज्यादा नुकसान नहीं पहुंचता है। उसके अहंकार का उसकी कुंडलिनी के साथ विलय हो चूका होता है, इसलिए उसका बढ़ता अहंकार / मैं, उसके बढ़ने के रूप में कुछ और नहीं बल्कि उसकी बढ़ती कुंडलिनी ही है। असल में, यह जागृत होने का केवल आभासी / झूठा अहंकार है, जो संपर्क में स्थित लोगों द्वारा प्रतिबिंबित होता है, और उनके द्वारा सत्य रूप में अनुभव किया जाता है। यही कारण है कि जागृत व्यक्ति के लिए भी अहंकार को धारण करने से मना किया जाता है। जागृत होने के कारण व्यक्ति को एक जागरूक सामाजिक आचरण का पालन करना पड़ता है, क्योंकि वह उन कई लोगों के लिए अनुसरणीय होता है, जो जाने या अनजाने में उसके आचरण का पालन करते रहते हैं।

क्या कुंडलिनी-मशीन कभी संभव है

हाँ,यह शायद सबसे अधिक संभावित है। कुंडलिनी घटना एक शुद्ध मानसिक विज्ञान है, जिसके अंदर कुछ भी रहस्यमय नहीं है। वैज्ञानिक रूप से, कुंडलिनी-जागृति कुछ खास नहीं है, लेकिन संभवतः उन न्यूरोकेमिकल्स की अचानक एक ही केंद्रित छवि की ओर अचानक दौड़ होती है, जो आम तौर पर पूरे मस्तिष्क के अंदर बिखरे हुए होते हैं। वह तंत्रिकावैज्ञानिक प्रक्रिया आंखों के सामने एक दृश्यमान भौतिक इकाई की तरह ही उस छवि को जीवंत बना देती है। यही कारण है कि इस जागृति प्रक्रिया को तीसरी आंख के उद्घाटन के रूप में भी जाना जाता है। यदि वर्तमान में कुल वैज्ञानिक बजट का 1% भी कुंडलिनी-शोध में लगा दिया जाता है, तो कुंडलिनी-मशीन वास्तविक सपने के रूप में दिखाई देती है।

सोशल मीडिया-प्लेटफार्म से विकास

प्रेमयोगी वज्र ने अपनी कुंडलिनी को एक मूल (गैर-संपादित) रूप में, निम्नलिखित चर्चा के अंत में जागृत किया, जो पूरे वर्ष 2016-18 (26-10-2016 से 08-05-2018) में ब्रिलियानो कुंडलिनी-रिसर्च /खोजबीन के ऑनलाइन मंच पर चला था, लगभग डेढ़ साल। इसलिए, इस चर्चा में सूक्ष्म शक्ति छिपी हो सकती है। इस वास्तविक समय चर्चा का वर्णन इसी वेबसाईट के "Love story of a Yogi / एक योगी की प्रेम कहानी" में किया गया है। उनके साऊल मेट / जीवन साथी, लेखक / सह-लेखक ने क्वोरा- 2018 से अपने कई आध्यात्मिक उत्तरों को शामिल किया है, जिसके लिए उन्हें "Top Writer 2018 / शीर्ष लेखक 2018 के रूप में भी सम्मानित किया गया है। इस स्थापित उपलेखक ने कई प्लेटफार्मों पर उस गुप्तताकाँक्षी रहस्यमयी व्यक्ति के रहस्यवाद से संबंधित अनुभवों और विचारों को लिखने में बहुत मदद की है।

दोस्तो, व्यक्तिगत रूप से इकट्ठा होने और आध्यात्मिक विचारों को विकसित करने के लिए एक आध्यात्मिक कंपनी / समूह बनाने की परंपरा पुरानी थी। आज एक आधुनिक और बहुत व्यस्त युग है, जहां ऑनलाइन सोशल मीडिया ने मानसिक उपस्थिति के साथ भौतिक उपस्थिति की मजबूरी को लगभग समाप्त ही कर दिया है, चाहे जो भी काम / व्यवसाय हो, और चाहे भौतिक हो या आध्यात्मिक हो। यह आज का चमत्कार है कि पहले से प्रचलित भौतिक संगति की तुलना में ऑनलाइन बातचीत के साथ आध्यात्मिक रूप से बेहतर विकास हो सकता है। इसका जीवंत उदाहरण प्रेमयोगी वज्र है। उन्होंने अपनी कुंडलिनी को डेढ़ सालों तक ऑनलाइन आध्यात्मिक वार्तालाप के माध्यम से जागृत किया, जिसे मेरे दूसरे लॉन्गरीड / वृहदपठन / लम्बे लेख, "Love story of a Yogi / एक योगी की प्रेम कहानी" में

मूल रूप में लिखा गया है। कोई भी उस पूरे लेख को एक सांस में भी पढ़ सकता है, लेकिन शायद वह केवल तभी सर्वोत्तम काम करता है, अगर उसे लंबे समय तक छोटी किस्तों में नियमित रूप से परस्पर बातचीत (comments / टिप्पणियों, likes / पसंद आदि के साथ) के साथ नियमित रूप से पढ़ा जाता है, और साथ में अन्य नियमित आध्यात्मिक प्रयासों (ई-किताबों के अध्ययन इत्यादि) को भी यदि इच्छा के मुताबिक किया जाता रहे, जैसा कि प्रेमयोगी वज्र ने किया था। यदि आध्यात्मिक दृष्टिकोण को ऑनलाइन रूप के छोटे और नियमित आध्यात्मिक एक्सपोजरों के साथ लंबे समय तक बना कर रखा जाता है, तो यह आश्चर्यजनक परिणाम उत्पन्न करता है, जैसा कि प्रेमयोगी वज्र के मामले में स्पष्ट है।

कोई सिंगल बुक / अकेली पुस्तक सम्पूर्ण नहीं है

प्रेमयोगी वज्र ने कई कुंडलिनी से संबंधित किताबें / ई-किताबें पढ़ीं, जिससे उन्हें पता चला कि इस संबंध में कोई भी पुस्तक पूरी नहीं है, इसके बजाय कुंडलिनी योग के आत्म-अभ्यास के साथ-साथ विभिन्न पुस्तकों से एकत्रित किए गए मुख्य बिंदु ही अधिक गुणवत्ता से काम करते हैं। उन्होंने इन सभी कुण्डलिनी-जागरण के कारकों को इस व्यापक ई-बुक के कच्चे माल के रूप में एक साथ एकत्रित किया, और इन सभी उपरोक्त प्रथाओं / कारकों के माध्यम से उत्पन्न अपनी कुंडलिनी-जागृति (वास्तव में उस जागृति से प्राप्त शक्ति के माध्यम से) के तुरंत बाद उन्हें पुस्तक-रूप में संकलित किया। कई कारणों से कुंडलिनी के संबंध में अच्छी तरह से मान्यता प्राप्त शास्त्रों में भी महान गोपनीयता को रखा गया है। यहां तक कि कुंडलिनी को भी ठीक से परिभाषित नहीं किया गया है। इस अंतर को भरने के लिए, प्रेमयोगी वज्र ने कुंडलिनी को सबसे अच्छे व मान्यताप्राप्त तरीकों में से एक तरीके के माध्यम से रहस्योद्घाटित कर दिया है।

गुप्तता रखने के लिए सलाह

तंत्र एक गुप्त आध्यात्मिक विज्ञान है। यह खुले तौर पर प्रदर्शित किया गया है, क्योंकि आज खुली दुनिया है, और कुछ भी रहस्यमयी प्रतीत नहीं होता है। आज के लोग काफी परिपक्व, शिक्षित और बुद्धिमान हैं। इसलिए तंत्र के सम्बन्ध में गलतफहमी और गलत धारणाओं की बहुत कम संभावनाएं हैं। फिर भी सावधानी बरतनी चाहिए, और इसे यहाँ तक कि अप्रत्यक्ष रूप से भी या अजीब / मजाकिया तरीके से भी उनके सामने प्रकट करने की कोशिश नहीं की जानी चाहिए, जो इस से असहज महसूस कर सकते हैं। पूरी संभावना है कि वे इसे गलत समझेंगे, जिससे वे खुद को कम या ज्यादा रूप से नुकसान पहुंचा सकते हैं।

आत्मज्ञान (आत्म-साक्षात्कार) को हमेशा ध्यान की आवश्यकता नहीं होती है।

प्यार, प्यार, और केवल प्यार। प्रेम, कुंडलिनी जागरण और ज्ञानोदय सहित हर चीज का मूल सिद्धांत है। ध्यान के बिना ज्ञान भी संभव है, हालांकि यह जोरदार और निरंतर प्रकार की कड़ी मेहनत से भरी जीवन शैली की मांग करता है। यह शारीरिक और मानसिक होना चाहिए, दोनों एक साथ, जहां तक संभव हो बिना ब्रेक के। साथ में अद्वैतभाव भी होना चाहिए।

कन्फ्यूशियस के अनुसार, प्रत्येक हाथ के लिए काम लाना राजा या राज्य का कर्तव्य है। वास्तव में बहुत से लोग अच्छा काम कर सकते हैं। हालाँकि, नीतियों की कमी के कारण इतने लोगों को काम उपलब्ध नहीं हो पाता है। हालाँकि, केवल नीतियों को पूरी तरह से दोष नहीं दिया जा सकता है। काम तो काम है। यह कभी भी बड़ा या छोटा नहीं हो सकता। यहां तक कि छोटे काम भी चमत्कार पैदा कर सकते हैं, अगर इनका अभ्यास सही प्रकार के अद्वैतपूर्ण रवैये के साथ किया जाए। दूसरी ओर, अद्वैतमय रवैये के बिना बड़े व्यवसाय भी विफल हो सकते हैं। यहां तक कि बहुत सारे छोटे-मोटे काम भी जैसे खाना पकाना, घर की सफाई, किचन गार्डनिंग, लेबर वर्क आदि को किसी नीतिगत निर्णय की आवश्यकता नहीं होती है। इन्हें केवल मानवीय इच्छा की आवश्यकता है।

कन्फ्यूशियस का कहना है कि नई जीवनशैली या नया दर्शन मानवीय जीवन शैली / दर्शन से अलग नहीं होना चाहिए। इसके बजाय, यह उसकी पुरानी / पैतृक परंपरा के आधार पर होना चाहिए। यह एक प्रेम पूर्ण समाज के महत्व पर भी प्रकाश डालता है। केवल इस प्रकार का समाज ही अपने पूर्वजों के साथ प्रेमपूर्ण संबंध बनाता है। तभी एक मनुष्य उन्हें प्रभावी ढंग से याद करने और उनके खुशी से गुजरने के बाद उनके नक्शेकदम पर चलने में सक्षम हो जाता है। यह प्रक्रिया उसके मन के अंदर उनमें से कम से कम एक पूर्वज की छवि को मजबूत करने में मदद करती है, जो कि उसकी कुंडलिनी बन जाती है।

उपरोक्त प्रेमपूर्ण जीवन शैली (आंतरिक वेबपोस्ट) के कारण, किसी की कुंडलिनी बिना किसी ध्यान की आवश्यकता के बिना बाईपास मार्ग (सांसारिक मार्ग) के माध्यम से उत्तरोत्तर और सहज रूप से बढ़ती है। साथ में, यह तरीका आवश्यक सुख-सुविधा के साथ सांसारिक विकास लाता है, वह भी अपनी तरफ से किसी भी क्रेविंग / छटपटाहट के बिना, अनायास, व आराम से।

यह कर्मयोग और तंत्र का रहस्य है। बहुत से लोग सोचते हैं कि कर्मयोग और / या तंत्र कुंडलिनी ध्यान से अलग हैं। कई लोग यह भी सोचते हैं कि कर्मयोग या तंत्र का अभ्यास करते समय कुंडलिनी शामिल नहीं है। उस प्रकार के लोग मामले को गहराई से नहीं जानते हैं। वास्तव में, इन दोनों प्रकार की अद्वैतमयी प्रथाओं में कुंडलिनी भी शामिल है, हालांकि अप्रत्यक्ष या अनजाने तरीके से। दरअसल, प्रत्येक मानवीय और आध्यात्मिक जीवन शैली (अनुष्ठान, संस्कृति, ध्यान, तकनीक, धर्म, कला, दर्शन) कुंडलिनी को प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से शामिल कर रही है। इसलिए, कुंडलिनी को मस्तिष्क में जलाने के लिए जो भी संभव हो, वे प्रयास करने चाहिए। सामाजिक रूप से यदि कहें, तो बचपन में कुंडलिनी को बनाए रखने का सबसे अच्छा तरीका है, बड़ों के प्रति आज्ञाकारिता और ईमानदारी। युवावस्था में, कुंडलिनी को अथक श्रम व व्यवसाय के माध्यम से विकसित करना बेहतर होता है। उन्नत आयु में, कुंडलिनी-योग को अपनाने की सलाह दी जाती है। वास्तव में, कुंडलिनी एक प्रकार का प्राकृतिक प्रेम है। इसे कृत्रिम भी बनाया जा सकता है, हालांकि बहुत प्रयासों के साथ। कुंडलिनी की वृद्धि या प्रेम की वृद्धि शायद ही कभी एक आकस्मिक घटना है। इसके लिए लंबे समय की जरूरत होती है। यहाँ तक कि बहुत से लोग अपना पूरा जीवन अपने प्यार या कुंडलिनी को जगाने में बिता देते हैं; तब भी उनमें से कई इसे जगाने में सक्षम नहीं हो पाते हैं। इसी तरह, ज्यादातर मामलों में कुंडलिनी या प्रेम की वृद्धि सामाजिक रूप से परस्पर क्रियात्मक है। इसके लिए बहुत से सांसारिक पारस्परिक संबंधों और अनुभवों की आवश्यकता होती है। ये अंतर्संबंध गुरु-शिष्य संबंधों, पिता-पुत्र संबंधों, दादा-पोते संबंधों, शिक्षक-छात्र संबंधों आदि के रूप में हो सकते हैं; इसी तरह अंतर-वर्ग संबंध, अंतरा-वर्ग संबंध, पति-पत्नी संबंध, यौनप्रेम संबंध, सामाजिक संबंध, पारिवारिक संबंध, रिश्तेदारों के साथ संबंध, उपभोक्ता-आपूर्तिकर्ता संबंध आदि ये सभी आपसी क्रिसक्रॉस / गुत्थमगुत्था संबंधों के सामाजिक जाल के रूप में मौजूद हैं। एक संयुक्त परिवार सबसे ज्यादा सकारात्मक सहभागिता का पक्षधर है। यद्यपि आध्यात्मिक विकास के उन्नत चरणों में, कुंडलिनी योग का गहराई से अभ्यास करने के लिए एकांत की आवश्यकता होती है। सकारात्मक संबंधों की अधिकतम संख्या होने से अपनी कुंडलिनी को लॉन्च करने और बढ़ाने के अधिकतम अवसर मिलते हैं। यह एक सहकारी समाज के महत्व पर प्रकाश डालता है; जो प्यार, उचित और मुस्कुराते हुए व्यवहार, सहानुभूति, और सम्मान से भरा है। इस प्रकार के समाज में, कम से कम किसी एक प्रेमी मानव के रूप की छवि समाज-निवासियों के दिमाग में ठीक से संलग्न हो जाती है, जो उनकी कुंडलिनी है। यह

कुंडलिनी का अंतिम व शीर्षतम रहस्योद्घाटन है। यह प्राचीन भारतीय प्रणाली की वास्तविक महिमा है। यह प्राचीन भारतीय प्रणाली का वास्तविक और शुद्ध अध्यात्मवाद है। जो समाज घृणा से भरा है, उसके अंदर अपनी कुंडलिनी (प्रेम के पर्यायवाची) के बढ़ने की कल्पना भी कैसे की जा सकती है?

प्रेमयोगी वज्र ने अपनी कुंडलिनी की परिपक्वता को ध्यान के माध्यम से, और साथ ही बिना ध्यान के माध्यम से भी प्राप्त किया। यह ऊपर बताया गया है। यहां तक कि उसने इसे दोनों के मिश्रण के माध्यम से भी प्राप्त किया, अर्थात् उसने कर्म योग सहित प्रेम-पूर्ण संबंधों के माध्यम से अपनी प्रारंभिक परिपक्वता प्राप्त की, और फिर तांत्रिक कुंडलिनी योग के माध्यम से अपनी कुंडलिनी को बाद में अंतिम धक्का दिया। यह उपर्युक्त विवरण केवल एक सिद्धांत नहीं है, बल्कि यह उन सभी चीजों या अनुभवों का एक सार है, जिनका सामना प्रमोगी वज्र ने अपने जीवन में किया था।

कुंडलिनी शक्ति गाड़ी है, तो संस्कार उसको दिशानिर्देश देने वाला ड्राइवर~द कश्मीर फाइल्स फिल्म का मनोवैज्ञानिक विश्लेषण

दोस्तों, इस हफ्ते मैंने बड़े पर्दे पर 'द कश्मीर फाइल्स' फिल्म देखी। यह पहली फ़िल्म देखी जो कि सच्ची घटनाओं पर हूबहू आधारित है। ज्यादातर ऐसी ही फिल्में बननी चाहिए, ताकि मनोरंजन के साथसाथ सामाजिक उत्थान भी हो सके। यह फ़िल्म सभी को देखनी चाहिए। इस फ़िल्म में धार्मिक कट्टरवाद और जेहादी बर्बरता का जीवंत चित्रण किया गया है। साथ में, मैं मेडिटेशन के लिए एक झील के पास भी गया। वैसे मैं रोजमर्रा के तनाव व उससे उत्पन्न थकान को दूर करने के लिए गया था, मेडिटेशन तो खुद ही हो गई। मैं पथरीली घास पर विभिन्न शारीरिक पोस्चरों या बनावटों के साथ लम्बे समय तक बैठे और लेटे रहकर झील को निहारता रहा। आती-जाती साँसों पर, उससे उत्पन्न शरीर की, मुख्यतः छाती व पेट की गति पर ध्यान देता रहा। मन के विचार आ-जा रहे थे। विविध भावनाएं उमड़ रही थीं, और विलीन हो रही थीं। मैं उन्हें साक्षीभाव से निहार रहा था, क्योंकि मेरा ध्यान तो साँसों के ऊपर भी बंटा हुआ था, और आसपास के अद्भुत कुदरती नजारों पर भी। सफेद पक्षी झील के ऊपर उड़ रहे थे। बीच-बीच में वे पानी की सतह पर जरा सी डुबकी लगाते, और कुछ चोंच से उठाकर उड़ जाते। सम्भवतः वे छोटी मछलियां थीं। बड़ी मछली के साथ कई बार कोई पक्षी असंतुलित जैसा होकर कलाबाजी सी भी दिखाता। एकबार तो एक पक्षी की चोंच से मछली नीचे गिर गई। वह तेजी से उसका पीछा करते हुए दुबारा से उसे पानी में से पकड़कर ऊपर ले आया और दूर उड़ गया। विद्वानों ने सच ही कहा है कि जीवो जीवस्य भोजनम। एक छोटी सी काली चिड़िया नजदीक ही पेड़ पर बैठ कर मीठी जुबान में चहक रही थी, और इधर-उधर व मेरी तरफ देखते हुए फुदक रही थी, जैसे कि मेरे स्वागत में कुछ सुना रही हो। मुझे उसमें अपनी कुंडलिनी एक घनिष्ठ मित्र की तरह नजर आई। मुझे आश्चर्य हुआ कि इतने छोटे जीव भी किस तरह जीवन और प्रकृति के प्रति आशान्वित और सकारात्मक होते हैं। वे भी अपनी जीवनयात्रा पर बेधड़क होके चले होते हैं। झील के पानी की तट से टकराने की हल्की आवाज को मैं अपने अंदर, अपनी आत्मा के अंदर महसूस करने लगा। चलो कुछ तो आत्मा की झलक याद आई। आजकल ऐसे प्राकृतिक स्थानों की भरमार है, जहाँ लोगों की भीड़ उमड़ी होती है। पर ऐसे निर्जन हालांकि सुंदर प्राकृतिक स्थल कम ही मिलते हैं। कई दूरदराज के लोग जब ऐसी जगहों को पहली बार देखते हैं, तो भावविभोर हो जाते हैं। कई तो शांति का भरपूर लुत्फ उठाने के लिए वहाँ टैंट लगा कर दिन-रात लगातार कई दिनों तक रहना चाहते हैं। हालांकि मैं तो थोड़ी ही देर में शांत, तनावमुक्त और स्वस्थ हो गया, जिससे डॉक्टर से अपॉइंटमेंट लेने का विचार ही छोड़ दिया। खैर मैं फिल्म द कश्मीर फाइल्स के बारे में बात कर रहा था। इसका एक सीन जो मुझे सबसे ज्यादा भावनात्मक लगा, वह है पुष्कर बने अनुपम खेर का दिल्ली की गर्मी में कश्मीर की बर्फ की ठंड महसूस करना। वह अपने पोते को हकीकत बता रहा होता है कि कैसे आजादी के नारे लगाते हुए जेहादी भीड़ ने उन्हें मारा और भगाया था, इसलिए उसे ऐसे लोगों के नारों के बहकावे में नहीं आना चाहिए। वह बूढ़ा होने के कारण उसे समझाते हुए थक जाता है, जिससे वह कांपने लगता है। काँपते हुए वह चारों तरफ नजर घुमाते हुए कश्मीरी भाषा में बड़ी भावपूर्ण आवाज में कहता है कि लगता है कि बारामुला में बर्फ पड़ गई है, अनन्तनाग में बर्फ पड़ गई है, आदि कुछ और ऊंची पहाड़ियों का नाम लेता है। फिर उसका पोता उसे प्यार व सहानुभूति के साथ गले लगाकर उसे स्थिर करता है। गहरे मनोभावों को व्यक्त करने का यह तरीका मुझे बहुत अच्छा लगा। कश्मीरी भाषा वैसे भी बहुत सुंदर, प्यारी और भावपूर्ण भाषा है। इस फ़िल्म के बारे में समीक्षाएं, चर्चाएं और लेख तो हर जगह विस्तार से मिल जाएंगे, क्योंकि आजकल हर जगह इसीका बोलबाला है। मैं तो इससे जुड़े हुए आधारभूत मनोवैज्ञानिक सिद्धांत पर प्रकाश डालूंगा। हम हर बार की तरह इस पोस्ट में भी स्पष्ट करना चाहेंगे कि हम न तो किसी धर्म के विरोधी हैं, और न ही पक्षधर हैं। हम असली धर्मनिरपेक्ष हैं। हम सत्य व मानवता ढूंढते हैं, चाहे कहीं भी मिल जाए। सत्य पर चलने वाला बेशक शुरु में कुछ दिक्कत महसूस करे, पर अंत में जीत उसीकी होती है। हम तो धर्म के मूल में छिपे हुए कुंडलिनी रूपी मनोवैज्ञानिक तत्त्व का अन्वेषण करते हैं। इसीसे जुड़ा एक प्रमुख तत्त्व है, संस्कार।

हिंदु दर्शन के सोलह संस्कार

दोस्तों, हम हिंदु धर्म के बजाय हिंदु दर्शन बोलना पसन्द करेंगे, क्योंकि यह एक आध्यात्मिक मनोविज्ञान लगता है मुझे। दर्शन भी एक मनोविज्ञान या विज्ञान ही लगता है मुझे। इसके सोलह संस्कार आदमी के जन्म लेते ही शुरु हो जाते हैं, और मरते दम तक होते रहते हैं। मृत्यु भी एक संस्कार है, अंतिम संस्कार। हरेक संस्कार के समय कुछ आध्यात्मिक क्रियाएँ की जाती हैं। ये इस तरह से बनाई गई होती हैं कि ये अवचेतन मन पर अपना अधिक से अधिक प्रभाव छोड़े। इससे अवचेतन मन पर संस्कार का आरोपण हो जाता है, जैसे खेत में बीज का रोपण होता है। जैसे समय के साथ जमीन के नीचे से बीज अंकुरित होकर पौधा बन जाता है, उसी तरह कुंडलिनी रूपी अध्यात्म का संस्कार भी

अवचेतन मन की गहराई से बाहर निकल कर कुंडलिनी क्रियाशीलता और कुंडलिनी जागरण के रूप में उभर कर सामने आता है। दरअसल संस्कार कुंडलिनी के रूप में ही बनता है। कुंडलिनी ही वह बीज है, जिसे संस्कार समारोह के माध्यम से अवचेतन मन में प्रविष्ट करा दिया जाता है। इस प्रकार, संस्कार समारोह की अच्छी मानवीय शिक्षाएँ भी कुंडलिनी के साथ अवचेतन मन में प्रविष्ट हो जाती हैं, क्योंकि ये इसके साथ जुड़ जाती हैं। इस प्रकार कुंडलिनी और मानव शिक्षाओं का मिश्रण वास्तव में संस्कार है। कुंडलिनी वाहक है, और मानव शिक्षाएं वाह्य हैं अर्थात उनको ले जाया जाता है। समय के साथ दोनों साथ-साथ बढ़ते हैं, और कुण्डलिनी जागरण और मानव समाज की मानवता को एक साथ संभव बनाते हैं। ये संस्कार समारोह मनुष्य की उस जीवन-अवस्था में किए जाते हैं, जिस समय वह बेहद संवेदनशील हो, और उसके अवचेतन मन में संस्कार-बीज आसानी से और पक्की तरह से बैठ जाएं। उदाहरण के लिए विवाह संस्कार। मुझे लगता है कि यह सबसे बड़ा संस्कार होता है, क्योंकि अपने विवाह के समय आदमी सर्वाधिक संवेदनशील होता है। इसी तरह जन्म-संस्कार भी बहुत प्रभावी होता है, क्योंकि अपने जन्म के समय आदमी अंधेरे की गहराइयों से पहली बार प्रकाश में आया होता है, इसलिए वह बेहद संवेदनशील होता है। उपनयन संस्कार आदमी की किशोरावस्था में उस समय किया जाता है, जिस समय उसके यौन हारमोनों के कारण उसका रूपांतरण हो रहा होता है। इसलिए आदमी की यह अवस्था भी बेहद संवेदनशील होती है। संस्कार समारोह अधिकांशतः आदमी की उस अवस्था में किए जाने का प्रावधान है, जब उसमें यौन ऊर्जा का माहौल ज्यादा हो, क्योंकि वही कुंडलिनी को शक्ति देती है। जन्म के संस्कार के समय माँ-बाप की यौन ऊर्जा का सहारा होता है। 'जागृति की इच्छा' रूप वाला छोटा सा संस्कार भी कालांतर में आदमी को कुंडलिनी जागरण दिला सकता है, क्योंकि बीज की तरह संस्कार समय के साथ बढ़ता रहता है। इसीको गीता में इस श्लोक से निरूपित किया गया है, "स्वल्पमप्यस्य धर्मस्य त्रायते महतो भयात", अर्थात इस धर्म का थोड़ा सा अनुष्ठान भी महान भय से रक्षा करता है। कुंडलिनी योग के संस्कार को ही यहाँ 'इस धर्म का थोड़ा सा अनुष्ठान' कहा गया है।

कुंडलिनी संस्कारों के वाहक के रूप में काम करती है

संस्कार समारोह के समय विभिन्न आध्यात्मिक प्रक्रियाओं से अद्वैत का वातावरण पैदा किया जाता है। अद्वैत के बल से मन में कुंडलिनी मजबूत होने लगती है। उस कुंडलिनी की मूलाधार-वासिनी शक्ति से दिमाग बहुत संवेदनशील और ग्रहणशील अर्थात रिसेप्टिव बन जाता है। ऐसे में जो भी शिक्षा दी जाती है वह मन में अच्छी तरह से बैठ जाती है, और यहाँ तक कि अवचेतन मन तक दर्ज हो जाती है। कुंडलिनी से मन आनन्द से भी भर जाता है। इसलिए जब भी आदमी आनन्दित होता रहता है, तब -तब कुंडलिनी भी उसके मन में आती रहती है, और पुराने समय में उससे जुड़ी शिक्षाएं भी। इस तरह वे शिक्षाएं मजबूत होती रहती हैं। आनंद और कुंडलिनी साथसाथ रहते हैं। दोनों को ही मूलाधार से शक्ति मिलती है। आनन्द की तरफ भागना तो जीवमात्र का स्वभाव ही है।

शक्ति के साथ अच्छे संस्कार भी जरूरी हैं

शक्ति रूपी गाड़ी को दिशा निर्देशन देने का काम संस्कार रूपी ड्राइवर करता है। हिन्दू धर्म में सहनशीलता, उदारता, अहिंसा आदि के गुण इसी वजह से हैं, क्योंकि इसमें इन्हीं गुणों को संस्कार के रूप में मन में बैठाया जाता है। जिस धर्म में लोगों को जन्म से ही यह सिखाया और प्रतिदिन पढ़ाया जाता है कि उनका धर्म ही एकमात्र धर्म है, उनका भगवान ही एकमात्र भगवान है, वे चाहे कितने ही बुरे काम कर लें, वे जन्नत ही जाएंगे, और अन्य धर्मों के लोग चाहे कितने ही अच्छे काम क्यों न कर लें, वे हमेशा नरक ही जाएंगे, और उनका धर्म स्वीकार न करने पर अन्य धर्म के लोगों को मौका मिलते ही बेरहमी से मार देना चाहिए, उनसे इसके इलावा और क्या अपेक्षा की जा सकती है। वे कुंडलिनी शक्ति का दुरुपयोग करते हैं, क्योंकि उनके मन में जमे हुए अमानवीय संस्कार उस शक्ति की सहायता से उन्हें गलत रास्ते पर धकेलते रहते हैं। इससे अच्छा तो कोई संस्कार मन में डाले ही न जाएं, अर्थात किसी धर्म को न माना जाए मानव धर्म को छोड़कर। जब मानव बने हैं, तो जाहिर है कि मानवता खुद ही पनपेगी। फिर खुद ही मानवीय संस्कार मन में उगने लगेंगे। बुद्ध कहते हैं कि यदि कांटे बोना बंद करोगे, तो फूल खुद ही उग आएंगे। कुंडलिनी शक्ति हमेशा अच्छाई की ओर ले जाती है। पर यदि ज़बरदस्ती ही, और कुंडलिनी के लाख प्रतिरोध के बाद भी यदि बारम्बार बुराइयां अंदर ठूंसी जाए, तो वह भी भला कब तक साथ निभा पाएगी। दोस्तो, सुगन्ध फैलाने वाले गेंदे के फूल के चारों ओर विविध बूटियों से भरा हुआ रंगबिरंगा जंगल उग आता है, जबकि लैंटाना या लाल फूलनू या फूल-लकड़ी जैसी जहरीली बूटी चारों तरफ बढ़ते हुए हरेक पेड़-पौधे का सफाया कर देती है, और अंत में खुद भी नष्ट हो जाती है। मैं शिवपुराण में पढ़ रहा था कि जो शिव का भक्त है, उसका हरेक गुनाह माफ हो जाता है। इसका मतलब है कि ऐसे कट्टर धर्म शिवतंत्रसे ही निकले हैं। तन्त्र में और इनमें बहुत सी समानताएं हैं। इन्हें अतिवादी तन्त्र भी कह सकते हैं। इससे जुड़ी एक कॉलेज टाइम की घटना मुझे याद आती है। एक अकेला कश्मीरी मुसलमान पूरे होस्टल में।

उसी से पूरा माहौल बिगड़ा जैसा लगता हुआ। जिसको मन में आया, पीट दिया। माँस-अंडों के लिए अंधा कुआँ। शराब-शबाब की रंगरलियां आम। कमरे में तलवारें छुपाई हुईं। पेट्रोल बम बनाने में एक्सपर्ट। एकबार सबके सामने उसने चुपके से अपनी अलमारी से निकालकर मेरे गर्दन पर तलवार रख दी। मैं उसकी तरफ देखकर हंसने लगा, क्योंकि मुझे लगा कि वो मजाक कर रहा था। वह भी मक्कारी की बनावटी हंसी हंसने लगा। फिर उसने तलवार हटा कर रख दी। मेरे एक प्रत्यक्षदर्शी दोस्त ने बाद में मुझसे कहा कि मुझे हंसना नहीं चाहिए था, क्योंकि वह एक सीरियस मेटर था। मुझे कभी इसका मतलब समझ नहीं आया। हाँ, मैं उस दौरान जागृति और कुंडलिनी के भरपूर प्रभाव में आनन्दमग्न रहता था। इससे जाहिर होता है कि इस तरह के मजहबी कट्टरपंथी वास्तविक आध्यात्मिकता के कितने बड़े दुश्मन होते हैं। जरा सोचो कि जब सैंकड़ों हिंदुओं के बीच में अकेला मुसलमान इतना गदर मचा सकता है, तो कश्मीर में बहुसंख्यक होकर उन्होंने अल्पसंख्यक कश्मीरी हिंदुओं पर क्या जुर्म नहीं किए होंगे। यह उसी के आसपास का समय था। यही संस्कारों का फर्क है। शक्ति एक ही है, पर संस्कार अलग-अलग हैं। इसलिए शक्ति के साथ अच्छे संस्कारों का होना भी बहुत जरूरी है। यही 'द कश्मीर फाइल्स फ़िल्म' में दिखाया गया है।

कुंडलिनी शक्ति ही ड्रेगन है

दोस्तों, मैं पिछली पोस्ट में स्नान-योग अर्थात शीतजल स्नान और गंगास्नान से प्राप्त कुंडलिनी लाभ के बारे में बात कर रहा था। शीतजल स्नान अपने आप में एक संपूर्ण योग है। इसमें मूल बंध, जलंधर बंध और उड्डीयान बंध, योग के तीनों मुख्य बंध एकसाथ लगते हैं। हालांकि आजकल गंगा में प्रदूषण भी काफी बढ़ गया है, और लोगों में इतनी योगशक्ति भी नहीं रही कि वे ठंडे पानी को ज्यादा झेल सकें। मेरे एक अधेड़ उम्र के रिश्तेदार थे, जो परिवार के साथ गंगास्नान करने गए, और गंगा में अपने हरेक सगे संबंधी के नाम की एक-एक पवित्र डुबकी लम्बे समय तक लगाते रहे। घर वापिस आने पर उन्हें फेफड़ों का संक्रमण हो गया, जिससे उनकी जान ही चली गई। हो सकता है कि और भी वजहें रही हों। बिना वैज्ञानिक जाँच के तो पुख्ता तौर पर कुछ नहीं कहा जा सकता, पर इतना जरूर है कि जिस पानी में इतने सारे लोग एकसाथ नहा रहे हों, और जिसमें बिना जले या अधजले शव फ़ेंके जाते हों, साथ में मानव बस्तियों व उद्योगों का अपशिष्ट जल डाला जाता हो, उसमें संक्रमण फैलाने वाले कीटाणु मौजूद हो सकते हैं। पहले ऐसा नहीं था या कम होता था, और साथ में योगशक्ति आदि से लोगों की इम्युनिटी मजबूत होती थी।

मैं जागृति की जाँच के संबंध में भी बात कर रहा था। मैं इस पैराग्राफ में कुछ दार्शनिक गहराई में जा रहा हुँ। पाठकों को यह उबाऊ लग सकती है इसलिए वे चाहें तो आगे भी निकल सकते हैं। जागृति की जाँच से यह फायदा होगा कि जागृत व्यक्ति को यथासम्भव भरपूर सुखसुविधाओं का हकदार बनाया जा सकता है। जागृति के बाद भरपूर सुखसुविधाएं भी जब उसे मोहित नहीं कर पाएंगी, तभी तो वह जागृति की असली कीमत पहचानेगा न। दुनिया से संन्यास लेने से उसे जागृति के महत्त्व का कैसे पता चलेगा। उसके लिए तो महत्त्व उन्हीं दुनियावी सुखों का बना रहेगा, जिनका लालसा भरा चिंतन वह मन ही मन करता रहेगा। चीनी का महत्त्व आदमी तभी समझेगा न जब वह चीनी खाने के एकदम बाद मिष्ठान्न खाएगा और उसे उसमें मिठास नहीं लगेगी। अगर वह चीनी खाने के एकदम बाद मिष्ठान्न नहीं खाएगा, तब तो वह मिष्ठान्न का ही गुणगान गाता रहेगा, और चीनी को बेकार समझेगा। इसलिए मेरा मानना है कि जागृति के एकदम बाद आदमी के जीवन में दुनियावी सुखसुविधाओं की बाढ़ आ जानी चाहिए, ताकि वह इनकी निरर्थकता को दिल से महसूस कर सके और फिर प्रवचनादि से अन्य लोगों को भी महसूस करवा सके, केवल सुनीसुनाई बातों के सहारे न बैठा रहे। इसीलिए तो पुराने समय में राजा लोग वन में ज्ञानप्राप्ति के बाद अपने राज्य को लौट आया करते थे, और पूर्ववत सभी सुखसुविधाओं के साथ अपना आगामी जीवन सुखपूर्वक बिताते थे, वन में ही दुबके नहीं रहते थे। सम्भवतः इस सत्य को दिल से महसूस करके ही आदमी आत्मविकास के शिखर तक पहुंचता है, केवल सुनने भर से नहीं। सम्भवतः ओशो महाराज का क्रियादर्शन भी यही था। मैं भी उनकी तरह कई बार बनी-बनाई रूढ़िवादी धारणाओं से बिल्कुल उल्टा चलता हूँ, अब चाहे कोई मुझे क्रन्तिकारी कहे या सत्याग्रही। ज्यादा उपयुक्त शब्द 'स्वतंत्र विचारक' लगता है, क्योंकि स्वतंत्र विचार को किसी पर थोपा नहीं जाता और न ही उसके लिए भीड़ इकट्ठा की जाती है, अच्छा लगने पर लोग खुद उसे चुनते हैं। यह लोकतान्त्रिक और शान्तिपरक होता है, क्रांति के ठीक विपरीत। ओशो महाराज ने यह अंतर बहुत अच्छे से समझाया है, जिस पर उनकी एक पुस्तक भी है। बेशक जिसने पहले कभी मिष्ठान्न खाया हुआ हो, तो वह चीनी खाने के बाद मिष्ठान्न के स्वाद को याद कर के यह अंदाजा लगा सकता है कि चीनी की मिठास मिष्ठान्न से ज्यादा है, पर मिष्ठान्न की नीरसता का पूरा पता तो उसे चीनी खाने के बाद मिष्ठान्न खा कर ही चलेगा। इसी तरह जागृति के बाद आदमी यह अंदाजा लगा सकता है कि जागृति सभी भौतिक सुखों से बढ़कर है, पर भौतिक सुखों की नीरसता का प्रत्यक्ष अनुभव तो उसे जागृति के एकदम बाद सुखसुविधाओं में डूबने से होगा। जैसे अगर दुबारा चीनी का मिलना असम्भव हो, तो आदमी मिष्ठान्न खाकर चीनी की मिठास को पुनः याद कर सकता है, और कोई चारा नहीं, उसी तरह आदमी सुखसुविधाओं को भोगते हुए उनसे अपनी जागृति को पुनः याद करते हुए उससे लाभ उठा सकता है, और कोई चारा नहीं। तो ये आसमान में फूल की तरह संन्यास कहाँ से आ गया। मुझे लगता है कि संन्यास उसके लिए है, जो परवैराग्य में स्थित हो गया है, मतलब जागृति के बाद सारी सुखसुविधाओं को भरपूर भोग लेने के बाद उनकी नीरसता का प्रत्यक्ष अनुभव कर चुका है, और उनसे भी पूरी तरह विमुख हो गया है। उसको जागृति की तमन्ना भी नहीं रही है, क्योंकि सुख़सुविधाओं की तरह जागृति भी दुनियावी ही है, और दोनों एकदूसरे की याद दिलाते रहते हैं। पर यहाँ बहुत सावधानी की आवश्यकता है, क्योंकि जगत के प्रति जरा भी महत्त्वबुद्धि रहने से वह योगभ्रष्ट बन सकता है, मतलब लौकिक और पारलौकिक दोनों लाभों से एकसाथ वँचित रह सकता है। इसलिए सबसे अच्छा व सुरक्षित तरीका गृहस्थ आश्रम का कर्मयोग ही है, जिसमें किसी भी हालत में खतरा नहीं है। जागृति के एकदम बाद के साधारण वैराग्य में संन्यास लेने से वह सुखभोगों की पुरानी यादों से काम चला सकता है, पर यह प्रत्यक्ष सुखभोगों की तरह कारगर नहीं हो पाता, और योगी की सुखभोगों के प्रति महत्त्वबुद्धि बनी रहती है।

सुखसुविधाएं तो दूर, कई लोग तो यहाँ तो कहते हैं कि आदमी को विशेषकर जागृत व्यक्ति को भोजन की जरूरत ही नहीं, उसके लिए तो हवापानी ही काफी है। ऐसा कैसे चलेगा। भौतिक सत्य को समझना पड़ेगा। दरअसल मोटापा अधिक भोजन से नहीं, अपितु असंतुलित भोजन से पनपता है। शरीर के मैटाबोलिज़्म को सुचारु रूप से चलाने के लिए सभी आवश्यक तत्त्व उचित मात्रा में चाहिए होते हैं। किसी की भी कमी से चयापचय गड़बड़ा जाता है, जिससे शरीर में भोजन ढंग से जल नहीं पाता, और इकट्ठा जमा होकर मोटापा पैदा करता है। शरीर ही चूल्हा है। यह जितना तेजी से जलेगा, जीवन उतना ही ज्यादा चमकेगा। बहुत से लोगों के लिए आज हिन्दू धर्म का मतलब कुछ बाहरी दिखावा ही रह गया है। उसे खान-पान के और रहन-सहन के विशेष और लगभग आभासिक जैसे अवैज्ञानिक (क्योंकि उसके पीछे का विज्ञान नहीं समझ रहे) तरीके तक सीमित समझ लिया गया है। कुछ लोगों के लिए मांस-मदिरा का प्रयोग न करने वाले हिन्दू हैं, तो कुछ के लिए संभोग से दूरी बना कर रखने वाले हिन्दू हैं। कुछ लोगों के लिए हिंदु धर्म पालयनवादी है। इसी तरह कई लोगों की यह धारणा है कि जो जितना ज्यादा अहिंसक है, गाय की तरह, वह उतना ही ज्यादा हिंदूवादी है। योग और जागृति गए तेल लेने। यहाँ तक कि अधिकांश लोग कुंडलिनी का अर्थ भी नहीं समझते। वे इसे ज्योतिष वाली कुंडली पत्री समझते हैं। हालांकि यह भी सत्य है कि पलायनवाद और शराफत से ही दुनिया बच सकती है, क्योंकि मानव की अति क्रियाशीलता के कारण यह धरती नष्ट होने की कगार पर है। इस तरह का बाहरी दिखावा हर धर्म में है, पर क्योंकि हिन्दू धर्म में यह जरूरत से ज्यादा उदारता व सहनशीलता से भरा है, इसलिए यह कमजोरी बन जाता है, जिससे दूसरे धर्मों को बेवजह हावी होने का मिलता है। अगर आप अपनी दुकान से गायब रहोगे, तो दूसरे लोग तो आएंगे ही उसमें बैठने। हालांकि यहाँ यह बात गौर करने लायक है कि मशहूर योगी गोपी कृष्ण ने अपनी किताब में लिखा है कि जागृति के बाद उन्हें इतनी ज्यादा ऊर्जा की जरूरत पड़ती थी कि कुछ मांसाहार के बिना उनका गुजारा ही नहीं चलता था। यह भी हो सकता है कि भिन्नभिन्न प्रकार के लोगों की भिन्नभिन्न प्रकार की जरूरतें हों। मैं फेसबुक पर एक मित्र की पोस्ट पढ़ रहा था, जो लिख रहा था कि अपने धर्म को दोष देने की, उसे बदनाम करने की और उसे छोटीछोटी बातों पर आसानी से छोड़ने की या धर्म बदलने की या धर्मनिरपेक्ष बनने की आदत हिन्दुओं की ही है, दूसरे धर्म के लोगों की नहीं। दूसरे धर्म के लोग किसी भी हालत में अपने धर्म को दोष नहीं देते, अपितु उसके प्रति गलत समझ और गलत व्यवस्था को दोष देते हैं। इसीलिए बहुत से लोग तो यहाँ तक कहते हैं कि हिंदु धर्म को दूसरे धर्म के लोगों से ज्यादा अपने धर्म के लोगों से खतरा है। वैसे इस वैबसाईट का लक्ष्य धर्म की विवेचना करना नहीं है, यह तो प्रसंगवश बात चल पड़ी थी। यह तो मानना ही पड़ेगा का हिंदु धर्म की उदारता और सहनशीलता के महान गुण के कारण ही आज सबसे ज्यादा वैज्ञानिक शोध इसी धर्म पर हो रहे हैं। कई बार दिल की बात को बोलना-लिखना मुश्किल हो जाता है, जिससे गलतफहमियां पैदा हो सकती हैं। किसी के गुणों को उस पर स्थायी रूप से चिपकाने से भी गलतफहमी पैदा होती है। होता क्या है कि गुण बदलते रहते हैं। यह हो सकता है कि किसी में कोई विशेष गुण ज्यादा दिखता हो या और गुणों की अपेक्षा ज्यादा बार आता-जाता हो। ऐसा ही मैंने हिंदु धर्म के कुछ उपरोक्त गुणों के बारे में कहा है कि वे ज्यादा नजर आते हैँ कई बार, हमेशा नहीं। काल गणना भी जरूरी है, वस्तुस्थिति को स्पष्ट करने के लिए। ऐसा भी हो सकता है कि विशेष गुणों को धर्म के कुछ लोग ही अपनाएं, अन्य नहीं। इसलिए धर्म के साथ उसके घटक दलों पर नजर रखना भी जरूरी है। इसी तरह क्षेत्र विशेष पर भी निर्भर करता है। कहीं पर किसी धर्म के साथ कोई एक विशेष गुण ज्यादा प्रभावी हो सकता है, तो किसी अन्य जगह पर पर कोई अन्य विशेष गुण। सभी धर्मों में सभी गुण मौजूद हैं, कभी कोई ज्यादा दिखता है, तो कभी कोई दूसरा। पर जो गुण औसत से ज्यादा नजर दिखता है, वह उस धर्म के साथ स्थायी तौर पर चिपका दिया जाता है, और उस गुण के साथ उस धर्म की पहचान जोड़ दी जाती है, जिससे धार्मिक वैमनस्य पैदा होता है। इसीलिए कहते हैं कि बुराई से लड़ो, धर्म से नहीं; बुराई से लड़ो, बुरे से नहीं। कंडीशन्स लागू हो सकती हैं। अगर कोई मुझे मेरे अपने जायज हक के लिए तनिक गुस्से में देख ले, और मेरे प्रति स्थायी धारणा फैला दे कि मैं गुस्सैल किस्म का आदमी हूँ, तो मुझे तो बुरा लगेगा ही। आजकल के दौर में मुझे सभी धर्म असंतुलित नजर आते हैं, मतलब औसत रूप में। किसी धर्म में जरूरत से ज्यादा सतोगुण, तो किसी में रजोगुण, और किसी में तमोगुण है। कोई वामपंथियों की तरह उत्तर की तरफ जा रहा है, तो कोई दक्षिणपांथियों की तरह दक्षिण की तरफ, बीच में कोई नहीं। यह मैं औसत नजरिये को बता रहा हूँ, या जैसे विभिन्न धर्मगुरु दुनिया के सामने अपने धर्म को अभिव्यक्त करते हैं, असल में तो सभी धर्मों के अंदर बढ़चढ़ कर महान लोग हैं। अगर सभी धर्म मित्रतापूर्वक मिलजुल कर रहने लगें, तो यह औसत असंतुलन भी खत्म हो जाएगा, और पूरी दुनिया में पूर्ण संतुलन क़ायम हो जाएगा। संतुलन ही योग है।

उदाहरण के लिए चायना के ड्रेगन को ही लें। कहते हैँ कि ड्रेगन को मानने वाला चीनी होता है। पर हम सभी ड्रेगन को मानते हैं। यह किसी विशेष देश विशेष से नहीं जुड़ा है। ठंडे जल से स्नान के समय जब सिर को चढ़ी हुई कुंडलिनी आगे से नीचे उतारी जाती है, तो तेजी से गर्म साँसें चलती है, विशेष रूप से झटके के साथ बाहर की तरफ, जैसे कि ड्रेगन

आग उगल रही हो। प्रेम प्रसंगों में भी 'गर्म सांसें' शब्द काफी मशहूर हैं।ड्रेगन या शेर की तरह मुंह चौड़ा खुल जाता है, सारे दाँत बाहर को दिखाई देते हैं, नाक व कपोल ऊपर की तरह खिंचता है, जिससे आँखें थोड़ा भिंच सी जाती हैं, शरीर का आकार भी ड्रेगन की तरह हो जाता है, पेट अंदर को भिंचा हुआ, और सांसों से फैलती और सिकुड़ती छाती। शरीर का हिलना डुलना भी ड्रेगन की तरह लगता है। ड्रैगन को उड़ने वाला इसलिए दिखाया जाता है क्योंकि क्योंकि कुंडलिनी भी पलभर में ही ब्रह्माण्ड के किसी भी कोने में पहुंच जाती है। शरीर ब्रह्माण्ड तो ही है, मिनी ब्रह्माण्ड। ड्रेगन के द्वारा आदमी को मारने का मतलब है कुंडलिनी शक्ति द्वारा आदमी के अहंकार को नष्ट कर के उसे अपने नियंत्रण में लेना है। फिल्मों में, विशेषकर एनीमेशन फिल्मों में जो दिखाया जाता है कि आदमी ने कैसे ड्रेगन को जीतकर और उसको वश में करके उससे बहुत से काम लिए, उस पर बैठकर हवाई यात्राएं कीं, और अपने दुश्मनों से बदला लिया आदि, यह कुंडलिनी को वश में करने और उससे विभिन्न लौकिक सिद्धियों को हासिल करने को ही दर्शाता है। कहीं खूंखार जानवरों की शक्ति के पीछे कुंडलिनी शक्ति ही तो नहीं, यह मनोवैज्ञानिक शोध का विषय है। सम्भवतः गुस्से के समय जो चेहरा विकृत और डरावना हो जाता है, उसके पीछे भी यही वजह हो। दरअसल मांसपेशियों के संकुचन से उत्पन्न गर्मी ही गर्म सांसों के रूप में बाहर निकलती है। अब आप कहोगे कि मस्तिष्क से कुंडलिनी को नीचे कैसे उतारना है। इसमें कोई रॉकेट साईंस नहीं है। मस्तिष्क को बच्चे या गूंगे बहरे की तरह ढीला छोड़ दें, बस कुंडलिनी एक झटके वाली गहरी बाहर की ओर सांस और पेट की अंदर की ओर सिकुड़न के साथ नीचे आ जाएगी। हालांकि जल्दी ऊपर चढ़ जाती है फिर से। कुंडलिनी को लगातार नीचे रखने के लिए अभ्यास करना पड़ता है।

आदमी के चेहरे के आकलन से उसके व्यक्तित्व का आकलन हो जाता है

आदमी के चेहरे के आकलन से उसके व्यक्तित्व का आकलन हो जाता है। सीधी सी कॉमन सेंस की बात है। किसी का शारीरिक मुकाबला करने के लिए बाजुओं और टांगों को शक्ति की जरूरत होती है। शरीर की कुल शक्ति सीमित और निर्धारित है। उसे एकदम से नहीं बढ़ाया जा सकता। इसलिए यही तरीका बचता है कि शरीर के दूसरे भाग की शक्ति इन्हें दी जाए। आप किसी भी अंग की क्रियाशीलता को ज्यादा कम नहीं कर सकते, क्योंकि सभी अंग एकदूसरे से जुड़े हैं। शक्ति की नोटिसेबल या निर्णायक कमी आप मस्तिष्क में ही कर सकते हैं, क्योंकि इसमें फालतू विचारों और भावनाओं के रूप बहुत सी अतिरिक्त शक्ति जमा हुई रहती है। इसीलिए गुस्से और लड़ाई के समय चेहरे विकृत हो जाते हैं, क्योंकि उससे ऊर्जा नीचे उतर रही होती है। लड़ाई शुरु करने से पहले भी आदमी इसीलिए गालीगलौज या फालतू बहस करते हैं, ताकि उससे विचार और भावनाएं और दिमाग़ की सोचने की शक्ति बाधित हो जाए और चेहरा विकृत होने से वह शक्ति नीचे आकर बाजुओं आदि यौद्धा अंगों को मिले। तभी तो देखा जाता है कि हल्की सी मुस्कान भी गंभीर झगड़ों से चमत्कारिक रूप में बचा लेती है। मुस्कुराहट से शक्ति पुनः मस्तिष्क की तरफ लौटने लगती है, जिससे सोचने-विचारने की शक्ति बढ़ने से और यौद्धा अंगों को शक्ति की कमी होने से लड़ाई टल जाती है। इसीलिए मुस्कुराती और शांत शख्ससियत से हर कोई मित्रता करना चाहता है, चाहे कोई झूठमूठ में ही मुस्कुराता रहे, और जलेभुने व टेंस आदमी से हरकोई दूर भागता है।

कुंडलिनी तंत्र धर्म-जनित मानसिक बीमारी को नियंत्रित कर सकता है

दोस्तों, मैं पिछली पोस्ट में बता रहा था कि कैसे कुंडलिनी योग मेरी मानसिक स्थिति को स्थिर व तंदुरुस्त बना के रखता था। एक मित्र बोल रहे थे कि अपंग दिमाग प्रेम आदि से स्वस्थ नहीं हो सकता। इस हिसाब से तो प्रेम से कुंडलिनी जागरण भी नहीं हो सकता। पर वह होता है। दिमागी विकृति के विभिन्न स्तर होते हैं। हम यह नहीं कहते कि सभी स्वस्थ हो जाएंगे, पर कुछ न कुछ सुधार तो सबमें होगा। यहां तक कि सभी शारीरिक रोगी खासकर जन्मजात या आनुवंशिक रोगी भी दवा से कहां ठीक होते हैं। मेरे कहने का मतलब था कि जब कुंडलिनी योग एक मानसिक बिमारी जैसा लगता है, तब मानसिक बिमारी भी तो कुंडलिनी योग जैसी बनाई जा सकती है। शायद इसीलिए अधिकांश धर्मों में मानसिक रोग को दैवीय दृष्टि से देखा जाता है। एक बात और है। **जब ध्यान को बोला जाए, पर उसके लिए जरूरी ऊर्जा का प्रबंध न किया जाए, तो मानसिक रोग तो फैलेंगे ही। मैं किसी खास धर्म को पिनपोइंट नही करूंगा। पर यह सबको पता है कि ज्यादातर धर्म और अध्यात्म को अंधे जैसे होकर मानने वाले कट्टर किस्म के लोग ही इस समय मानसिक रोगी या मानसिक** रोगी जैसे दिखाई देते हैं। **पाकिस्तान** इसका एक जीता जागता उदाहरण है, जहां एक रिपोर्ट के मुताबिक लगभग पाँच करोड़ से ज्यादा मानसिक रोगी हैं। *ऐसा लगता है कि अगर किसी धर्म में पर्याप्त अतिरिक्त ऊर्जा है, तो सही तरीके से ध्यान नहीं है, या फिर ध्यान है ही नहीं। केवल कुंडलिनी तंत्र ही मुझे इसमें अपवाद लगता है, क्योंकि यह ध्यान के लिए भी बोलता है, और उसके लिए जरूरी अतिरिक्त ऊर्जा का प्रबंध भी क*रता है। सही तरीके से ध्यान और ऊर्जा की कमी से धर्म या अध्यात्म कुछ से कुछ बन जाता है, बिल्कुल उल्टा हो जाता है, अपने असली मूलरूप में रहता ही नहीं है। **एकहोर्ट टाले** को अवसाद के शिखर पर ही जागरण की अनुभूति मिली। मतलब वे मानसिक रोगी नहीं थे बल्कि कुदरती कुंडलिनी साधना के दौर से गुजर रहे थे, जिसे उन्होंने और दुनिया के लोगों ने गलती से अवसाद समझा हुआ था, इसीलिए वे उसे ढंग से नहीं संभाल पा रहे थे। ऐसे बहुत से उदाहरण हैं। एक दिमागी अपंग आदमी हमारे कार्यालय में अपने पैर के जूतों को अपने सिर पर रखकर दौड़ता हुआ अक्सर आता था। उसके साथ प्रसन्नता और हंसीमजाक के साथ हाथ मिलाना पड़ता था, या फिर उसे एक रुपया देना पड़ता था। न मिले तो साबुन का छोटा सा टुकड़ा उठाकर वैसे ही भाग जाता था। एकबार हमारे सामने उसने एक अजनबी को जोर का तमाचा जड़ा था, जिससे वह पूरा हिल गया था। मुझे लगा कि वह मुझसे नाराज़ था पर मेरी तांत्रिक शक्ति से डरकर उसने मेरा गुस्सा उसपर उतार दिया। आजतक मैं उसके चेहरे पर उस घटना का पछतावा देखता हूं। यह प्यार ही है जो उसे लाइन पर रख रहा था। इसी तरह एक हल्के स्तर का अविवाहित व दिव्यांग व्यक्ति मेरी कुंडलिनी योगशक्ति से प्रभावित होकर मेरे लिए बहुत से काम लगभग बिना मेहनताने के करता था, पर मैं उसके परिवार वालों को उसके नाम पर पैसे दे देता था। ऐसा क्यों न समझा जाए कि **अल्जाइमर** जैसे मानसिक रोगों में मस्तिष्क के मुख्य पुर्जों के खराब होने से जो अतिरिक्त नाड़ी रसायन अर्थात **न्यूरोकैमिकल्स** जमा हो जाते हैं, वे **हैलुसिनेशन** के रूप में असली लगने वाला काल्पनिक चित्र बनाते हैं। इसी तरह योग द्वारा मन पर लगाम लगने से भी ऐसा ही होता होगा, तभी तो स्थायी समाधि चित्र बनता है। पर पहली स्थिति में यह समाधि जैसा मानसिक चित्र अस्वस्थ, अनियंत्रित और जागरण के उद्देष्य से रहित है, पर दूसरी स्थिति में यह नियंत्रित व स्वस्थ ध्यानसमाधि चित्र है, जो जागृति को दिलाता है। क्या **साम्यवादियों** ने इसी भ्रम के कारण "**धर्म की अफीम का नशा**" वाक्य ईजाद किया है? शेष, इस विषय को हम **मनोवैज्ञानिकों** और मनोचिकित्सकों के लिए छोड़ते हैं, क्योंकि हम अपने मूल विषय से भटकना नहीं चाहते।

कुंडलिनी तंत्र पर्यावरण अनुकूल जीवनशैली में ज्यादा अच्छा फलता फूलता है

दोस्तों, पिछली पोस्ट में हम देख रहे थे कि कैसे आजकल आदमी जितनी भौतिक तरक्की कर रहा है, उसके आधिभौतिक, आध्यात्मिक और आधिदैविक दुख भी बढ़ते जा रहे हैं। मन के सभी दोष चरम के करीब हैं, और राक्षस बनकर आदमी को निगलने को तैयार हैं। यह भी कि कुंडलिनी शक्ति से ही उस राक्षस को मारा जा सकता है। मतलब साफ़ है कि मानव सभ्यता आज उस मोड़ पर खड़ी है, जहां उसे केवल कुंडलिनी योग ही बचा सकता है। मैं हाल ही में पहाड़ों के भ्रमण पर गया था। जहां मैदानों में ऐसी और कूलर चले हुए था, वहां पहाड़ों में लोग रजाई कंबल ओढ़ कर सो रहे थे, और आग जला कर सेंक रहे थे। एक दिन के भीतर ही सालभर के सारे मौसम देखने को मिल जाते हैं। अद्भुत नजारा देखा। वहां एक स्थानीय परिचित भी मिले। उनके पास नदी की गहराई से लेकर पहाड़ के शिखर तक के रास्ते पर हरेक प्राइम लोकेशन पर जमीन है। वे उस रास्ते को टूरिस्ट ट्रेकिंग रूट की तरह इस्तेमाल करने की और बीच के प्राइम पॉइंट्स पर झोंपड़ीनुमा टूरिस्ट कमरों व फुलवारियों की कल्पना को साकार करना चाह रहे थे। हालंकि उसके लिए प्रारंभिक निवेश व मैनपावर की जरूरत होती है, पर वे सस्ते में व प्राकृतिक तरीके से ऐसा करना चाहते थे, ताकि कम से कम कृत्रिम संसाधन लगे, और बिजनेस में जोखिम को दूर किया जा सके, क्योंकि वे आर्थिक रूप से मुझे ज्यादा समृद्ध नहीं लगे। अक्सर ऐसा ही होता है। करने वाले के पास पैसा नहीं होता और पैसे वाले कर नहीं पाते। वे होम्योपैथी व नेचरोपेथी की प्रेक्टिस भी करते हैं। उनका कहना था कि उनके पास प्रतिदिन ऐसे मरीज व अन्य लोग आते हैं, जो 2 किलो वजन कम करने के लिए गोवा जैसी दूरपार की व महंगी जगह जाकर चार लाख तक खर्च करते हैं। तो वे कहते हैं कि वे उनके नजदीक में ही और उससे बहुत कम समय व पैसे में चार किलो वजन कम कर सकते हैं। पर वही बात है न कि लोगों को शतप्रतिशत कुदरती भी पसंद नहीं आता, आकर्षण पैदा करने के लिए कुछ न कुछ कृत्रिम निर्माण तो करना ही पड़ता है। आजकल लोगों में प्रकृति के बीच रहने की जबरदस्त भूख है, क्योंकि हर जगह कृत्रिमता की अंधाधुंध भरमार है। बस उस भूख को शान्त करने के लिए ढंग से परोसने वालों की कमी है। फिर भी मन के घोड़ों को तो उड़ा ही सकते हैं। सबसे बड़ी समस्या है, दिन पर दिन पर्यटकों में शिष्टाचार व अनुशासन का घटता ग्राफ, असामाजिक तत्त्वों का डर अलग से लगा रहता है। वैसे तो उन्हें सही ढंग से गाइड व सर्व करने वाले पर्यटन संबंधी निपुण कर्मचारियों की भी कमी है। पहाड़ों के कुदरती जंगलों की जगह कंक्रीट के जंगल लेते जा रहे हैं। बढ़ती आबादी पर कम व अपर्याप्त नियंत्रण लगता दिख रहा है। मुझे तो कंक्रीट की विशाल, भव्य खूबसूरत हवेली छोड़कर एक छोटे से, शान्त क्षेत्र में बने, पुराने और जीर्णशीर्ण से, कुदरती हवापानी और धूप को अंदर प्रविष्ट कराने वाले और प्यारे हानिरहित सूक्ष्म जंतुओं जैसे चींटी, छिपकली, कोकरोच, लकड़ी और मिट्टी खाने वाले कीड़ों आदि का सामना करवाने वाले मकान में ही अपनी तांत्रिक योगसाधना सफल होते हुए दिखी। ध्यानस्थ शिव के चारों ओर भी तो सांप बिच्छू रहते हैं। हालांकि यह हम इंसानों के मामले में घातक चरम स्थिति है। बेशक मेरे पुराने घर में भी दो या तीन बार चमगादड़ और चूहे घुसे। चमगादड़ को बड़ी मुश्किल से खिड़की से भगाया क्योंकि उन्हें दिखता नहीं। फिर दीवारों के छेदों, दरारों आदि को लिफाफों आदि की पैकिंग से बंद किया, क्योंकि वे छोटी सी खाली जगह से भी घुस जाते हैं। इसी तरह चूहों को भी सांप के डर से मार भगाना पड़ा। उसकी छत आरसीसी की नहीं थी, बल्कि आरसीसी की पतली कड़ियां अंतरालों पर बिछी हुई थी। अंतरालों के बीच की खाली जगह पर टाइलें लगी थीं, जो दोनों साइड की कड़ियों पर टिकी हुई थीं। टाइलों के उपर चिकनी जैसी मिट्टी की खूब मोटी परत थी। मिट्टी के ऊपर फिर टाइलें आपस में जोड़ के लगी थीं, ताकि बारिश का पानी अंदर न घुसे। थोड़े बहुत रिसाव को तो मिट्टी शोषित कर के बाहर उड़ा देती होगी। इससे छत धूप से ज्यादा तपता भी नहीं था, और ठंड में ज्यादा ठंडा भी नहीं होता था। देखो, बातें आगे से आगे खुलती हैं। अंधेरे जैसी परिस्थितियां मूलाधार की प्रतीक हैं। ऐसे माहौल के प्रभाव से शक्ति आसानी से सहस्रार को चढ़ती है, बशर्ते अगर समुचित साधना की जाए। इसीलिए शिव श्मशान में रहते हैं। शायद यह उसी भव्यता के सूक्ष्म व अप्रत्यक्ष बल से ही बाद में हुआ, क्योंकि रात के बाद ही दिन अच्छा लगता है। वैसे भी भवन, गाड़ी आदि पर सामर्थ्य से ज्यादा खर्च करने पर या उन्हें बेवजह विस्तार देने से आदमी उनकी चिंता में, रखरखाव में उलझा रहता है, जिससे योगसाधना को पर्याप्त समय व प्राणशक्ति नहीं दे पाता। सोचो, एक औसत भव्य मकान कम से कम पचास लाख रुपए में बनता है। इतने पैसे पेंशन स्कीम में डालकर पचास हजार की पेंशन हर महीने बनती है, पूरी उम्र के लिए, और मूलधन पचास लाख वैसा ही सुरक्षित खड़ा रहता है। सारी उम्र कमाई की चिन्ता करने की जरूरत नहीं। आराम से झोंपड़ीनुमा पर्यावरणमित्र व स्वास्थ्यमित्र मकान में रहते हुए आनंदमय जीवन के साथ योगसाधना करते रहो और गिटार बजाते रहो। गिटार बजाना भी एक उच्चकोटि की साधना है, साक्षीभाव साधना है। कई लोग बैंक से लोन लेते हैं, तो किश्तें चुकाते चुकाते वह मकान दुगुनी मतलब एक करोड़ के लगभग की कीमत में पड़ जाता है। कई चतुर लोग ब्याज से बचने के लिए रिश्तेदारों या मित्रों से पैसा उधार ले लेते हैं। भोलेभाले लोग उनको उधार दे भी देते हैं, पर उनसे ब्याज तो छोड़ो, मूलधन की उगाही भी नहीं कर पाते। उससे फिर रिश्ते और दोस्ती में दरार

पड़ जाती है। कई लोग तो अपने बच्चों को भी उधार की चक्की में पिसवा देते हैं। बेफजूल के मकान का शौक बहुत महंगा पड़ता है। भव्यता से अहंकार भी बढ़ता है, और उसके नष्ट होने से वह भी नष्ट हो जाता है। वैसे भी पुराना और कच्चा कंक्रीट फिर भी जीवित और कुछ सांस लेता लगता है, पक्के और नए कंक्रीट में तो दम सा घुटता लगता है। असली जान तो मिट्टी वाले घर में होती है, इसीलिए आजकल मडहाउस की तरफ़ लोगों का क्रेज बढ़ रहा है। यह भूकंपरोधी भी होता है। आजकल कई लोग पिलरस और लेंटर को आरसीसी का भूकंपरोधी जाल की तरह बना कर दीवारें कूटी हुई मिट्टी की और खूब चौड़ी रख रहे हैं, और लेंटर या लोहे की चद्दर की छत के नीचे लकड़ी के फट्टों की सीलिंग लगा रहे हैं। इससे मजबूती और कुदरतीपने का दोहरा फायदा मिल रहा है। अंदर फर्श पर और दो या तीन फुट की धरातल की दीवार पर कुदरती लगने वाली, चौड़ी और सांस लेने वाली टाइलें भी लगाई जा सकती हैं। कमरों के बीच पार्टिशन ईंट की बजाय मिट्टी की पतली या मोटी दीवार जगह के अनुसार या लकड़ी की भी दी जा सकती है। रसोई और वाशरूम कम टॉयलेट भी इसी तरह मिट्टी के प्राकृतिक रखे जा सकते हैं, बशर्ते फर्श पर और कुछ हाईट तक वर्किंग दीवार और शेल्फ पर टाइलें फिक्स की जाएं। मैं इस तरह की अंग्रजों के समय की बनी आलीशान व पूरी तरह से कुदरती, मिट्टी पत्थर से बनी, सीलिंग तक लगभग बीस फीट ऊंचाई वाली पर्यावरण मित्र कोठी मतलब बंगले में कई सालों तक सुकून से रहा हूं, देखने में लगभग ऐसी ही जैसी इस पोस्ट की हेडर इमेज में दिखाई गई है। बेशक उसमें टाइलें वगैरह बाद में जोड़ी गई हों। उसकी लकड़ी के फट्टों के ऊपर लोहे की चद्दर की छत थी। बोलते हैं कि वह भी उसी पुराने जमाने की है, नई नहीं डाली है। मिट्टी की दीवारों पर बिजली की फिटिंग भी नायाब थी। ऐसा लगता था कि वे नीचे गिर सकती है, पर हमने उसपे झूलना थोड़े ही है। जिस घर की दीवारें भी सांस लेती हों, उसमें प्राणायाम योग आदि करने का मन तो खुद ही करेगा। मिट्टी भी लचीली होती है, और योग में भी लचीलापन होता है। मिट्टी में धरती की आधारशक्ति होती है। यह मूलाधार चक्र का काम करते हुए आदमी को संतुलित व नियंत्रित व व्यवहारिक बनाए रखती है। भूकंप का खतरा तो हर पल बना ही रहता है। आज फिर से भूकंप के हल्के झटके महसूस हुए। लम्बे अरसे से ये झटके लगातार आ रहे हैं, जो किसी अनहोनी की ओर इशारा भी हो सकते हैं। परमात्मा से करबद्ध प्रार्थना है कि ऐसा न हो, अगर वे चाहें तो बेशक धरती की अतिरिक्त व विनाशकारी ऊर्जा छोटेछोटे झटकों से ही खत्म हो जाए। यह पता नहीं लोग भूकंप को बहुत ज्यादा नजरंदाज क्यों करते हैं। वे ऐसा क्यों मान लेते हैं कि उनके होते हुए भूकंप आ ही नहीं सकता। वे गृहनिर्माण के समय हर चीज का ध्यान रखते हैं पर भूकंप का नहीं। शायद भूकंप की बात करने वाले को सभी मूर्ख और डरपोक समझते हैं। शायद यह ऐसे ही है, जैसे मृत्यु सत्य है, पर उसके बारे में कोई बात नहीं करना चाहता। इसकी एक वजह मुझे यह भी लगती है कि आजकल लोग पहले से ही दुनिया में बहुत दुखी और परेशान जैसे हैं, शायद वे भूकंप को अवचेतन मन में मतलब अनजाने में ही सभी समस्याओं का हल समझ लेते हों, पर व्यवहार में उसे नजरंदाज करने का रूप दे देते हों। घर के गुणों का प्रभाव उसमें रहने वाले आदमी पर जरूर पड़ता है। मुझे जितना पक्का और मजबूत मकान दिखता है, उसमें रहने वाले लोगों का अहंकार भी मुझे उतना ही पक्का और मजबूत दिखता है। मिट्टी लचीली और जमीन से जुड़ी होती है, इसीलिए उसमें रहने वाले लोगों का अहंकार कच्चा और लचीला होता है, और वे जमीन से जुड़े हुए, मनमौजी और साधारण सभ्य इंसान प्रतीत होते हैं मुझे। इसका मतलब है कि आजकल के आदमी के पतन में आधुनिक मकानों का भी बहुत बड़ा योगदान है। ये वातावरण को बहुत ज्यादा प्रदूषित करते हैं। माना जा रहा है कि ग्रीनहाउस गैसों के उत्सर्जन में सीमेंट मुख्य भूमिका निभाता है। वास्तव में सीमेंट बहुत कच्चा होता है। इसे सरिए आदि के मिश्रण से ही ताकत मिलती है। बड़ी इमारतों व शहरों के लिए या बड़े पुलों, फ्लाईओवरों, पुलों, बांधों और अन्य जल भंडारण संरचनाओं के लिए माना कि सिमेंटिड स्ट्रक्चर जरूरी भी है, पर गांव देहात या विरली अबादी वाले स्थानों के आम घरों के लिए इसकी क्या जरूरत है, क्योंकि वहां ज्यादा मजबूती की जरूरत नहीं। वहां ये भेड़चाल या फैशन सिंबल की तरह अपनाया जा रहा है। इसमें बिजली पानी की भी ज्यादा खपत होती है। स्विट्जरलैंड में जब पहली बार इसका प्रयोग बहुत बड़े डैम बनाने में हुआ, तो इसे राष्ट्रीय गर्व मान लिया गया, और इसे अजर अमर समझ लिया गया। पर बाद मैं पता चला कि कंक्रीट की अधिकतम उम्र सिर्फ सौ साल है। जहां पर जमीन की उपलब्धता में कोई बाधा नहीं है, वहां एकमंजिला मकान काफी होता है। वह सुंदर भी लगता है, और जमीन से भी जुड़ा होता है। मुझे लगता है कि पहाड़ों में एक से ज्यादा मंजिल उंचाई का भवन बनाने से देवता का अपमान होता है, क्योंकि ऊंचे पहाड़ देवता का रूप होते हैं। वैसे भी वहां पर पेड़ पौधे और अन्य प्राकृतिक नजारे ऊंचे अर्थात मुख्यरूप से दिखने चाहिए, भवन आदि मानवनिर्मित कृत्रिम संरचनाएं नहीं। वास्तुशास्त्र का एक सिद्धांत भी खुद ही मेरे अनुभव में आया है, मैंने कहीं पढ़ा नहीं है। खुले व हवादार जैसे स्थान में ऐसा चौराहा जहां आमने सामने के रास्ते लगभग बराबर जैसी रचनाओं को धारण करते हैं, वहां कुंडलिनी क्रियाशील होने लगती है। दरअसल ऐसा चौराहा स्वस्तिक जैसा चिह्न बनाता है।

कुंडलिनी जागरण का कोर्स भौतिक दुनियादारी की डिग्री के साथ संलग्न प्रतीत होता है

शायद कुंडलिनी जागरण जैसी वैज्ञानिक और रोमांचकारी घटना को अजीब, सबसे हटकर, अलौकिक, धर्म या संप्रदाय से जुड़ा या आत्मा से ही जुड़ा हुआ दिखाया गया। पता नहीं क्यों आत्मा को लोग पड़ोसी के खेत में उगी मूली समझ लेते हैं। आत्मा तो अपना आप है, सेल्फ है। अंग्रेजी का सेल्फ फिर भी ज्यादा सटीक लगता है। संस्कृत का आत्मन शब्द भी ठीक है, क्योंकि यह अपने आप या सेल्फ के लिए प्रयुक्त शब्द ही है। अन्य भाषाओं में लोग बात का बतंगड़ बना सकते हैं। कुंडलिनी जागरण भौतिक सुखानुभूति का चरम की तरह ही तो है। भौतिक उपलब्धियों के शीर्ष की तरह ही तो है। जब आदमी इसे भौतिक दुनिया से अलग समझता है, तब वह दुनिया से अलगथलग सा रहने लगता है, किसी अलग ही अलौकिक आंनद या जागरण की खोज में, पर दरअसल उसे मिलता कुछ भी नहीं है। किसी जागृत व्यक्ति के बारे में लोग बड़ीबड़ी, हैरानी व पराएपन या अजनबीपन से भरी आंखें करके बोलते हैं कि वह तो भाई दुनियादारी से हटकर बाबाओं वाली विशेष दुनिया का शख्स है। शायद उससे डरते जैसे भी हैं जैसे कोई एलियन से डरता है। वैसे ऐसा है भी और नहीं भी है। यह समाज और संस्कृति पर निर्भर करता है। वैदिक समाज और संस्कृति वालों को वह अपना नायक या प्रेमास्पद लग सकता है, तो अवैदिक तत्त्वों को इसके विपरीत। इसका कारण यह है कि वैदिक संस्कृति जागृति के सबसे करीब और पक्षधर है। अवैदिक लोग तो यह समझते ही नहीं कि जिस भौतिक मौजमस्ती की वे बूंद बूंद की तरफ़ भागे फिरते हैं, मानो उसी भौतिक मस्ती का उसने पूरा घड़ा जैसा ही इकट्ठा पी लिया है। शायद कोई पारलौकिक वगैरह कुछ नहीं। यह इसलिए क्योंकि उन्होंने सुना ही ऐसा है, उन्हें जन्म से लेकर सिखाया ही ऐसा गया है। अगर दुनिया से दूर रहकर जागृति मिलती तब तो सभी बाबाओं को मिलती, पर मुझे तो एक बाबा भी नहीं दिखा आजतक। मैंने बहुत से बाबाओं के बारे में पढ़ा सुना, पर कहीं उन्हें जागृति का अनुभव होते नहीं जान पाया। बहुत से बाबाओं से बात भी की, वे तो जागृति की परिभाषा भी नहीं दे पाए। कल्पना करो कई पर्वतारोही दोस्त एवरेस्ट चढ़ रहे हों। अचानक उनमें से एक बोले कि उसने तो इससे भी बड़ी उंचाई मैदान में रहकर ही छू ली है जागृति के रूप में, पर कोई विश्वास नहीं करेगा। सब बोलेंगे जागृति एक अलग विषय है, और भौतिक उपलब्धि अलग। इससे क्या होता है कि जब आदमी बड़ी भौतिक उपलब्धि भी हासिल कर लेता है, तब भी वह जागृति को प्राप्त करने के लिए प्रेरित नहीं होता, क्योंकि उसने माना ही नहीं कि उसके सारे भौतिक प्रयास एक प्रकार के जागृति को प्राप्त करने के प्रयास ही हैं। वह भौतिक विकास के शिखर पर पहुंचकर भी जागृति से सिर्फ एक कदम दूर होता है अपनी इसी मूर्ख मानयता की वजह से। वह समुद्र में मछली की तरह प्यासा होता है। जो सही मान्यता में स्थित रहता है, उसे भौतिकता के चरम के निकट ही जागृति का अहसास होने लगता है, और तंत्र, योग आदि की सहायता से एक कदम की अंतिम छलांग लगा के उसे पा भी लेता है। जो भेदभाव की गलत मान्यता में रहता है, वह भौतिक दुनियादारी की मौजमस्ती या विकास के चरम के पास पहुंचकर अपनी यात्रा का अंत मान लेता है, और निश्चय करता है कि अब भौतिकता का विषय खतम और अब अध्यात्म का विषय शुरु से प्रारंभ करेगा। मतलब वह पांच में से चार साल की अधूरी डिग्री को संदूक में रखकर पांचवे व अंतिम वर्ष के जागृति के विषय को देखकर बोलता है कि यह तो अध्यात्म का विषय है, इससे उसे क्या मतलब। थोड़े टाइम बाद वह चार साल की डिग्री भी भूल जाता है, और टाइम गैप के कारण उसे पांचवे वर्ष में दाखिला भी नहीं मिल पाता। मजबूरन वह अध्यात्म का विषय नर्सरी केजी से पढ़ना शुरु करता है। सोचो उसे फिर कितना समय लगेगा। संलग्न या अटैचड जागृति के एक साल के आसान कोर्स को छोड़कर वह सत्रह साल की जागृति की डिग्री को चुनता है। जब तक वह मिलती है, तब तक आदमी बूढ़ा हो जाता है। फिर पता नहीं किस जन्म में मिलेगी। जागृति जवान शरीर रहते मिल जाए तो अच्छा है, उसके बाद तो भाई राम भरोसे। ऐसी संकुचित सोच एकदम से नहीं आई है, पुराने पंथों के अंधानुकरण से धीरेधीरे समाज में फैली है। इसलिए पुरानी अच्छी बातों को तो मानना ही चाहिए, पर आदमी को स्वतंत्र सोच का भी होना चहिए। मैं सीमित कट्टरता का विरोधी नहीं हूं। जहां भी मैंने कट्टरता के विरोध की बात की है, उसे अतिकट्टरता का विरोध समझना चाहिए। अब हर जगह अतिअति तो नहीं लगा सकते। ये सब शब्दों के खेल हैं, जो आराम से बात का बतंगड़ बना सकते हैं। कुछ कट्टरता तो धर्म के लिए जरुरी भी होती है। अतिकट्टरता खराब होती है। सारे अमानवीय काम अतिकट्टरता से होते हैं, सीमित या साधारण कट्टरता से नहीं। कट्टरता से आदमी अपने मानवीय नियमधर्म पर दृढ़ता से टिका रहता है। धर्म क्या दुनिया के हर काम के लिए कुछ कट्टरता जरूरी होती है। अगर हिंदुओं में कट्टरता न होती, तो उनके बहुमूल्य वेदपुराण आज तक संरक्षित न रहते, खासकर जैसे हमले उनपर होते आए हैं। किसी देश की संस्कृति, तकनीक व बोलचाल आदि अनगिनत सामाजिक उपलब्धियां कट्टरता से ही संरक्षित रहती हैं, और पीढ़ी दर पीढ़ी आगे से आगे सौंपी जाती रहती हैं। आजकल हाल यह है कि बेचारे हिंदुओं के द्वारा अपनी और अपनी संस्कृति की रक्षा के लिए अपनाई जा रही मामूली सी कट्टरता पर भी प्रश्नचिह्न लगाया जा रहा है, और अन्य अनेक वर्गों की अतिकट्टरता को भी नजरंदाज किया जा रहा है। इस चाल को समझने की जरूरत है। आत्मरक्षा के लिए कुछ तथाकथित कट्टर हिंदु देश में समान

नागरिक संहिता की वकालत कर रहे हैं, वहीं हिंदुओं का बड़ा वर्ग अन्य वर्गों की चाल में आकर और कुछ निजी स्वार्थों के लालच में आकर अपने को पूरी तरह कट्टरताहीन साबित करने के लिए उनका विरोध कर रहा है। यही वजह है कि बड़े भारी अंतर से बहुसंख्यक होकर भी हिंदु बंटे हुए हैं, और अपनी सनातन संस्कृति की रक्षा तक नहीं कर पा रहे हैं, उसका विकास तो दूर की बात है। अशुभ कट्टरता ने शुभ कट्टरता को परेशान किया हुआ है। कहते हैं कि बारह वर्ष की साधना के बाद कुंडलिनी जागरण मिलता है। इसका यह मतलब नहीं कि बारह साल तक नाक पकड़कर बैठे रहने से जागृति मिलती है। इसका मतलब यह है कि अगर उपरोक्त सही मान्यता के साथ बारह वर्ष तक युक्तियुक्त ढंग से भौतिक दुनियादारी में रहा जाए, तो तेरहवें वर्ष की साधना से कुंडलिनी जागरण मिल सकता है। यह ऐसे ही होता है, जैसे अगर बीटेक की डिग्री के अंत में छात्रों को बोला जाए कि इसके साथ एमटेक की एक साल की डिग्री भी जोड़ी जा रही है, तो आधे से ज्यादा बच्चे छोड़ के चले जाएंगे, क्योंकि वे उसके लिए मानसिक रूप से तैयार नहीं थे। परंतु अगर शुरु से ही चार साल की बीटेकएमटेक इंटीग्रेटिड डिग्री करवाई जाए, तो सभी बच्चे आसानी से कर लेते हैं, क्योंकि वे उसके लिए प्रारंभ से लेकर ही हमेशा मानसिक रूप से तैयार रहे हैं। विश्वास और लगन का महत्त्व जीवन के हरेक क्षेत्र में है। मैंने बचपन में सब तीर्थ किए, जिन्हें चार धाम यात्रा कहते हैं। उस पर भी समय मिलने पर पोस्ट बनाऊंगा। संभवतः इसीलिए जागृति हुई। कई लोग चार दिन योग करके दावा करने लग जाते हैं कि जागृति मिल गई। वो नाड़ियों की हलचल को जागृति मान लेते हैं। माना कि योग करने से जागृति मिलती है, पर सही योगाभ्यास तक पहुंचने के लिए आध्यात्मिक अभ्यास करते हुऐ बहुत लंबा समय लग सकता है। इसीलिए सनातन वैदिक धर्म में विस्तृत आध्यात्मिक प्रक्रियाएं हैं। यह ऐसे ही है जैसे धरती के सबसे बाहरी ऑर्बिट से बाहर अंतरिक्ष में छलांग लगाना बहुत आसान है पर वहां तक पहुंचने के लिए बहुत मेहनत करनी पड़ती है। यह अलग बात है कि कोई तेज दिमाग आदमी किसी अनुभवी आदमी से एकदम सीख जाए, पर ऐसे लोग बहुत बिरले होते हैं। शास्त्रों में इन तीर्थों के प्रति विश्वास बनवाया गया है। पूरे भारत में लगभग सभी स्थानों को अध्यात्म कथाओं के साथ जोड़ा गया है। इससे उन स्थानों को दिव्यता मिलती है। विश्वास या मान्यता में बहुत बल है। उल्टी मान्यता से ही अनंत आत्मा सीमित जगत बन जाता है। जब मान्यता को सीधा किया जाता है, तो सीमित जगत दुबारा अपने असली अनंत आत्मरूप में आ जाता है। क्वांटम विज्ञान भी यही सिद्ध करता है कि अगर पदार्थ को खंडखंड या कणरूप मानोगे तो वह वैसा ही दिखेगा, और अगर अखंड या तरंगरूप मानोगे तो वैसा ही दिखेगा, बेशक असली, सुखरूप और मोक्षरूप दूसरे वाला रूप अर्थात अखंड या अद्वैत रूप ही है। मुझे तो लगता है कि जो सनातन धर्म के कर्मकांड हैं, वे दरअसल शरीर में हो रहीं यौगिक चीजें और क्रियाएं हैं, जिन्हें स्थूल रूप देकर स्थूल जगत में स्थूल वस्तुओं और क्रियाओं के रूप में दिखाया जाता है। इसके दो लाभ होते हैं। एक तो दुनियादारी की सभी चीजों व क्रियाओं में दिव्यता आ जाती है, जिससे सबकुछ पूजा ही बन जाता है। मानो तो पत्थर में भी भगवान है, न मानो तो कहीं भी नहीं है। दूसरा, लोगों के अवचेतन मन पर उनका सूक्ष्म प्रभाव लगातार पड़ता रहता है, जिससे लोग अनायास ही योग की तरफ मुड़ते चले जाते हैं। पुराने जमाने में लोगों के पास बहुत सा अतिरिक्त या खाली समय होता था, खासकर भारत में क्योंकि अनाज आदि प्राकृतिक संसाधनो की उपज अच्छी थी और तकनीकी कलिष्टता या उससे उपजा तनाव भी नहीं था। मानसूनी मौसम है भारत का। यहां मानसून में खूब फसल उगा कर लोग भंडारित कर देते होंगे और पूरे साल आराम से बैठकर उसका उपभोग करते होंगे, क्योंकि यहां मानसून के मौसम में ही वर्षा होती है, बाकि पूरे साल खुशनुमा धूप खिली रहती है। इसलिए बहुत सोच समझ कर वेदपुराण लिखे गए होंगे ताकि समाज में स्वीकार हो सकें। उनके ऊपर वादविवाद हुए होंगे, फिर उनके संशोधन भी हुए होंगे। आज तो हर कोई पुस्तक लिख दे रहा है, जिसपे न चर्चा होती है और न वादविवाद। इसलिए इनकी प्रामाणिकता पर वेदपुराणों से ज्यादा संदेह है। सभी मिथक कथाओं का रहस्योद्घाटन आम बुद्धि से नहीं हो सकता। इसका मतलब यह नहीं है कि वे बिल्कुल कपोलकल्पित या बिना किसी मनोवैज्ञानिक सिद्धांत के है। पर जिन बहुत सी मिथक कथाओं का रहस्योद्घाटन इस वैबसाईट पर है, इससे यही सबसे बड़ा संदेश जाता है कि वेदपुराणों की सभी मिथक कथाएं शास्त्रीय, सैद्धांतिक और अध्यात्मवैज्ञानिक हैं। इसलिए विश्वास करने में ही भलाई है क्योंकि विश्वास में बहुत शक्ति है। अन्य धर्मों या संप्रदायों की तरह सनातन हिंदु धर्म किसी एक व्यक्ति ने नहीं बनाया है बल्कि इसे अनगिनत ब्राह्मणों, ऋषियों, योगियों और दार्शनिकों ने अनंत कालखंड की धारा से सींचा है। इसीलिए यह सर्वाधिक लोकतंत्रात्मक धर्म प्रतीत होता है।

कुंडलिनी तंत्र पारलौकिक विद्याओं का मूल आधार है

कामयाब शिक्षा नीति यही है कि उसमें छात्र अपनी मनपसंद के कोई भी विषय चुन सके। विज्ञान का छात्र अध्यात्म, संगीत , योग आदि विषय रख सके और अध्यात्म आदि का छात्र विज्ञान का। इससे आदमी का संपूर्ण विकास होता है, और उसकी हॉबी भी पूरी होती है। हॉबी पूरी होने से वह मुख्य विषय भी अच्छे से पढ़ता है। आजकल ऐसी ही शिक्षा नीति का प्रचलन बढ़ रहा है। मेरा व्यवसाय विज्ञान से संबंधित है पर अध्यात्म का शौक लेखन से पूरा करता हूं।

किसी ने क्वोरा पर प्रश्न पूछा कि क्या आत्मा बिना शरीर के भी सोच सकती है और विकसित हो सकती है। मैंने कहा कि बिल्कुल ऐसा हो सकता है। जब मुझे अपने दिवंगत संबंधी की जीवात्मा का साक्षात्कार हुआ था, तो उसने कहा था कि उसे लग ही नहीं रहा था कि वह मर गया था। मुझे भी बिल्कुल नहीं लग रहा था कि वे व्यक्ति कुछ दिनों पहले मर गए थे, बल्कि ऐसा लग रहा था कि मेरे सामने पहले की तरह स्पष्ट जिंदा थे। यह अलग बात है कि जब मुझे किन्हीं पुरानी स्मृतियों से उनके मरने का अहसास हुआ तो वे उसी पल ओझल भी हो गए। साथ में उसने यह पूछा था कि क्या उसकी वही अवस्था ही मुक्ति की परमावस्था थी। पहली बात, अगर शरीररहित आत्मा में सोचने समझने की शक्ति न होती तो वह ऐसी बातें न करती और ऐसा न पूछती। साथ में संभावित संतुष्टिजनक उत्तर पाकर एकदम से गायब भी नहीं हुई होती। इसका मतलब है कि शरीररहित आत्मा में शारीरिक मन और इंद्रियों के सभी गुण होते हैं, और वे वैसे ही काम करते हैं, जैसे शरीर में। पर शरीर की तरह नहीं। मतलब अदृष्य आत्मा द्वारा ही इंद्रियों द्वारा किए जाने वाले सारे काम किए जाते हैं। आत्मा द्वारा आत्मा की ही मदद से सुना जाता है, देखा जाता है, सोचा जाता है आदि आदि। शायद आत्मा द्वारा दूसरी आत्मा से जुड़कर ही उसके अनुभव सीधे महसूस किए जाते हैं। वह आत्मा मेरी आत्मा से जुड़कर कुछ पूछ रही थी, पर शब्द बोलने वाला कोई नहीं दिख रहा था, न ही शब्द कहीं बाहर से आ रहे थे। शब्द महसूस हो रहे थे पर आत्मा की तरह गहरे और अदृष्य। उनकी अदृष्य आत्मा उनके अदृष्य शब्दों के साथ मुझे अपनी आत्मा से महसूस हो रही थी और मैं भी किन्हीं बाहरी स्थूल शब्दों से जवाब नहीं दे रहा था बल्कि मेरी आत्मा ही शब्द बनकर उनकी आत्मा को बता रही थी। इसका विस्तृत वर्णन मैंने एक पुरानी पोस्ट में किया है। मैं उस आत्मा से जुड़ाव महसूस कर रहा था, इसीसे वह मेरे द्वारा सोची हुई बात को महसूस कर रही थी। सोचना भी साधारण नहीं था बल्कि दिल-आत्मा की गहराई वाली सोच थी। शरीर तो आत्मा को इसलिए मिलता है ताकि वह भौतिक संसार को शरीर के माध्यम से सीधे ही महसूस कर सके, किसी अन्य आत्मा से जुड़ाव की अपेक्षा न रहे। हो सकता है कि आत्मा सीधे भी भौतिक पदार्थों से जुड़कर उन्हें महसूस करती हो, जैसे कि भूतिया महल आदि की घटनाओं से देखने को मिलता है। हालांकि यह जुड़ाव भौतिक शरीर के जुड़ाव से अलग और कमतर होता होगा, क्योंकि अगर एकजैसा जुड़ाव होता तो आत्मा कष्टों और बिमारियों से भरा शरीर धारण ही क्यों करती। जो आत्मा ने कहा कि वह तो मरी ही नहीं, यह सही है क्योंकि मरता कुछ भी नहीं है। अगर कोई कहे कि केवल शरीर मरता है, आत्मा नहीं, वह भी गलत है, क्योंकि शरीर भी नहीं मरता। दरअसल भौतिक शरीर का अस्तित्व भी मन में ही होता है, कहीं बाहर नहीं। शरीर के रूप आकार का जो चित्र मन में बसा होता है, वह कैसे नष्ट हो सकता है। हां, यह चित्र कभी स्थूल तो कभी सूक्ष्म बन सकता है, पर रहता हमेशा है। जैसे कमरे का बल्ब बुझने से थोड़ी देर के लिए गहरा अंधेरा महसूस होता, पर फिर कमरे में थोड़ा दिखने लगता है, ऐसा ही मरने के बाद होता है। पिछले अनगिनत जन्मों के हमारे जितने भी शरीर हुए हैं, उन सभी के चित्र हमारे अवचेतन मन में दर्ज हैं, मतलब अब तक हमारा कोई भी शरीर नहीं मरा है। इसीलिए मुझे उन परिचित व्यक्ति की आत्मा में उनका पिछला सारा बायोडाटा महसूस हुआ, मतलब उसका औसत रूप। उनका उस जन्म का शरीर तो उस सूक्ष्म डेटाबेस का एक छोटा सा अंश था। इसीलिए मैं उन्हें पूरा पहचान पा रहा था क्योंकि उस डेटाबेस की छाप वर्तमान के शरीर पर भी होती है। उनका वह आत्मरूप उनके उस जन्म के शरीर जैसा भी था और उससे भी कहीं ज्यादा। मतलब कि शरीर नष्ट होने से कोई मरता नहीं है पर अपने मूल सूक्ष्म रूप में आ जाता है जिसे अन्य स्थूल शरीर पकड़ नहीं सकते। सूक्ष्म शरीर अपने आप में पूर्ण शरीर है। स्थूल शरीर तो उसे स्थूलता प्रदान करने को मिलता है। जो स्थूल शरीर कर सकता है, वह सब सूक्ष्म शरीर भी कर सकता है। आकार व रफ्तार में अंतर हो सकता है। फिर बोलते हैं कि मनुष्य के मरने पर उसे किसी भी जीव के शरीर के रूप में जन्म मिल सकता है। यह भी सही नहीं लगता। जब कोई मरा ही नहीं है तो जन्म कैसे होगा। शरीर भी दरअसल मन में ही बसा होता है। साथ में, आदमी के इलावा अन्य जानवर अपने शरीर या चेहरे आदि को दर्पण में नहीं देखते रहते। मतलब उनको तो अपनी शक्ल सूरत का भान ही नहीं होता। वे अपने जैसे औरों को देखकर केवल अंदाजा ही लगा सकते हैं अपने बारे में, पर इतना उनमें दिमाग ही नहीं होता। उसके अंदर मन उसी आदमी का होता है जिसका उसके रूप में पुनर्जन्म हुआ। जब मन ही नहीं बदला तो कैसा पुनर्जन्म।

उन दिवंगत आत्मा ने मेरे साथ कई बार संपर्क बनाने की कोशिश की। कई बार उस दौरान मेरे पेट से पानी जैसा गले को आता था और दम घुटता सा लगता था। शायद ऐसा नाड़ी में कुंडलिनी शक्ति के ऊपर चढ़ने से होता था। फिर मैं उन्हें प्रेम और आदरपूर्वक बातें समझाता और दुबारा न आने को कहता। ऐसा लगता कि वह जीवात्मा सब सुनती और बात मानती। दरअसल अन्य आत्मा से जुड़ने के लिए सर्वोत्तम स्वास्थ्य और गहरा योगाभ्यास जरूरी है, जैसा आम जीवन में हमेशा करना संभव नहीं है। प्रारंभ में मैं तांत्रिक कुंडलिनी योगाभ्यास करता था, जिससे ही शायद वह शक्ति प्राप्त हुई थी। गृहस्थ जीवन में तांत्रिक योगाभ्यास भी हमेशा नहीं किया जा सकता। हो सकता है कि हमारे शरीर से बहुत सी आत्माएं जुड़ी रहती हों और दुनिया की जानकारियां लेती रहती हों, पर हमें पता ही नहीं चलता। मुझे तो यह भी लगता है कि वे आत्मा मुझे जगाने के लिए आती थी ताकि मेरे महत्त्वपूर्ण अंगों में ऑक्सीजन का स्तर खतरनाक स्तर तक न गिर जाए। मुझे स्पॉन्डिलाइटिस इनफ्लेमेशन की वजह से कई बार गेस्ट्रिक रिफलक्स बढ़ जाता था। वे आत्मा परोपकारी थीं और मेरे प्रति तो बहुत हितैषी थीं, जीवन काल से लेकर ही।

शास्त्रों में भी सूक्ष्म शरीर का अस्तित्व माना गया है। इसमें मन, बुद्धि, सभी प्राण और सभी इंद्रियां होती हैं। मतलब यह स्थूल शरीर की तरह सभी काम कर सकता है और सभी फल भोग सकता है, पर सूक्ष्म रूप में। इसका मतलब है कि स्थूल संसार से भी कहीं ज्यादा विस्तृत एक सूक्ष्म संसार है, जिसमें सभी कुछ स्थूल संसार की तरह घटित होता रहता है, पर सूक्ष्म रूप में। महान तंत्र योगियों को ही उसका आभास होता है।

कुंडलिनी योग में रागों का महत्त्व

दोस्तों, शास्त्रीय संगीत आधारित राग प्राचीन भारतीय परंपरा का एक उत्कृष्ट उदाहरण है। राग और कुंडलिनी योग में बहुत सी समानताएं हैं। दोनों ही शरीर और मन को तनाव रहित बना देते हैं। रक्तचाप को नियंत्रित करते हैं। ध्यान लगाने में मदद करते हैं। दरअसल रागों का आधार कुंडलिनी योग ही होता है। जैसे "जागो, जागो मोहन प्यारे, भोर भई, तेरे दर्शन को आए जोगी जंगम, जटी, निरंजन" आदि। यहां भोर का मतलब कुंडलिनी योगी के अंदर प्रचुर सतोगुण की वृद्धि है। मोहन यहां कुंडलिनी ध्यान चित्र है। मोहन का जागना यहां कुंडलिनी जागरण है। राग योग के दौरान सांस को ज्यादा देर तक रोक रखने में मदद करते हैं क्योंकि राग में भी ज्यादा देर तक सांस को रोक कर एक ही धुन को लंबा खींचा जाता है। आम गानों में बोल और धुन जल्दी-जल्दी बदलते रहते हैं जिससे ध्यान भी जल्दी जल्दी बदल कर एकाग्र नहीं हो पाता। लोग बोलते हैं कि राग से नींद आती है। दरअसल राग मन को शांत करते हैं। मन की थकान वह बेचैनी के समय राग सुनने से सांसें गहरी और धीमी हो जाती हैं जिससे मन एकदम स्वस्थ महसूस होता है। जब योग के अभ्यास से राग गाने में मदद मिलती है, तो राग श्रवण व गायन से योग में क्यों मदद नहीं मिल सकती, क्योंकि दोनों में सांसों के अभ्यास मतलब प्राणायाम का योगदान है। दिन के समय के अनुसार राग सुनने से मूड फ्रेश हो जाता है। ऐसी ही एक राग्या ऐप है जिसे मैं पसंद करता हूं। मैं कोई प्रमोशन नहीं कर रहा। इसमें लगातार दिन के समय के अनुसार राग चलते रहते हैं और बदल बदल के अनगिनत राग आते हैं। इससे पहले मैंने सारेगामा ऐप को प्रयोग किया पर उसमें किसी बग वगैरह से उसने मेरा 3 महीने का सब्सक्रिप्शन ही भुला दिया, जिसे कस्टमर केयर से भी वापस नहीं पाया जा सका। योग के समय राग सुनने से मन में दबे विचार प्रस्फुटित नहीं होते क्योंकि मस्तिष्क की शक्ति राग सुनने में लगी रहती है। शायद वह दबे विचार नष्ट तो होते रहते हैं, पर बाहर प्रस्फुटित हुए बिना ही, मतलब चुपचाप से। शायद जिस विचार अभिव्यक्ति को हम विचारों के नष्ट होने की प्रक्रिया समझते हो, वह विचारों को जीवित रखने का तरीका हो। किसी आदत को बारंबार दोहराने से वह भला नष्ट कैसे होगी। आदत तभी नष्ट होगी, जब उसे दोहराएंगे नहीं। इसी तरह से उक्त विचार को बारंबार प्रकट करने से वह नष्ट कैसे होगा। नष्ट वह तभी होगा जब उस विचार की शक्ति को किसी दूसरे अच्छे विचार या भाव में लगाएंगे। शायद रागों से यही होता है। योग से उत्पन्न शक्ति सुप्त विचारों को ना लगकर राग संगीत को लगती रहती है जिससे आध्यात्मिक संस्कारों वाले विचार व भाव मजबूत होते रहते हैं, और पिछले जीवन के फालतू व दबे हुए विचार नष्ट होते रहते हैं। यह सुप्त विचारों को हल्के रूप में प्रकट करना और उसकी शक्ति नए कुंडलिनी विचार को देने का मध्य मार्ग ही है, ताकि उन विचारों की शक्ति का आहरण भी हो सके और वे प्रचंडता से अभिव्यक्त होकर भौतिक या भौतिक जैसे भी न बन सकें। अगर सुप्त विचार बिल्कुल भी मानस पटल पर न उभरे तो उनकी शक्ति का आहरण हो ही नहीं पाएगा। इसी तरह यदि वे बहुत ज्यादा उभर जाएं तो भी उनसे आहरण करने के लिए शक्ति बचेगी ही नहीं। रागों की मूल थीम आध्यात्मिक या योगमय ही होती है। साथ में राग सुरताल वह लय में होते हैं। इसलिए मन के लिए अच्छे होते हैं। इनमें सुंदर आवाज वाले ढोल, ढोलकी, सितार, बांसुरी आदि प्राकृतिक वाद्य बहुत कर्ण प्रिय लगते हैं। जो तथाकथित आधुनिक कनफोड़ू संगीत यंत्रों से बेहतर ही होते हैं, खासकर योगी व आनंदमयी जीवन शैली के लिए। मुझे राग तांत्रिक लगते हैं। जैसे कुंडलिनी तंत्र से तथाकथित तुच्छ दुनियादारी उत्तम आध्यात्मिक साधना में रूपांतरित हो जाती है, उसी तरह राग से भी। प्रेमी प्रेमिका के बीच का प्रेमसंबंध आमतौर पर भौतिक लगता है, पर राग में बंध जाने पर वह परिष्कृत सा होकर आध्यात्मिक बन जाता है। इसी तरह दुनियादारी का कोई भी विषय ले लो, राग उसे पवित्र कर देता है। इसलिए अगर राग को म्यूजिकल लॉन्ड्रिंग कहो, तो अतिशयोक्ति नहीं होगी। अगर इसके आधारभूत सिद्धांत का गहराई से अवलोकन करें, तो कुंडलिनी ही दिखाई देती है। रागों से सांसों में और शरीर की क्रियाशीलता में सुधार होता है, क्योंकि दोनों आपस में जुड़े हैं। इससे कुंडलिनी शक्ति क्रियाशील हो जाती है, जिससे मन में कुंडलिनी चित्र का निरंतर वास होने लगता है। इससे सभी विचारों, भावों और कर्मों के साथ कुंडलिनी चित्र जुड़ा रहता है। इससे द्वैत से भरी दुनिया में डूबे रहने पर भी मन में उत्तम अद्वैत भाव बना रहता है। यही अद्वैत भाव सबको पवित्र करता है। रागों की एक खास बात यह भी है कि अगर इनके शब्द या बोल समझ भी न आए, ये तब भी अपने बोलने के और संगीत तरीके से योगलाभ प्रदान करते हैं। वैसे भी उनमें बोल ज्यादा नहीं होते। एक ही वाक्य या शब्द पर भी पूरा एक घंटे का राग बन जाता है। उदाहरण के लिए "सांवरे से मन लागा, मोरी माए", इस जैसे दो चार बोलों पर पैंतालीस मिनट का खयाल आधारित सुमधुर राग है। ऐसा लगता है कि राग शब्दप्रधान न होकर भावप्रधान होते हैं।

कुंडलिनी तंत्र ही अहंकार से बचा कर रखता है

दोस्तों, जागृति के बाद आदमी की बुद्धि का नाश सा हो जाता है। इसे द्वैतपूर्ण भौतिक बुद्धि का नाश कहो तो ज्यादा अच्छा होगा। आध्यात्मिक प्रगति तो वह करता ही रहता है। ऐसा इसलिए क्योंकि भौतिक बुद्धि अहंकार से पैदा होती है। पर जागृति के तुरंत बाद अहंकार खत्म सा हो जाता है। आदमी में हर समय एक समान प्रकाश सा छाया रहता है। नींद की बात नहीं कर रहा। नींद में तो सब को अंधेरा ही महसूस होता है, पर फिर भी जागते हुए एक जैसा प्रकाश रहने के कारण नींद का अंधेरा भी नहीं अखरता। वह भी आनंददायक सा हो जाता है। अहंकार अंधेरे का ही तो नाम है। यह अज्ञान का ही अंधेरा होता है। कई भाग्यशाली लोगों को इस अहंकारविहीन स्थिति में लंबे समय रहने का मौका मिलता है। पर कईयों को दुनिया से परेशानी या अभाव महसूस होने के कारण वे जल्दी ही अहंकार को धारण करने लगते हैं। कई लोग, जो शरीर से पूरी तरह से स्वस्थ होते हैं, वे उन्नत तांत्रिक कुंडलिनी योग के अभ्यास से उस दुनियावी परेशानी के बीच में भी अहंकार से बचे रहते हैं। वे कामचलाऊ बुद्धि को भी धारण करके रखते हैं, और अहंकार को भी अपने पैर नहीं जमाने देते। पर जब शारीरिक दुर्बलता या रोग से सही से तांत्रिक कुंडलिनी योग नहीं कर पाते तो वे भी अहंकार के चंगुल में फंसने लगते हैं। अहंकार की गिरफ्त में आते ही उनकी बुद्धि बुलेट ट्रेन की तरह भागने लगती है। यह भी करना, वह भी करना। यह जिम्मेदारी, वह परेशानी। इस तरह से बुद्धि सैकड़ों कल्पित बहाने बनाते हुए अपने को पूरी तरह से स्थापित कर लेती है। जब अंदर ही अंधेरा बस जाए तो बाहर भी हर जगह अंधेरा ही दिखता रहेगा और आदमी उससे बचने के लिए छटपटाता ही रहेगा। अगर अंदर का अंधेरा मिटा दिया जाए तो बाहर खुद ही मिट जाएगा और आदमी शांति से बैठ पाएगा। काला चश्मा लगाकर बाहर सबकुछ काला ही दिखता है। चश्मा हटा दो तो सबकुछ साफ दिखने लगता है। फिर बुद्धि के भागते ही मन भी कहां पीछे रहने वाला। जब बुद्धि ने अच्छी सी आमदनी पैदा कर दी, तब मन उसे भोगने के लिए ललचाएगा ही। कभी सिनेमा जाने का ख्वाब देखेगा तो कभी पिकनिक का। कभी पहाड़ पर भ्रमण को तो कभी खाने पीने का। कभी यह करने का तो कभी वह करने का। इन ख्वाबों के साथ अन्य और भी अनगिनत विचार उमड़ने लगते हैं। इस तरह मन में पूरा संसार तैयार हो जाता है।

जब आदमी मन के सोचे हुए पर चलने लगता है तो सांसें तो तेज चलेंगी ही। परिश्रम जो लगता है। मतलब आदमी प्राण के स्तर पर पहुंच जाता है। उन सांसो से इंद्रियों में भोगों को भोगने की और उनसे काम करने की शक्ति आ जाती है। पहले पहले उसे भोगों का आनंद इंद्रियों में महसूस होता है, बाहर नहीं। बाद में जब वह भोगी जाने वाली वस्तु पर ज्यादा ध्यान देने लगता है, तब उसे महसूस होता है कि उनसे कुछ सूक्ष्म चीजें निकल कर उसकी इंद्रियों के संपर्क में आती हैं, जिन्हें वे महसूस करती हैं। वे तन्मात्रा ही हैं। फिर भोगी जाने वाली वस्तुओं के ज्यादा ही कसीदे पढ़ने से उसे महसूस होने लगता है कि यह आनंद का अनुभव भोग पदार्थों में ही है। इससे उसका उन पदार्थों से लगाव बढ़ता है, जिससे वह उन पदार्थों का गहराई से अध्ययन करने लगता है। मतलब पंचमहाभूतों की उत्पत्ति हो जाती है।

हम यहां यह स्पष्ट कर देना चाहते हैं कि हम इस वेबसाइट पर कहीं भी ऐसा नहीं कह रहे हैं कि ऐसा करना चाहिए या ऐसा नहीं करना चाहिए। सबकी अपनी अपनी व्यक्तिगत समस्या और जरूरत होती है, जिसके अनुसार सबको चलना ही पड़ता है। अगर आदमी समझबूझ से खुद कोई फैंसला ले तो ज्यादा अच्छा रहता है बजाय इसके कि उस पर जबरदस्ती थोपा जाए। हमारी संस्कृति में शायद ऐसा होने लग गया था, इसीलिए सैद्धांतिक और वैज्ञानिक ज्ञानविज्ञान का ह्रास हुआ। हम तो केवल सिद्धांत पक्ष को प्रस्तुत करते हैं। सच्चाई का तो पता होना ही चाहिए, उस पर चलना या न चलना व्यक्ति के अपने चुनाव पर निर्भर है। महात्मा बुद्ध कहते हैं कि जिंदगी में उठना गिरना चलता रहता है। पर बुराई इस चीज में है जब आदमी गिरा हुआ हो और यह न समझे कि वह गिरा हुआ है। जिसको अपने गिरे होने का अहसास है वह मौका मिलने पर उठने का प्रयास जरूर करेगा। पर जिसको अपने गिरे होने का अंदाजा ही नहीं है, वह अपनी अवस्था को सामान्य अवस्था या उठी हुई अवस्था मानने के भ्रम में जीता रहेगा और मौका मिलने पर भी उठने का प्रयास नहीं कर पाएगा।

शास्त्रों में ऐसा सब कुछ विशद वर्णन है, पर आजकल उनके बारे में लोगों की समझ विकृत सी हो गई है। एक बार कहीं लिखा हुआ पढ़ा था कि आदरणीय महेश योगी जी भी लगभग ऐसा ही कहते थे। विदेशों में उनकी अच्छी पैठ है। वैसे तो उनके विरोधियों की तरफ से उन पर कुछ आरोप भी लगते रहे हैं। उस लेख के अनुसार भारत में प्राचीन हिंदु संस्कृत विकृत सी हो गई है। मतलब लगता है कि इन वैज्ञानिक तथ्यों को अवैज्ञानिकता, लाचारी, गुलामी, दरिद्रता, रूढ़िवादिता, मूर्खता और कट्टरता जैसे दोषों ने ढक लिया है। वैसे यह अहसास किसी चीज को देखने के नजरिए, आध्यात्मिक और भौतिक विकास के स्तर, सांस्कृतिक परिवेश, देश और काल आदि विभिन्न कारकों पर निर्भर करता है। एक आदमी को एक चीज बुरी लग सकती है, तो दूसरे आदमी को वही चीज अच्छी भी लग सकती है। जिस अहसास की तरफ ज्यादा लोगों का या ज्यादा सत्ता का रुझान होता है, वही समाज या दुनिया में मान्य समझा जाता

है। फिर भी इन तथ्यों को इन दोषों से बाहर निकालने की जरूरत है। समय के साथ हर एक संस्कृति के ऊपर दोषारोपण होने लगते हैं। विश्व की अनेकों संस्कृतियां इस वजह से इतिहास बन गई हैं, पर हिंदू संस्कृति पुरानतम संस्कृतियों में होने के बावजूद भी आज तक इसीलिए बच पाई है, क्योंकि समय-समय पर विभिन्न दार्शनिक और समाज सुधारक इस पर लगे दोषारोपण को बाहर निकालने का प्रयास करते आए हैं। आज तो यह दोषारोपण चरम पर लगता है। इसलिए इसको बाहर निकालने के लिए भी वैज्ञानिक दृष्टिकोण रखने वाले व सकारात्मक बुद्धिजीवियों को आगे आना होगा। वैसे हम यह बता देना चाहते हैं कि हम किसी धर्म वगैरह के साथ नहीं बल्कि सच्चाई के साथ हैं।

कुछ लेखक अनुमोदित साहित्यिक पुस्तकें-

1) कुण्डलिनी विज्ञान- एक आध्यात्मिक मनोविज्ञान (पुस्तक 1,2,3 और 4)

2) स्वयंप्रकाशन व वैबसाईट निर्माण की कला

3) कुण्डलिनी रहस्योद्घाटित- प्रेमयोगी वज्र क्या कहता है

4) बहुतकनीकी जैविक खेती एवं वर्षाजल संग्रहण के मूलभूत आधारस्तम्भ- एक खुशहाल एवं विकासशील गाँव की कहानी, एक पर्यावरणप्रेमी योगी की जुबानी

5) ई-रीडर पर मेरी कुण्डलिनी वैबसाईट

6) शरीरविज्ञान दर्शन- एक आधुनिक कुण्डलिनी तंत्र (एक योगी की प्रेमकथा)

7) श्रीकृष्णाज्ञाभिनन्दनम

8) सोलन की सर्वहित साधना

9) योगोपनिषदों में राजयोग

10) क्षेत्रपति बीजेश्वर महादेव

11) देवभूमि सोलन

12) मौलिक व्यक्तित्व के प्रेरक सूत्र

13) बघाटेश्वरी माँ शूलिनी

14) म्हारा बघाट

15) भाव सुमनः एक आधुनिक काव्यसुधा सरस

16) अकेले का नाच

17) संभोग से कुंडलिनी जागरण तक

18) विपासना और कुंडलिनी- इक दूजे के लिए

19) ब्लैकहॉल की योगसाधना

20) क्वान्टम विज्ञान व अन्तरिक्ष विज्ञान में योग

21) पुराण पहेली

22) दिव्य मूंछ पुराण स्तोत्र

23) सांख्य, योग एवं वेदान्त का रोमांचक सम्मिलन

इन उपरोक्त पुस्तकों का वर्णन एमाजोन, ऑथर सेन्ट्रल, ऑथर पेज, प्रेमयोगी वज्र पर उपलब्ध है। इन पुस्तकों का वर्णन उनकी निजी वैबसाईट https://demystifyingkundalini.com/shop/ के वैबपेज "शॉप (लाईब्रेरी)" पर भी उपलब्ध है। साप्ताहिक रूप से नई पोस्ट (विशेषतः कुण्डलिनी से सम्बंधित) प्राप्त करने और नियमित संपर्क में बने रहने के लिए कृपया इस वैबसाईट,"https://demystifyingkundalini.com/" को निःशुल्क रूप में फोलो करें/इसकी सदस्यता लें।

सर्वत्रं शुभमस्तु